डा० एस० एन० अग्रवाल ने, निदेशक, जनांकिकीय प्रशिक्षण तथा शोध केन्द्र, बम्बई, इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्नातक होने के बाद संयुक्त राज्य अमरीका के प्रिंस्टन विश्वविद्यालय से १९५७ में जनांकिकीय के विषय में शोध एम० डी० प्राप्त किया। वह १९५५-५७ में जनसंख्या दफ्तर के फेलो भी रह चुके हैं और उन्होंने प्रोफेसर ए० जे० कोल और फ्रैंक डब्ल्यू० नोटेस्टिन के साथ कार्य किया।

उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में (१९४७-५७) अर्थशास्त्र में सहायक अध्यापक के रूप में काम शुरू किया। इसके बाद वह एशिया और सुदूरपूर्व के लिए संयुक्त राष्ट्र-अर्थशास्त्र आयोग के सामाजिक मामलों के विभाग में अधिकारी रहे। वह दिल्ली के आर्थिक विकास संस्था के जनांकिकीय शोध केन्द्र के भार प्राप्त संचालक (१९५७-६७) रहे।

डा० अग्रवाल की दिलचस्पी का विशेष क्षेत्र था, उर्वरता और परिवार-नियोजन और उन्होंने इस विषय में कई शोध-पत्र तैयार किए हैं। उन्होंने कुछ पुस्तकें भी लिखी हैं, जिनमें यह प्रमुख हैं—'एज ऐट मैरेज इन इंडिया,' 'एटीट्यूड टुवर्ड्स फ़ैमिली प्लानिंग इन इंडिया,' 'फ़र्टिलिटि कन्ट्रोल थ्रू कॉन्ट्रासेप्शन,' 'ए स्टडी ऑफ़ दिल्ली फ़ैमिली प्लानिंग क्लिनिक्स,' 'फ़ैमिली प्लानिंग इन सिक्स विलेजेस : अवेरनेस, नॉलेज, बिलीफ़ एण्ड प्रैक्टिस।' उन्होंने १९६० में परिवार-नियोजन क्षेत्र में किए हुए विशिष्ट शोधों के कारण वाट्टुमल स्मारक पुरस्कार प्राप्त किया।

इस पुस्तक में डा० अग्रवाल ने भारत में जनसंख्या की समस्याओं पर गैर तकनीकी भाषा में आलोचना की है।

अवैतनिक सम्पादक मण्डल

भारत—देश और लोग

जनसंख्या

लेखक

डा० एस० एन० अग्रवाल

अनुवादक

धीरेन्द्र वर्मा

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

नई दिल्ली

प्रस्तावना

संसार के देशों में भारत का स्थान जनसंख्या की दृष्टि से दूसरा तथा भूमि के क्षेत्रफल की दृष्टि से सातवां है। भारत में विश्व जनसंख्या का पन्द्रह प्रतिशत तथा विश्व के क्षेत्रफल का २.२ प्रतिशत भाग है। भारत की जनसंख्या, जो सन् १९५१ में ३५.७ करोड़ थी, आज ५० करोड़ है। इसके १९७६ में ६४ करोड़ तथा १९८१ में ७२ करोड़ तक बढ़ जाने की संभावना है। इसलिए यदि जन्म के दर में कमी नहीं हो पाती है, तो हमारी आर्थिक प्रगति की समस्या और भी निराशाजनक हो जाएगी।

भारत सरकार ने जनसंख्या की वृद्धि को स्थिर करने की नीति उचित ही अपनाई है। इस समय प्रमुख उद्देश्य जन्म दर को १९७६ तक वर्तमान ४० से घटाकर २५ तक लाना है। नगरों तथा ग्रामों में, जनसंख्या को डाक्टरी सेवाएं उपलब्ध करा सकनेवाले प्रशासनिक संगठन की स्थापना की जा चुकी है।

परिवार नियोजन अपनाने में जनता के दृष्टिकोणों तथा मूल्यों में परिवर्तन की आवश्यकता है। यही कारण है कि परिवार नियोजन से सम्बद्ध समस्याएं असाधारण रूप से जटिल हैं। यह समस्या एक नहीं है, बल्कि अनेक समस्याओं का सामूहिक रूप है। छोटे पारिवारिक ढांचे का सम्बन्ध आर्थिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों से है। साथ ही इसका सम्बन्ध परिवार नियोजन के सामान्य क्षेत्र में सुविधाओं के विकास से भी है। इसलिए यह अधिकाधिक अनुभव किया जाने लगा है कि जब तक एक बहुमुखी अनुशासित पद्धति नहीं अपनाई जाती, जिसमें समाजशास्त्रियों, सामाजिक-मनोवैज्ञानिकों, अर्थशास्त्रियों, जनसंख्याविशेषज्ञों, व्यवहार-वैज्ञानिकों, जनस्वास्थ्य-कार्यकर्त्ताओं तथा अन्य लोगों के संयुक्त अनुभवों की सहायता जनसंख्या के प्रश्न पर नहीं ली जाती, तब तक अधिक सफलता प्राप्त करना कठिन है।

इस पुस्तक में यह चेष्टा की गई है कि सामान्य पाठक के सम्मुख तथ्यों और आंकड़ों के साथ जनसंख्या से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं को रखा जाए। आशा की जाती है कि यह पुस्तक लोगों को इन समस्याओं से अवगत कराने में उपयोगी होगी, जो देश के लिए वर्तमान समय में अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

बालकृष्ण केसकर

विषय-सूची

रेखाचित्र की सूची

अध्याय १

जनसंख्या के सिद्धान्त

प्राचीनकाल से जनसंख्या के प्रश्न की ओर राजनेताओं तथा दार्शनिकों का ध्यान जाता रहा है। पर अभी हाल ही में ऐसा हुआ कि पद्धतिगत रूप में इस विषय पर अनुसन्धान शुरू हुआ कि जनसंख्या में परिवर्तन के कारण क्या हैं तथा किन विशेष तरीकों से लोककल्याण पर जनसंख्या के गतिविज्ञान का प्रभाव पड़ता है।

अफलातून और अरस्तू जनसंख्या के आकार के प्रश्न में नगर-राज्य के सन्दर्भ में रुचि लेते रहे। उनके लिए जनसंख्या का आदर्श आकार वह था, जिसमें मनुष्य की क्षमताओं का पूर्ण विकास हो तथा उसका 'सर्वोच्च हित' उपलब्ध हो। यह तभी सम्भव था जब जनसंख्या इतनी अधिक होती, कि वह आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होती तथा अपनी रक्षा करने के योग्य होती, साथ ही सवैधानिक शासन के लिए बहुत बड़ी न होती। अफलातून ने नागरिकों की संख्या ५०४० निर्धारित की थी 'जो सभी नगरों के लिए उपयोगी हो सकती है।'

आधुनिक युग के प्रारम्भ तथा मध्य युगों के दौरान जनसंख्या पर, यूरोपीय लेखकों ने बढ़ती हुई जनसंख्या को पसन्द किया है। नए विश्व (अमेरिका) की खोज तथा एशिया एवं यूरोप के बीच वाणिज्य की वृद्धि और राष्ट्रीय राज्यों के प्रादुर्भाव ने जनसंख्या के प्रश्न पर होनेवाले विवादों की शब्दावली में कुछ परिवर्तन अवश्य किए, पर बढ़ती हुई जनसंख्या को पसन्द करनेवाली सामान्य धारणा में 'अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के बाद कोई विशेष अन्तर नहीं आया।

राजनीतिक अर्थशास्त्र की मर्कन्टाईल या व्यापारवादी तथा कैमेरलिस्ट विचार-धाराएं, जो यूरोप में सत्रहवीं तथा अठारहवीं शताब्दी के अधिकांश भाग में व्याप्त थीं, बढ़ती हुई जनसंख्या के आर्थिक, राजनैतिक तथा सैनिक लाभों पर ज़ोर देती थीं तथा वे जनसंख्या की वृद्धि के प्रोत्साहन के विविध उपायों के पक्ष में थीं। इन विचार-धाराओं के लेखकों का ध्यान मुख्यतया राज्य के धन तथा शक्ति को बढ़ाने के मार्गों तथा साधनों पर केंद्रित था। उनका उद्देश्य प्रति व्यक्ति आय बढ़ाना न था, अपितु कुल राष्ट्रीय आय बढ़ाना था, जिसे राज्य के राजस्व के एक स्रोत के रूप में देखा जाता था

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आर्थिक तथा सामाजिक प्रश्नों पर लिखनेवाले अनेक लेखकों ने मर्केन्टाईल विचार तथा इस दृष्टिकोण को कि जनसंख्या की वृद्धि लाभदायक है तथा राज्य को उसे सक्रिय रूप से प्रोत्साहन देना चाहिए, अस्वीकार कर दिया। कुछ लेखकों ने, विशेष रूप से इंग्लैण्ड, फ्रांस और इटली के कुछ लेखकों ने इस बात पर बल दिया कि जनसंख्या निर्वाह के साधनों के अनुसार ही हो। उन्होंने निर्धनों की सहायता का विरोध किया, क्योंकि इससे मितव्ययिता में कमी हो सकती है, श्रम अचल हो सकता है, उत्पादकता में कमी आ सकती है तथा परिणामस्वरूप निर्वाह के साधनों पर संख्या का दबाव पड़ सकता है। ये तर्क गोडविन (Godwin) तथा कोंदोर्से के, ऐसे सामाजिक सुधार के समर्थकों के विरुद्ध, यह सिद्ध करने की चेष्टा में रखे गए कि सुधारों द्वारा प्राप्त लाभ, बढ़ी हुई जनसंख्या के फलस्वरूप रद्द हो जाएंगे।

व्यापारवादी विचार की प्रतिक्रिया के इसी युग में माल्थस (Malthus) ने १७९८ में अपने 'जनसंख्या के सिद्धान्त पर निबन्ध' का पहला संस्करण प्रकाशित किया। पहला संस्करण अनिवार्य रूप से कोंदोर्से तथा गोडविन के विरुद्ध एक प्रतिपादन था। पर अपने 'निबन्ध' के द्वितीय तथा उसके बाद के संस्करणों में माल्थस् ने विस्तारपूर्वक जनता की आम निर्धनता के आधारभूत कारणों की परीक्षा की, अर्थात् जनसंख्या के दबाव तथा उत्पादक साधनों के बढ़ती हुई जनसंख्या के पोषण करने की दिशा में स्थानान्तरण पर विचार किया। उसने इस बात पर बल दिया कि जनसंख्या निर्वाह के साधनों द्वारा सीमित रहती है तथा जनसंख्या आवश्यक रूप से तब बढ़ती है जब कि निर्वाह के साधनों में वृद्धि की जाती है। हां यदि 'किन्हीं' अत्यन्त शक्तिशाली तथा प्रत्यक्ष निरोधों के द्वारा उसे बढ़ने से रोका न जाए, तो बात और है।

माल्थस का सिद्धान्त दो आधारभूत साध्यों तथा एक धारणा पर आधारित है। उसके आधारभूत साध्य हैं (१) भोजन मनुष्य के अस्तित्व के लिए आवश्यक है, तथा (२) पुरुषों और स्त्रियों के बीच के आवेग आवश्यक हैं तथा ये आवेग लगभग अपने वर्तमान स्वरूप में चलते रहेंगे। उसकी धारणा है कि खाद्य-सामग्री के उत्पादन की अंकगणितीय ढंग से वृद्धि होती है, तथा जनसंख्या की रेखागणितीय वृद्धि होती है। इस प्रकार धरती द्वारा मनुष्यों के जीवन-निर्वाह के साधनों को उत्पन्न करने की शक्ति से जनसंख्या की शक्ति निश्चित रूप से प्रबल है। इसलिए प्रयत्न किए जाने चाहिए कि कुछ शक्तिशाली निरोधों द्वारा जनसंख्या को जीवन-निर्वाह के साधनों की सीमा

से आगे बढ़ने न दिया जाए, अन्यथा वह हमें 'पाप और दुःख' की ओर ले जाएगी।

माल्थस ने जनसंख्या के दो प्रकार के निरोध बतलाए थे—प्रत्यक्ष तथा निवारक निरोधों को 'बुद्धिमत्ता' बताया था, तथा इसके अन्तर्गत विवाहों को स्थगित करने तथा सन्तानोत्पत्ति पर संयम रखने को सम्मिलित किया था। उसने प्रत्यक्ष निरोधों को 'प्राकृतिक' बताया क्योंकि वे स्वयं परिस्थिति में से ही उत्पन्न होते हैं और उसने इनके अन्तर्गत युद्धों, मघातों, महामारियों, रोगों, अकालों, प्राकृतिक दुर्घटनाओं तथा इस प्रकार की अन्य बातों को सम्मिलित किया। माल्थस ने सुझाव दिया कि चेष्टा की जानी चाहिए कि जनसंख्या को जीवन-निर्वाह के साधनों की सीमा से आगे बढ़ने से रोका जाए, अन्यथा प्राकृतिक निरोध अपना कार्य प्रारम्भ करके उसे वांछित सीमा पर ले ही आएंगे। पर इनमें 'पाप और दुःख' अवश्य उत्पन्न होंगे।

अपने विचारों के लिए माल्थस की अत्यन्त प्रशंसा और साथ ही कटु आलोचना भी की गई है। उसके 'निबन्ध' से वाद-प्रतिवादों की एक ऐसी आंधी उठी, जो माल्थस से अधिक दीर्घजीवी रही तथा जिसने समर्थकों और विरोधियों को जनसंख्या की दिशाओं तथा उनकी सामाजिक एवं आर्थिक अवस्थाओं पर प्रभाव के सम्बन्ध में आवश्यक सूचनाओं को एकत्रित करने के लिए उद्बुद्ध किया। इस प्रकार से माल्थस अप्रत्यक्ष रूप से जनगणना के विकास तथा जन्ममृत्यु सम्बन्धी आंकड़ों के संकलन के लिए उत्तरदायी हुए।

माल्थस की आलोचना उनके आधारभूत साध्यों, धारणाओं तथा परिणामों को लेकर की गई है। इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि भोजन मनुष्य के लिए आवश्यक है, पर उतनी ही आवश्यक हैं जल, वस्त्र, निवास तथा जीवन की अन्य मूल आवश्यकताएं। खाद्य-सामग्री तथा अन्य आवश्यकताओं का उत्पादन जनसंख्या से अधिक तीव्र गति से हुआ है। इस बात के समर्थित ऐतिहासिक प्रमाण हैं तथा इस तीव्रता के साथ 'पाप और दुःख' की वृद्धि के कोई स्पष्ट लक्षण नहीं दिखाई पड़े हैं, बल्कि उनमें कुछ कमी ही हुई है। उत्पादन की तकनीक में सुधार के साथ भूमि से तथा जीवन की मूल आवश्यकताओं की उत्पत्ति में बढ़ती हुई उपलब्धियां प्राप्त की जा रही हैं।

माल्थस एक झूठा भविष्यवक्ता सिद्ध हुआ। उसने जनसंख्या की अभूतपूर्व वृद्धि से अनेक दुःखों की सम्भावनाएं व्यक्त की थीं, पर हुआ यह कि आज संसार के अधिकांश विकसित देशों में जन्मदर की वृद्धि में कमी पाई जा रही है और कम विकसित देशों में जनसंख्या की द्विगुण वृद्धि का आधारभूत कारण मृत्युदर में कमी है

न कि जन्मदर में वृद्धि जैसी कि माल्थस को आशंका थी।

मार्क्स ने माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त को अस्वीकार कर दिया। उसने यह माना कि जनसंख्या का कोई विश्वव्यापी सिद्धान्त नहीं है तथा 'अतिजनसंख्या' का मूल मनुष्य के सन्तानोत्पादन की जीववैज्ञानिक शक्ति में नहीं है, वल्कि उत्पादन के प्रचलित पूंजीवादी ढंग में है। अतिजनसंख्या का कारण यह है कि पूंजी का संचय श्रमिकों की संख्या की पूर्ति की तुलना में कम तीव्रता से होता है। मार्क्स के अनुसार अतिरिक्त जनसंख्या पूंजीवादी संचय का आवश्यक परिणाम ही नहीं है; अपितु यह एक परिस्थिति है जो पूंजीवादी पद्धति के अनुकूल है। इस कारण पूंजीवादी पद्धति अतिजनसंख्या को प्रोत्साहन देती है।

जब लोगों ने यह समझ लिया कि माल्थस ने एक विशेष मामले का अति सामान्यीकरण कर दिया है, तो जनसंख्या के प्रश्न पर पुनर्विचार शुरू हो गया। वर्तमान शताब्दी के आरम्भ के लेखकों ने यह सोचना शुरू कर दिया कि जनसंख्या की वृद्धि सदैव अवांछनीय नहीं होती है। इस विचार ने जनसंख्या के आप्टीमम् या आदर्श सिद्धांत के विकास का मार्ग खोला, जिसमें प्रोफेसर कानन (Cannan) तथा अन्य लोगों के नाम सम्बद्ध हैं।

इस सिद्धान्त का कहना है कि प्राकृतिक साधन तथा उत्पत्ति की तकनीक से समन्वित किए जाने पर जो जनसंख्या प्रति व्यक्ति अधिकतम उत्पादन करा दे, वह आप्टीमम या आदर्श जनसंख्या है। कानन ने यह परिकल्पना की कि एक ऐसा बिन्दु होता है, जिसमें सभी उद्योगों से अधिकतम लाभ प्राप्त किया जा सकता है, यानी जनसंख्या का एक बिन्दु है जो उत्पादकता को अत्यधिक बढ़ा सकता है। उसने यह भी इंगित किया कि जनसंख्या का यह आदर्श स्वरूप परिस्थितियों के बदल जाने तथा उत्पादन की नई पद्धतियों के अपनाए जाने पर बदलता रहता है।

स्पष्ट रूप से 'आदर्श' परिभाषित करने की चेष्टाओं से यह धारणा अधिक परिष्कृत हुई, परन्तु इसी के साथ सिद्धान्त की यह आलोचना भी की गई कि इसका व्यावहारिक मूल्य बहुत कम है। यह अत्यन्त कृत्रिम समझा जाने लगा है कि आदर्श की एकमात्र कसौटी के रूप में 'औसत वास्तविक आय' की खोज की जाए। वास्तव में जनसंख्या का 'आदर्श आकार' मूल परिस्थिति के दृष्टिकोण से या राजनैतिक तथा अन्य दृष्टिकोणों से भी बदल सकता है। फिर उत्पादन की तकनीक के समय-समय पर परिवर्तन से भी 'आदर्श आकार' बदल सकता है।

परिवर्तनवादी सिद्धान्त में (Transition Theory) जिसका विकास इस शताब्दी के तीसरे दशक के वर्षों में हुआ तथा जिसके साथ वॉरेन एस० टामसन तथा फ्रैंक डब्ल्यू० नोटेस्टीन के नाम सम्बद्ध हैं जनसंख्या वृद्धि तथा आर्थिक विकास के सम्बन्धों की व्याख्या की गई है। इनका कहना है कि विकासशील देशों में, जहां जनसंख्या का अत्यधिक दबाव, निम्न उत्पादकता, कृषि पर भारी निर्भरता, उत्पादन में पिछड़ी हुई तकनीक, परिवहन के अविकसित साधन तथा सफाई की असन्तोषजनक परिस्थितियां हैं, वहां जन्म तथा मृत्यु की दरें ऊंची हैं। मृत्युदर के ऊंचे होने के कारण हैं अपुष्टिकर भोजन, सफाई के सीमित साधन तथा निरोधक एवं उपचारीय चिकित्सा का अभाव। जन्मदर के ऊंचे होने के कारण हैं सामाजिक मान्यताएं तथा रीति रिवाज, जो बड़े परिवारों को प्रोत्साहन देते हैं। यदि उच्च मृत्युदर के समुदाय को अपना अस्तित्व बनाए रखना है तो उसमें जन्मदर का ऊंचा होना जरूरी है। जन्मदर एक हजार व्यक्तियों में लगभग ४० रहती है तथा मृत्युदर लगभग ३५ जिसके फलस्वरूप जनसंख्या तेजी से नहीं बढ़ने पाती।

आर्थिक प्रगति के साथ मृत्युदर का घटना आरम्भ होता है। इसके कारण हैं परिवहन के सुधरे हुए साधन, मलनिकास की उचित व्यवस्था तथा पीने के पानी की सुविधाओं में वृद्धि। परन्तु जन्मदर ऊंची ही रहती है, जिससे जन्म और मृत्युदरों के बीच का अन्तर बढ़ता जाता है तथा जनसंख्या के बढ़ने का सम्भाव्य प्रतिवर्ष प्रति हजार पर २०-३० रहता है। जनसंख्या की वृद्धि की तेज गति के कारण ही इस अवधि को 'जनसंख्या विस्फोट' युग के रूप में भी जाना जाता है।

आर्थिक विकास की विशिष्टताओं में से एक है विशेष रूप से बढ़ता हुआ नगरीकरण, और नगरीय वातावरण में बच्चे आमतौर पर सहारे के स्थान पर भार ही अधिक होते हैं। आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया में परम्परागत रिवाजों और मान्यताओं की शक्ति भी घटने लगती है। स्त्रियां यह अनुभव करने लगती हैं कि यदि उन पर बड़े परिवारों का बोझ होगा, तो वे समाज में अपना उचित भाग नहीं निभा पाएंगी। परिणामस्वरूप बड़े परिवार के आदर्श का स्थान छोटे परिवार का आदर्श ले लेता है, तथा जन्मदर ४० की ऊंचाई से घटकर लगभग १७ प्रति हजार जनसंख्या तक आ जाती है। मृत्युदर भी कम हो जाती है तथा लगभग ८ प्रति हजार तक आ जाती है, जिससे जनसंख्या स्वयं अपने आप को स्थिर रखती है।

उपरोक्त तीन अवस्थाएं धीमी जनसंख्या वृद्धि की अवस्था, तीव्र जनसंख्या वृद्धि की अवस्था तथा स्थिर अथवा घटती हुई जनसंख्या वृद्धि की अवस्था भी कह-

जाती है। औद्योगिक रूप से विकसित विश्व के देश प्रारम्भ की दोनों अवस्थाओं से निकल कर वर्तमान समय में तीसरी अवस्था में हैं एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के विकसित देश या तो प्रथम अवस्था में हैं या दूसरी अवस्था में प्रवेश कर रहे हैं।

इस सिद्धान्त में वर्णित घटना-क्रम को प्रत्येक ऐसे क्षेत्र में देखा जा सकता है, जहां की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान से विकसित होकर एक औद्योगिक बाजार युक्त अर्थव्यवस्था में परिवर्तित हो गई है। पर सिद्धान्त में जन्म-मृत्यु की दरों के घटने के परिमाण को पूर्ण रूप से बताया नहीं गया है। इस सिद्धान्त में एक उल्लेखनीय सामान्यीकरण फिर भी पाया जाता है अर्थात जन्मदर में कमी, मृत्युदर में कमी की तुलना में काफी लम्बे समय के व्यवधान के बाद आ पाती है और इस व्यवधान के बीच में जनसंख्या अत्यन्त तीव्रगति से बढ़ती है। उदाहरण के लिए 'यूरोपीय बस्ती क्षेत्र' की जनसंख्या १७५० तथा १९५० के बीच में छ गुणी बढ़ी। जनसंख्या १७५० से १८५० में दुगुनी से अधिक हो गई तथा १८५० से १९५० की अवधि में लगभग तिगुनी हो गई।

यह सिद्धान्त एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरीका के कम विकसित देशों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इन देशों की जन्मदर ऊंची है, तथा मृत्युदर तीव्रता के साथ घट रही है। जन-स्वास्थ्य के क्षेत्र में अपनाए गए नूतन उपायों के फलस्वरूप मृत्युदर समुचित रूप से घटाई जा सकी है, पर अर्थव्यवस्था तथा जन्मदर में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं हुए हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि इन देशों की जनसंख्या एक ऐसी गति से बढ़ रही है कि बीस पच्चीस वर्षों में वह दुगुनी हो जाती है। इससे आर्थिक प्रगति में शिथिलता आ जाने की संभावना है। इसलिए यदि आर्थिक विकास की प्रक्रिया को बनाए रखना है तो जन्मदर को समुचित मात्रा में घटाने की अविलम्ब आवश्यकता है।

अध्याय २

जनसंख्या में वृद्धि और कम विकसित देशों का आर्थिक विकास

टामस राबर्ट माल्थस जनसंख्या वृद्धि को नापसन्द करते थे और उन्होंने उसे सामान्य निर्धनता का मुख्य कारण बताया था। उनका यह भी मत था कि सामान्य जनों के दुखों को सामाजिक सुधारों से समाप्त नहीं किया जा सकता है, क्योंकि इस माधन द्वारा प्राप्त कोई भी लाभ जनसख्या में नई वृद्धि के द्वारा बहुत ही अल्प समय में चूस या समाप्त कर लिया जाएगा। आधुनिक लेखक माल्थस के अति-सरलीकृत तर्कों का खण्डन करते हैं, पर इस युक्ति से सहमत हैं कि जनसंख्या की वृद्धि कुछ परिस्थितियों में सामाजिक तथा आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न करती है। उदाहरण के लिए भूमि तथा अन्य प्राकृतिक साधनों की कमी, पूंजी की कमी तथा प्रशिक्षित एवं योग्य जनशक्ति की कमी से बढ़ते हुए उत्पादन तथा तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसख्या में सन्तुलन स्थापित करना कठिन हो जाएगा। दूसरी ओर यह भी तर्क किया जाता है कि कुछ परिस्थितियों में जनसंख्या की विपुल वृद्धि आर्थिक विकास के लिए निश्चित रूप से लाभकारी हो सकती है। ऐसा उन देशों में हो सकता है, जहां प्राकृतिक साधनों के भारी भण्डार समुचित जनशक्ति के अथवा बृहत उद्योगों के लिए यथेष्ट बाजारों के अभाव में अविकसित पड़े रहते हैं।

इस प्रश्न का कोई सामान्य उत्तर नहीं है कि किस प्रकार से जनसख्या की वृद्धि जनसाधारण के भौतिक कल्याण को प्रभावित कर सकती है। इसका उत्तर बहुत-सी परिस्थितियों पर निर्भर करता है तथा किसी देश की जनसंख्या की समस्या को समझने के लिए इन सभी परिस्थितियों का निरीक्षण करना पड़ेगा। वर्तमान युग में विकसित तथा कम विकसित देशों की प्रासंगिक परिस्थितियों में बहुत अन्तर है।

अफ्रीका, एशिया तथा लैटिन अमेरिका के बहुत से कम विकसित देशों में प्राकृतिक साधनों के विशाल भण्डार हैं, जिन्हें अभी तक दुहा नहीं गया है, लेकिन इनको विकसित करने योग्य पूंजी तथा प्राविधिक रूप से शिक्षित जनशक्ति का अभाव है। विश्व के महान औद्योगिक संयन्त्र यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका के कुछ देशों में केन्द्रित

हैं जब कि अन्य कम सौभाग्यशाली देश साधारण औजारों तक के अभाव की असुविधा से ग्रस्त हैं।

आज की प्रवृत्तियां ऐसी हैं जिनसे उत्पादन के साधनों के संदर्भ में संख्या की वर्तमान असमानता और भी गुरुतर हो जाती है। जनसंख्या उन क्षेत्रों में अधिक तीव्रता से बढ़ रही है, जहां आर्थिक कठिनाइयां अधिकतम हैं। यह घटती हुई मृत्यु-दर के कारण है। बहुत-से कम विकसित देशों में मृत्युदर अब प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व के समय से आधी रह गई है, परिणाम है जनसंख्या वृद्धि का उग्र रूप, जो उन्नीसवीं शताब्दी तथा बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में होने वाली यूरोप, उत्तरी अमेरिका तथा ओशेनिया की जनसंख्या की उग्रवृद्धि से भी आगे बढ़ गई है।

अठारहवीं तथा उन्नीसवीं शताब्दी में यूरोप गिरती हुई मृत्युदर को आर्थिक प्रगति तथा राष्ट्र के शारीरिक स्वास्थ्य का चिन्ह समझा जाता था। इसका कारण यह है कि इन देशों में मृत्युदरों की कमी धन-वृद्धि तथा जनसाधारण की स्थिति में सुधार ला कर की गई थी। लोग अधिक दिन जीवित रहने लगे थे, क्योंकि वे अधिक पौष्टिक भोजन करने की क्षमता रखने लगे थे तथा उत्तम आवासों एवं स्वच्छता की परिस्थितियों में निवास कर सकते थे। पर यह स्थापना आज के कम विकसित देशों के संदर्भ में सत्य नहीं है। कारण यह है कि कम विकसित देशों की मृत्युदर सम्पन्नता की वृद्धि से नहीं घटी है, बल्कि स्वास्थ्य के अनेक कार्यक्रमों से घटी है जैसे डी० डी० टी० का छिड़काव, बी० सी० जी० अभियान तथा जीवाणुनाशक औषधियों का बढ़ा हुआ प्रयोग।

जनसंख्या की वृद्धि की तीव्रगति, साथ ही उद्योगों की कमी के परिणामस्वरूप कम विकसित देशों की जनसंख्या कृषि पर अत्यधिक निर्भर रहने लगी है। श्रम की तुलनात्मक अधिकता से खेती के ऐसे साधनों को प्रोत्साहन मिलता है, जिनसे अधिक श्रम करने पर भी उत्पादन कम होता है। कुछ क्षेत्रों में तो श्रम करनेवाले अपनी भूमि के छोटे से भाग में अपने आपको व्यस्त रखने में असमर्थ हो जाते हैं, परिणाम-स्वरूप वे प्रत्येक वर्ष का एक बड़ा भाग विवशतापूर्ण आलस्य में व्यतीत करते हैं। जनसंख्या का भार तथा भूमि की कमी कभी-कभी भूमि को अत्यधिक अनाज उगाते-उगाते कमजोर बना देती है, साथ ही भूमि की उर्वरता मारी जाती है।

अधिकांश कम विकसित देशों में खेती योग्य भूमि बढ़ाने की सम्भावनाएं सीमित हैं। पर भूमि की उपज समुचित रूप से बढ़ाई जा सकती है, बशर्ते कि प्राप्त

सार्वजनिक स्वास्थ्य का पूर्ण लाभ उठाया जाए। साधारण सुधारों जैसे मिश्रित खाद का प्रयोग, बेहतर बीज का उपयोग, फसल-परिवर्तन, उपज के भंडारण प्रकार में कीड़े पशुओं और पौधों की बीमारियों को नियंत्रित करने के लिए साधन अपनाने तथा रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से बहुत कुछ सफलता प्राप्त की जा सकती थी। पर इसमें भी कठिनाइयाँ हैं, क्योंकि लोग निरक्षर हैं, अन्धविश्वासी हैं, परम्पराओं से जकड़े हैं और प्रसार के साधन अपर्याप्त हैं।

दूसरा भी जनसंख्या की वृद्धि को सीमाबद्ध करने की एक पद्धति यह है कि कृषि के कार्यकर्ताओं को कामों के अन्य क्षेत्रों में स्थानान्तरित कर दिया जाए। सामान्य रूप से इस बात पर सहमति है कि अर्थव्यवस्था के औद्योगिक एवं व्यावसायिक दोनों का विकास अविकसित कम विकसित देशों की सफल आर्थिक प्रगति के लिए आवश्यक है। पर एक कृषि-प्रधान देश के लिए जहाँ आय और पूँजी के स्तर निम्न हैं, बृहत् आकार के उद्योगों का विकास करना अत्यन्त कठिन है, भले ही ऐसे देश में कोयला, तेल, कच्चा लोहा तथा शक्ति के अन्य स्रोतों एवं औद्योगिक कच्चे माल की अधिकता हो। प्रति व्यक्ति आय की कमी से बचत में बाधा पड़ती है, परिणामस्वरूप विनियोग धन, जो कि व्यक्ति की आय का समुचित भाग होता है, उपभोग में लग जाता है। औद्योगिक विस्तार के मार्ग में दूसरा रोड़ा मशीनों को सुचारु रूप से चलाने, देखभाल एवं प्रबन्ध कार्य करनेवाले प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की कमी है।

कम विकसित देशों में प्रति कार्यकर्ता सन्तोषजनक स्तर पर कृषि और उद्योग में उत्पादन प्राप्त करने के लिए समुचित उपकरण प्रदान करने के लिए विशाल धन-राशि लगाने की आवश्यकता होगी। उदाहरण के लिए पूरे एशिया के कृषि और उद्योग के प्रति कार्यकर्ता को २००० डालर के यंत्र और उपकरण से सज्जित करने के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका की राष्ट्रीय आय के तिगुने के समान पूँजी चाहिए। यह अनुमान लगाया गया है कि मोटे तौर पर ५४० बिलियन[1] डालर के मूल्य के उपकरणों की आवश्यकता पड़ेगी, तब कहीं एशिया के मुख्य भाग के प्रति कार्यकर्ता की उत्पादनशक्ति के अनुपात को, द्वितीय विश्वयुद्ध के पूर्व के जापानी स्तर के समान लाया जा सकेगा।

इस प्रकार विपुल धनराशि का विनियोग कम विकसित देशों के बूते के बाहर

१. बिलियन का अर्थ अमेरिका में लाख करोड़ और अन्यत्र सौ करोड़ है।

हिसाब लगाया गया है कि एक कम विकसित देश को, जिसकी जनसंख्या प्रतिवर्ष एक प्रतिशत बढ़ती है, प्रति कार्यकर्ता के उत्पादन के उपकरणों का स्थिर औसत बनाए रखने के लिए अपनी राष्ट्रीय आय में से ५ प्रतिशत लगाना होगा। लेकिन यदि जनसंख्या की वृद्धि ढाई प्रतिशत प्रतिवर्ष होती है, तब राष्ट्रीय आय से साढ़े सात प्रतिशत से साढ़े बारह प्रतिशत धन लगाना आवश्यक होगा। किसी भी निर्धन देश के लिए अपनी आय का इतना बड़ा भाग बचा पाना सरल कार्य नहीं है।

इसलिए यह कहा जा सकता है कि जनसंख्या-वृद्धि से कम विकसित देशों का आर्थिक विकास तीन अलग-अलग ढंगों से प्रभावित होता है। प्रथम, उच्च जन्मदर प्रति वयस्क कार्यकर्ता पर निर्भर सन्तानों की संख्या के बोझ को भारी कर देती है। इससे विनियोग के लिए समुचित बचत कर पाना कठिन हो जाता है। इससे बच्चों को शिक्षा प्रदान करना भी कठिन हो जाता है, जो देश की सामाजिक एवं आर्थिक प्रगति के लिए आवश्यक है। द्वितीय, गिरती हुई मृत्युदर तथा बढ़ती हुई जन्मदर से जनसंख्या की वृद्धि तीव्र होने लगती है। इसके लिए विशाल जनसांख्यिकीय लागत की आवश्यकता होती है ताकि कार्यकर्ताओं की बढ़ती हुई जनसंख्या को प्रति व्यक्ति कम-से-कम उतने उपकरण उपलब्ध हों, जो उन्हें पहले से प्राप्त होते आ रहे हैं। तृतीय, उद्योगों के अभाव में जनसंख्या कृषि पर पूर्णतया निर्भर हो जाती है। बहुत से कम विकसित देशों में कृषिक्षेत्र अतिरिक्त जनसंख्या से पीड़ित है, इसलिए यदि कृषि से जनसंख्या का स्थानान्तरण उद्योगों में किया जा सके, तो उससे बहुत लाभ होगा। पर जनसंख्या वृद्धि की तीव्र गति के कारण न तो कृषि में आवश्यक सुधार किए जा सकते हैं और न उद्योगों को सरलता से विकसित किया जा सकता है।

ऐसी आशा के लिए समुचित आधार हैं कि आर्थिक रूप से पिछड़े हुए राष्ट्रों की जन्मदर में भविष्य में कमी आ सकती है, यदि वे औद्योगीकरण करते हुए अपने रहन-सहन के स्तर को सुधार सकें। यह सम्भावना आर्थिक रूप से विकसित देशों के इतिहास पर आधारित है, जो जनसांख्यिकी वृत्त के 'परिवर्तन काल' से निकल चुके हैं। कुछ भी हो जन्मदर पर औद्योगीकरण तथा समृद्धि की प्रतिक्रियाएं विभिन्न संस्कृतियों में एक सी नहीं भी हो सकती है। जन्मदर तभी घटती है, जब परम्परा-वादी विश्वासों और मान्यताओं में परिवर्तन आए तथा लोग जानबूझकर छोटे परिवार की योजना बनाएं। मान्यताओं में यह परिवर्तन या तो औद्योगीकरण

की उपजों के आधुनिकीकरण तथा शहरीकरण से लाया जा सकता है अथवा एक ऐसे जागरूक-शिक्षात्मक व प्रेरणात्मक कार्यक्रम द्वारा लाया जा सकता है, जिसका उद्देश्य लोगों के परम्परावादी विश्वासों और मान्यताओं को बदलना हो। कम विकसित देशों की कुछ सरकारें दूसरे मार्ग अपना रही हैं तथा उन्होंने परिवार-नियोजन के लिए एक विस्तृत शिक्षात्मक कार्यक्रम का सूत्रपात कर दिया है। भविष्य की जन्म-दर पर इसका महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ सकता है।

अध्याय ३

भारत की जनसंख्या की वृद्धि

भारत चीन के बाद, जिसकी संख्या मोटे तौर से ६५ करोड है संसार का दूसरा सबसे बड़ा देश है। इन दोनो देशो की जनसंख्या का योग १'१ बिलियन है, जो मोटे रूप से विश्व जनसंख्या का एक तिहाई है जो लगभग ३'३ बिलियन है। १९६१ की जनगणना के समय भारत की जनसंख्या ४३.९ करोड थी। आज (दिसम्बर १९६६ मे) जनसंख्या अनुमानित रूप मे ५० करोड़ के लगभग है। यह लगभग अफ्रीका की दुगुनी तथा सम्पूर्ण अमेरीका महाद्वीप से अधिक है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत ने अपनी जनसंख्या में मोटे तौर पर १६ करोड़ की वृद्धि की है, जो संख्या पाकिस्तान, वर्मा, श्रीलंका, नेपाल की समस्त जनसंख्या के योग के बराबर है। केवल १९५१-६१ के दशक मे भारत की जनसंख्या ७.८करोड़ बढ़ी, जो मोटे तौर से विभाजन के समय पाकिस्तान की थी। प्रतिवर्ष हमारी जनसंख्या में १.१ करोड़ की वृद्धि होती है, जो संख्या के हिसाब से पूरे श्रीलंका की जनसंख्या के समान है।

भारत की जनसांख्यिकी की स्थिति

भारत की जनसंख्या १९६१ की जनगणना के समय ४३.९ करोड़ तथा १९५१ में ३६.११ करोड़ थी। इस प्रकार १९५१-६१ के दशक के बीच की वृद्धि २१ ६ प्रतिशत रही, जो अभूतपूर्व है। यहां यह ध्यान देने की बात है कि १९०१ से १९२१ के बीच जनसंख्या वृद्धि की दर केवल ५.४ प्रतिशत थी, जब कि अगले बीस वर्षो में अर्थात् १९२१ से १९४१ तक वृद्धि २६.० प्रतिशत रही, जो लगभग पाच गुनी अधिक है। अगले बीस वर्षों में अर्थात् १९४१ से १९६१ तक वृद्धि की दर ३८.७ प्रतिशत पहुंच गई। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि हमारी जनसंख्या १९२१ से अत्यन्त तीव्र गति से बढ़ रही है।

१९२१ का वर्ष बड़ी उछाल का वर्ष माना जाता है, क्योंकि इसके पूर्व भारत की जनसंख्या मन्द गति से बढ़ रही थी, पर इस समय के बाद से वृद्धि अत्यन्त तीव्र

सारिणी १

भारत की जनसंख्या और वृद्धि की दर, १९०१-१९६१

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ों में)	दशक	दशक में वृद्धि की दर
१९०१	२३.८४	१९०१-११	५.७५
१९११	२५.२१	१९११-२१	−०.३२
१९२१	२५.१३	१९२१-३१	११.०२
१९३१	२७.९०	१९३१-४१	१३.५१
१९४१	३१.८७	१९४१-५१	१४.०२
१९५१	३६.११	१९५१-६१	२१.६३
१९६१	४३.९२		

हो गई। इस तीव्र गति का मुख्य कारण मृत्यु दर में कमी है न कि जन्म-दर में वृद्धि। उदाहरण के लिए वर्ष १८९१ में जन्म दर ४९ प्रति हज़ार थी तथा मृत्युदर ४० थी। १९६१ में जन्मदर ४२ थी तथा मृत्युदर केवल २३ (सारिणी २)। महामारी

सारिणी २

जन्म तथा मृत्यु की दरें तथा जन्म के समय जीवन की संभावना

१८८१-१९६१

वर्ष	जन्मदर	मृत्युदर	जीवन की संभावना जन्म के समय (वर्षों में)	
			पुरुष	स्त्री
१८८१	५०.५ (बम्बई)	४२.५ (बम्बई)	२३.७	२५.६
१८९१	४८.८	३९.६	२४.६	२५.५
१९११	५१.३	४३.१	२२.६	२३.३
१९२१	४९.२	४८.६	१९.४	२०.९
१९३१	४६.४	३६.३	२६.९	२६.६
१९४१	४५.२	३१.२	३२.०	३१.४
१९५१	३९.९	२७.४	३२.५	३१.७
१९६१[1]	४१.७	२२.८	४१.९	४०.६

१. ये आंकड़े १९५१-६१ दशक के हैं।

बीमारियों पर, नियन्त्रण जैसे मलेरिया (जिससे अतीत में २० लाख व्यक्ति प्रति वर्ष मरते थे), पीने के पानी की सुविधाओं में सुधार, अच्छी नालियों का प्रबन्ध, डी० डी० टी० के छिड़काव में वृद्धि तथा कीटाणुनाशक दवाओं के प्रयोग ने मृत्युदर को कम करने में योग दिया है।
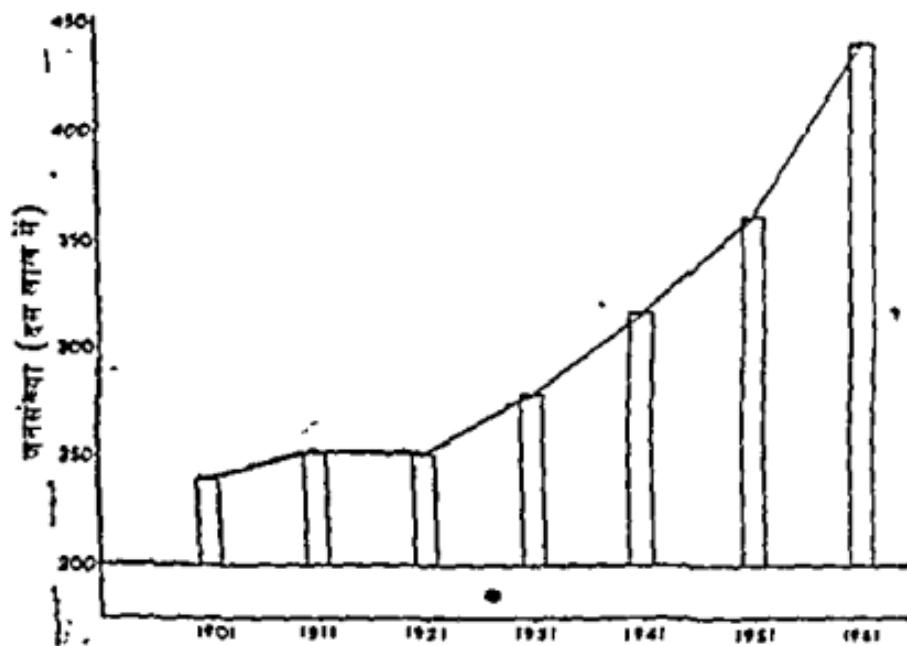
रेखाचित्र १- विभिन्न वर्षों में भारत की जनसंख्या

मृत्यु की दर के घटने के फलस्वरूप जन्म के समय जीवन की सम्भावनाएं बढ़ गई हैं। जबकि १८९१ में जीवन की सम्भावना २५ वर्ष थी, यह १९६१ में बढ़कर ४१ वर्ष हो गई। इसके अर्थ यह हुए कि एक नवजात शिशु के ४१ वर्ष तक अस्तित्व बनाए रखने की सम्भावनाएं हैं। लेकिन एक बच्चा जिसकी अवस्था दस वर्ष की है, वह ४५ वर्ष तक रह सकता है। इसका कारण यह है कि शिशुओं एवं बच्चों की मृत्युदर भारत में ऊंची है तथा यदि एक बच्चा १० वर्ष की अवस्था तक जीवित रहता है, तो उसके ४५ वर्ष की अवस्था तक जीवित रहने की सम्भावना है।

सारिणी ३ में पिछले तीन जनगणना वाले वर्षों में भारत के विभिन्न राज्यों की संख्या तथा दो जनगणनाओं के मध्य काल की वृद्धि दर को दिखाया गया है। यह

स्पष्ट है कि देश के विभिन्न राज्यों में जनसंख्या वृद्धि की दर एक-दूसरे से बहुत भिन्न है। जम्मू और काश्मीर को छोड़कर भारत के शेष चौदह राज्यों में इस शताब्दी के साठ वर्षों में जनसंख्या का अन्तर असम में अधिकतम २२० प्रतिशत लेकर न्यूनतम उत्तर प्रदेश ५१.७ प्रतिशत रहा है तथा राष्ट्रीय वृद्धि की दर ८५.६ प्रतिशत रही है। अधिकतम वृद्धि दिखाने वाले राज्य असम, केरल और गुजरात हैं तथा न्यूनतम वृद्धि वाले राज्य हैं उत्तर प्रदेश, पंजाब, बिहार तथा उड़ीसा।

सारिणी ३

विभिन्न राज्यों में दशकों के दौरान जनसंख्या तथा जनसंख्या वृद्धि की दर

राज्य	जनसंख्या हजारों में			जनसंख्यावृद्धि की दर (प्रति १०० में)			
	१९४१	१९५१	१९६१	१९४१-५१	१९५१-६१	१९२१-६१	१९०१-६१
आंध्र प्रदेश	२७,२८९	३१,११५	३५,९८३	१४.०२	१५.६५	६७.९९	८८.७
असम	७,४०३	८,८३१	११,८७३	१९.२८	३४.४५	१३०.१९	२१९.८
बिहार	३५,१७२	३८,७८४	४६,४५६	१०.२७	१९.७८	६५.१६	७०.१
गुजरात	१३,७०२	१६,२६३	२०,६३३	१८.६९	२६.८८	१०२.७८	१२६.९
जम्मू-कश्मीर	२,९४७	३,२५४	३.५६१	१०.४२	९.४४	४६.८८	—
केरल	११,०३२	१३,५४९	१६,९०४	२२.८२	२४.७६	११६.६६	१६४.३
म० प्रदेश	२३,९९१	२६,०७२	३२,३७२	८.६७	२४.१७	६८.८५	९२.०
मद्रास	२६,२६८	३०,११९	३३,६८७	१४.६६	११.८५	५५.७५	७५.०
महाराष्ट्र	२६,८८३	३२,००३	३९,५५४	१९.२७	२३.६०	८९.७१	१०४.०
मैसूर	१६,२५५	१९,४०२	२३,५८७	१९.३६	२१.५७	७६.३२	८०.७
उड़ीसा	१३,७६८	१४,६४६	१७,५४९	६.३८	१९.८२	५७.२७	७०.३
पंजाब	१६,१०१	१६,१३५	२०,३०७	०.२१	२५.८६	६२.९१	५३.१
	१३,८६४	१५,९७१	२०,१५६	१५.२०	२६.२०	९५.८३	९५.८
प्रदेश	५६,५३२	६३,२१६	७३,७४६	११.८०	१६.६६	५८.०२	५१.७
गाल	२३,२३२	२६,३०२	३४,९२६	१३.२२	३२.७९	९९.८५	१०६.२
	३१८,७०१	३६१,१३०	४३९,२३५	१३.३१	२१.५०	७४.७५	८५.८९

आयु का ढांचा

भारत की आयु के ढांचे का, जैसाकि सभी कम-विकसित देशों में विशिष्ट रूप से पाया जाता है, आधार अत्यन्त विस्तृत है तथा शिखर स्तूपाकार है। इस प्रकार की रचना को पिरामिडल या कोणस्तूपाकार कहा जाता है। अधिकाश कम विकसित देशों में मोटे तौर से ४० प्रतिशत जनसंख्या १५ वर्ष की अवस्था से कम की, ५५ प्रतिशत जनसंख्या १५ और ५५ वर्ष की अवस्था के बीच की, तथा ५ प्रतिशत ५५ वर्ष की अवस्था से ऊपर की होती है। नीचे दी हुई सारिणी में भारतीय जनसंख्या के प्रतिशत का विभाजन आयु एवं यौनभेद के आधार पर दिया गया है। इसमें दिखाया गया है कि हमारी लगभग ४१ प्रतिशत जनसंख्या १५ वर्ष की अवस्था के नीचे है तथा लगभग ८ प्रतिशत ५५ वर्ष की अवस्था के ऊपर है।

सारिणी ४

जनसंख्या का आयु एवं यौनभेद के आधार पर प्रतिशत में विभाजन, १९६१

आयु श्रेणी	जनगणना की गिनती	
	पुरुष	स्त्री
०-४	१४ ७	१५ ५
५-९	१४ ६	१४ ९
१०-१४	११ ६	१० ८
१५-१९	८ २	८.१
२०-२४	८ १	९ ०
२५-२९	८.२	८.५
३०-३४	७ १	७.०
३५-३९	६ ०	५.६
४०-४४	५ ४	५ १
४५-४९	४.३	३.९
५०-५४	४.०	३ ७
५५-५९	२ ३	२.१
६०-६४	२.५	२.६
६५-६९	१.१	१.१
७० +	१.९	२.१
सभी आयु में	१००.०	१००.०

स्पष्ट है कि देश के विभिन्न राज्यों में जनसंख्या वृद्धि की दर एक-दूसरे से बहुत भिन्न है। जम्मू और काश्मीर को छोड़कर भारत के शेष चौदह राज्यों में इस शताब्दी के साठ वर्षों में जनसंख्या का अन्तर असम में अधिकतम २२० प्रतिशत लेकर न्यूनतम उत्तर प्रदेश ५१.७ प्रतिशत रहा है तथा राष्ट्रीय वृद्धि की दर ८५.९ प्रतिशत रही है। अधिकतम वृद्धि दिखाने वाले राज्य असम, केरल और गुजरात हैं तथा न्यूनतम वृद्धि वाले राज्य हैं उत्तर प्रदेश, पंजाब, बिहार तथा उड़ीसा।

सारिणी ३

विभिन्न राज्यों में दशकों के दौरान जनसंख्या तथा जनसंख्या वृद्धि की दर

राज्य	जनसंख्या हज़ारों में			जनसंख्यावृद्धि की दर (प्रति १०० में)			
	१९४१	१९५१	१९६१	१९४१-५१	१९५१-६१	१९२१-६१	१९०१-६१
आंध्र प्रदेश	२७,२८९	३१,११५	३५,९८३	१४.०२	१५.६५	६७.९९	८८.७
असम	७,४०३	८,८३१	११,८७३	१९.२८	३४.४५	१३०.१९	२१९.८
बिहार	३५,१७२	३८,७८४	४६,४५६	१०.२७	१९.७८	६५.१६	७०.१
गुजरात	१३,७०२	१६,२६३	२०,६३३	१८.६९	२६.८८	१०२.७८	१२६.९
जम्मू-कश्मीर	२,९४७	३,२५४	३.५६१	१०.४२	९.४४	४६.८८	—
केरल	११,०३२	१३,५४९	१६,९०४	२२.८२	२४.७६	११६.६६	१६४.३
म० प्रदेश	२३,९९१	२६,०७२	३२,३७२	८.६७	२४.१७	६८.८५	९२.०
मद्रास	२६,२६८	३०,११९	३३,६८७	१४.६६	११.८५	५५.७५	७५.०
महाराष्ट्र	२६,८८३	३२,००३	३९,५५४	१९.२७	२३.६०	८९.७१	१०४.०
मैसूर	१६,२५५	१९,४०२	२३,५८७	१९.३६	२१.५७	७६.३२	८०.७
उड़ीसा	१३,७६८	१४,६४६	१७,५४९	६.३८	१९.८२	५७.२७	७०.३
पंजाब	१६,१०१	१६,१३५	२०,३०७	०.२१	२५.८६	६२.९१	५३.१
राजस्थान	१३,८६४	१५,९७१	२०,१५६	१५.२०	२६.२०	९५.८३	९५.८
उ० प्रदेश	५६,५३२	६३,२१६	७३,७४६	११.८०	१६.६६	५८.०२	५१.७
प० बंगाल	२३,२३२	२६,३०२	३४,९२६	१३.२२	३२.७९	९९.८५	१०६.२
त	३१८,७०१	३६१,१३०	४३९,२३५	१३.३१	२१.५०	७४.७५	८५.८९

आयु का ढांचा

भारत की आयु के ढांचे का, जैसाकि सभी कम-विकसित देशों में विशिष्ट रूप से पाया जाता है, आधार अत्यन्त विस्तृत है तथा शिखर स्तूपाकार है। इस प्रकार की रचना को पिरामिडल या कोणस्तूपाकार कहा जाता है। अधिकांश कम विकसित देशों में मोटे तौर से ४० प्रतिशत जनसंख्या १५ वर्ष की अवस्था से कम की, ५५ प्रतिशत जनसंख्या १५ और ५५ वर्ष की अवस्था के बीच की, तथा ५ प्रतिशत ५५ वर्ष की अवस्था से ऊपर की होती है। नीचे दी हुई सारिणी में भारतीय जनसंख्या के प्रतिशत का विभाजन आयु एवं यौनभेद के आधार पर दिया गया है। इसमें दिखाया गया है कि हमारी लगभग ४१ प्रतिशत जनसंख्या १५ वर्ष की अवस्था के नीचे है तथा लगभग ८ प्रतिशत ५५ वर्ष की अवस्था के ऊपर है।

सारिणी ४

जनसंख्या का आयु एवं यौनभेद के आधार पर प्रतिशत में विभाजन, १९६१

आयु श्रेणी	जनगणना की गिनती	
	पुरुष	स्त्री
०-४	१४.७	१५.५
५-९	१४.६	१४.९
१०-१४	११.६	१०.८
१५-१९	८.२	८.१
२०-२४	८.१	९.०
२५-२९	८.२	८.५
३०-३४	७.१	७.०
३५-३९	६.०	५.६
४०-४४	५.४	५.१
४५-४९	४.३	३.९
५०-५४	४.०	३.७
५५-५९	२.३	२.१
६०-६४	२.५	२.६
६५-६९	१.१	१.१
७० +	१.९	२.१
सभी आयु में	१००.०	१००.०

विवाह की आयु

भारत में स्त्रियों के विवाह की आयु संसार में सबसे कम आयु में से एक है। इसका कारण बालविवाहों की बड़ी हुई संख्या है। १९२९ के बालविवाह निरोध कानून से पूर्व ४५ से ५० प्रतिशत कन्याओं का विवाह १५ वर्ष की अवस्था से पूर्व कर दिया जाता था। १९६१ में इस प्रकार की कन्याओं का अनुपात घटकर २० आ गया। आज भी दस में से दो कन्याओं का विवाह वैधानिक रूप से स्वीकृत विवाह की न्यूनतम आयु से पूर्व किया जाता है। १९६१ में भारत में स्त्री के विवाह की औसत १६ वर्ष तथा पुरुषों की २२ वर्ष थी। लेकिन बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, राजस्थान तथा उत्तर प्रदेश में कन्याओं के विवाह किए जाने की औसत आयु १५ वर्ष से कम रही।
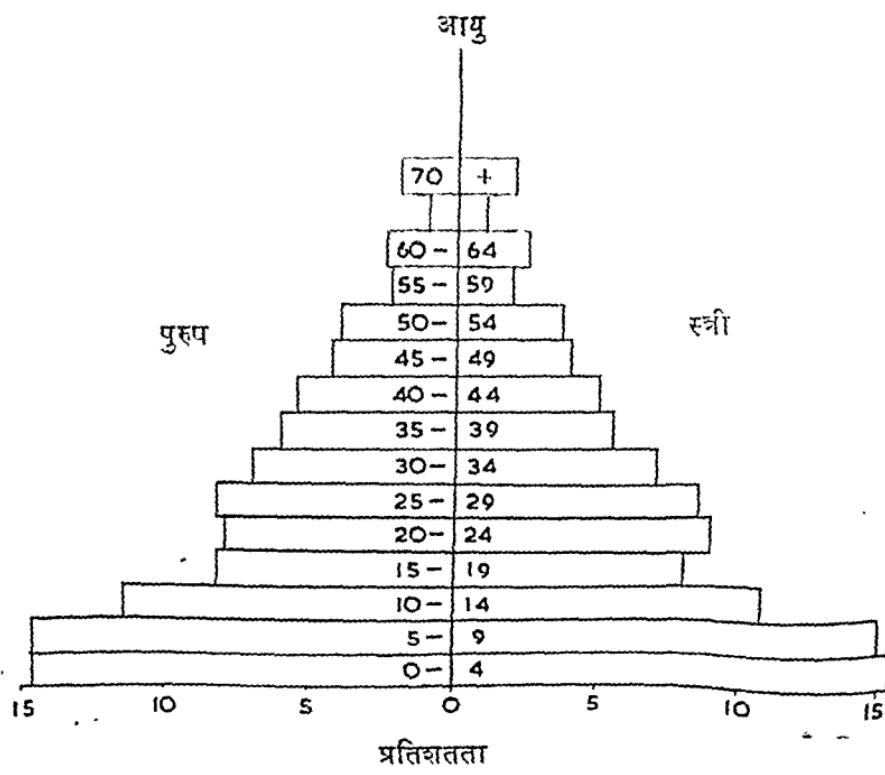
रेखाचित्र २. आयु एवं यौनभेद के आधार पर जनसंख्या प्रतिशत ब्यौरा १९६१

प्रसवन शक्ति

भारतीय महिलाओं की प्रसवन शक्ति के सम्बन्ध मे आकड़े अभी तक अपर्याप्त है और पूरे भारतवर्ष की सूचनाए प्राप्त नहीं हैं। लेकिन प्राप्त सूचनाओ के आधार पर कहा जा सकता है कि औसतन एक विवाहित भारतीय महिला प्रजनन के रुकने के समय के पूर्व लगभग ६ ६ बच्चों को दो जन्म देती है। आकड़े यह भी दर्शाते हैं कि प्रसवन शक्ति सम्बन्धी ग्रामीण तथा शहरी अन्तर विशेष नही है। इससे यह भी ज्ञात होता है कि नगरीकरण तथा आधुनिकीकरण, ऐसे कारण जो प्रसवन शक्ति को दबाते है, भारत मे अभी प्रभावकारी नही हैं। नीचे दी हुई सारिणी मे उन महिलाओं के जीवित बच्चो की सख्या का औसत है, जिनके विवाह सम्बन्ध टूटे नही है।

सारिणी ५
प्रजनन काल के दौरान अटूट रूप से विवाहित प्रति महिला के जीवित पैदा बच्चों की औसत संख्या

	शिशुओं की औसत सख्या	
	ग्रामीण	शहरी
त्रिरुवांकुर-कोचीन (१९५१ की जनगणना)	६.६	६.४
पूर्वी मध्य प्रदेश (१९५१ की जनगणना)	६.१	६.३
पश्चिम बगाल (१९५१ की जनगणना)	६०	—
पजीकरण के आंकड़े (१९६१)	—	६.६
सोलहवां आवर्तन एन० एस० एस० (१९६०-६१)	—	६.५

ग्रामीण-शहरी जनसंख्या

निम्नांकित सारिणी मे ग्रामीण और शहरी जनसख्या का प्रतिशत ब्यौरा तथा उनकी दशवार्षिक वृद्धि की दर दी गई है। इसमे दिखाया गया है कि प्रत्येक १०० व्यक्तियों में ८२ ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं तथा १८ शहरी क्षेत्रों मे। इसमें यह भी दिखाया गया है, कि पिछले दशकों मे शहरी जनसंख्या का अनुपात सम्पूर्ण जनसख्या की तुलना मे बहुत धीरे-धीरे बढ़ा है और यह वृद्धि १९०१ के ११ प्रतिशत से १९६१ तक १८ प्रतिशत तक रही है।

सारिणी ७

पांच वर्ष तथा उससे अधिक आयु के व्यक्तियों की साक्षरता तथा शिक्षा के स्तर का प्रतिशत हिसाब, १९६१

शिक्षा का स्तर	प्रतिशत हिसाब					
	ग्रामीण			शहरी		
	योग	पुरुष	स्त्री	योग	पुरुष	स्त्री
१ निरक्षर	७७ ६	६५ ८	८९ ९	४५ ६	३४ ०	५९ ५
२ बिना किसी शिक्षा स्तर के साक्षर	१५ ७	२३ ५	७ ५	२७ ३	३१.२	२२ ५
३ शिक्षा स्तर के साथ साक्षरता	६ ७	१०.७	२ ६	२७ १	३४ ८	१८ ०
(क) प्राथमिक अथवा निम्न बुनियादी	५.९	९ २	२ ५	१८ ८	२२ ३	१४ ५
(ख) मैट्रिक तथा उससे ऊपर	०.८	१ ५	० १	८.३	१२.५	३ ५
योग	१०० ०	१०० ०	१००.०	१००.०	१०० ०	१००.०

ग्रामीण क्षेत्रों में साक्षरता बहुत नीची है तथा महिलाओं में साक्षरता और भी कम है। श्रेणी ३ में वे साक्षर व्यक्ति हैं जो मान्यताप्राप्त शिक्षा-स्तर के हैं। केवल १०.७ प्रतिशत ग्रामीण पुरुष एवं २ ६ प्रतिशत ग्रामीण महिलाएं इस श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। अगर ये व्यक्ति लिए जाएं, जिनकी शैक्षणिक योग्यता मैट्रिक तथा उससे ऊपर की है, तब केवल १ ५ प्रतिशत ग्रामीण पुरुष तथा ० १ प्रतिशत ग्रामीण महिलाएं इस श्रेणी के अन्तर्गत रखी जा सकती हैं। परन्तु शहरी क्षेत्रों में प्रतिशत हिसाब प्रसंगात्मक रूप से उच्च है, जो क्रमश: १२.५ तथा ३.५ है। लेकिन उन महिलाओं का अखिल भारतीय प्रतिशत हिसाब, जिनकी शैक्षणिक योग्यता मैट्रिक तथा उससे ऊपर है, केवल ०.७ है। यह भारतीय महिलाओं की शिक्षा के निम्न स्तर का परिचायक है।

सारिणी ८

ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में योनभेद के आधार पर कुल जनसंख्या में
काम करनेवालों का प्रतिशत हिसाब, १९६१

	कार्यकर्ताओं की संख्या (लाख में)			कार्यकर्ताओं का प्रतिशत हिसाब कुल जनसंख्या में		
	योग	ग्रामीण	शहरी	योग	ग्रामीण	शहरी
व्यक्ति	१८८६	१६२२	२६४	४३.०	४५.१	३३.५
पुरुष	१२९१	१०६७	२२४	५७.१	५८.२	५२.४
स्त्री	५९५	५५५	४०	२८.०	३१.४	११.१

आर्थिक क्रियाशीलता

पिछले साठ वर्षों के दौरान पुरुष जनसंख्या की क्रियाशीलता का प्रतिमान लगभग एक-सा रहा है, जैसा कि नीचे दी हुई सारिणी में दिखाया गया है। उन व्यक्तियों का अनुपात कम है, जो द्वितीयक तथा तृतीयक क्षेत्रकों में कार्य करते हैं और प्राथमिक क्षेत्रक की प्रधानता है। पिछले दो शतकों में द्वितीयक तथा तृतीयक क्षेत्रकों में कार्य करनेवाले पुरुषों के अनुपात में थोड़ी-सी वृद्धि हुई है, पर नियुक्त महिलाओं के विषय में विशेष कमी आई है।

सारिणी ९

वर्ष	प्राथमिक	द्वितीयक	तृतीयक
१९०१	७०.३७	१२ ३१	१७ ३२
१९५१	६९ ०८	११ ५९	१९ ३३
१९६१	६७ ९८	१२.६८	१९ ३४

विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों के कार्यकर्ता

भारत मे अब भी कृषिप्रधान अर्थव्यवस्था चली जा रही है तथा औद्योगिक नियुक्ति के ढाने में बहुत कम परिवर्तन हुए है। १९६१ की जनगणना के अनुसार औद्योगिक श्रेणियो के कार्यकर्ताओं का प्रतिशत विभाजन नीचे दिया गया है।

सारिणी १०

श्रेणी	प्रतिशतता		
	योग	पुरुष	स्त्री
१. किसान	५२ ८२	५१ ४६	५५.७२
२ खेतिहर मजदूर	१६ ७१	१३.४२	२३.८६
३ खान, खनन, पशुधन, मछली पकड़ना, जगलात, फलोद्यान तथा बगान आदि के कार्यकर्ता	२.७५	३ १०	२.००
४ (क) उत्पादन कार्य : घरेलू	५ ३५	४ ५१	६.८२
(ख) अन्य घरेलू उद्योग	१.१४	१.२०	१.०३
५. उत्पादन कार्य घरेलू के अलावा	४.२२	५ ५६	१.३३
६. निर्माण	१ ०६	१.४१	०.४१
७ व्यापार तथा वाणिज्य	४.०५	५ २६	१.३७
८. परिवहन, संग्रहण तथा संचार	१.५६	२.२८	०.११
९. अन्य सेवाएं	१०.३८	११ ७७	७ ३५
योग	१००.००	१००.००	१००.००

भारत में ५०.० करोड़ की विपुल जनसंख्या है तथा प्रत्येक वर्ष यह लगभग १.१ करोड़ बढ़ जाती है। हमारी वर्तमान जनसंख्या वृद्धि की दर मोटे तौर से २.२ प्रतिशत प्रतिवर्ष है और जब तक जन्मदर अगले २० वर्षों में प्रभावशाली ढंग से घटती नहीं है, तब तक वृद्धि की दर के और भी बढ़ जाने की सम्भावना है। इसका कारण यह है कि ऐसे दृढ़ प्रमाण मिलते हैं जो यह इंगित करते हैं कि मृत्युदर १९८१ तक प्रति एक हज़ार की जनसंख्या पर १० तक गिरने वाली है। हमारी अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है, क्योंकि पुरुष जनसंख्या में सत्तर प्रतिशत इसी पर निर्भर करते हैं। बयासी प्रतिशत जनसंख्या हमारे यहां ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है, जहां शैक्षणिक तथा अन्य सुविधाएं नगण्य हैं। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया ने अभी हमारे देश में अपनी जड़ें नहीं जमाई हैं, जिसका परिणाम यह है कि शहरी तथा ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में जन्मदर ऊंची है। इन सभी कारणों ने हमारे देश के आर्थिक विकास की गति को दबा रखा है और यह योजना तथा नीतियां प्रस्तुत करनेवालों के लिए गम्भीर चिन्ता का कारण है।

अध्याय ४

भारत में विवाह की आयु

यह सामान्य रूप से विदित है कि भारत में बालविवाह बहुत समय से बड़े पैमाने पर होते आए हैं, और इसी के साथ यह आशा की जा सकती है कि विवाह की औसत आयु, विशेष रूप से स्त्रियों के क्षेत्र में बहुत कम होती है। लेकिन यहां इस बात को साफ कर देना आवश्यक है कि विवाह, विशेष कर हिन्दुओं में अधिकांश रूप में एक अटल सगाई से अधिक अर्थ नहीं रहता। बालविवाहों के बाद दोनों पक्ष यानी वरवधू विवाह समारोह के बाद एक साथ नहीं रहते। दाम्पत्य सम्बन्ध का आरम्भ सामान्यतः एक दूसरे समारोह के बाद जिसे 'गौना' या 'विदा' कहते हैं, होता है। विवाह और गौने के बीच के समय में (जो मोटे तौर से उसके तारुण्य तथा उसके सम्भावित मातृत्व की सामाजिक मान्यता के मध्य का समय है) वधु अपने माता-पिता के साथ रहती है। जहां विवाह विलम्ब से होता है तथा दोनों पक्ष बड़े हो चुके होते हैं, जैसा परिवारों में होता है तो गौने का समारोह भी मुख्य विवाह-समारोह के साथ ही किया जाता है।

आजकल प्रचलित धारणा यह है, कि विवाह होने की आयु बढ़ रही है। पर इस अनुमानित झुकाव को विश्वस्त एवं मात्रात्मक ढंग से प्रकाशित तथ्यों के आधार पर मापा नहीं जा सकता, क्योंकि भारत में विवाहों के पंजीकरण की पद्धति नहीं है। पर जनगणना की आयु के आधार वाली नागरिक परिस्थितियों की सूचना के उपयोग से यह गणना करना सम्भव है कि जनगणना में आयु के आधार पर अविवाहित पुरुषों और स्त्रियों का अनुपात क्या है तथा साथ ही यह हिसाब लगाया जा सकता है कि एक निश्चित आयु पर, जैसे पचास वर्ष की आयु पर, विवाह करनेवालों की औसत आयु क्या है। १८९१ तथा १९६१ के दौरान पुरुषों और स्त्रियों की औसत विवाह-कालीन आयु सारिणी ११ में दी गई है।

सारिणी से स्पष्ट है कि १८९१ तथा १९२१ के बीच पुरुषों और स्त्रियों दोनों की औसत विवाहकालीन आयु में वृद्धि हुई है। दशवार्षिक दर में औसत वृद्धि स्त्रियों में ०.३८ वर्ष तथा पुरुषों में ०.३७ वर्ष रही। १९३१ की जनगणना में स्त्रियों

सारिणी ११

		१८९१	१९०१	१९११	१९२१	१९३१	१९४१	१९५१	१९६१
आंध्रप्रदेश	पु०	१८.३०	१९.४५	१८.९८	१९.३२	१६.३८	१७.३७	२०.१४	२२.२१
	स्त्री	१०.३३	१२.१८	१०.८०	११.२२	१०.४५	११.९०	१२.५८	१५.२६
असम	पु०	२३.७६	२३.५७	२३.९१	२३.९८	२१.८५	२३.१७	२३.७५	२५.७३
	स्त्री	१४.५९	१४.९२	१४.८६	१५.३०	१४.२६	१६.३३	१७.०२	१८.५४
बिहार उड़ीसा	पु०	१९.०३	१८.९७	१६.९५	१७.५६	१५.७२	१८.१२	१७.६७	१९.५५
	स्त्री	११.१७	११.४१	११.५८	१२.४८	११.२३	१३.४२	१४.३०	१४.८१
गुजरात महाराष्ट्र	पु०	१८.५५	१९.९७	२०.१२	२०.५९	१९.२०	२०.६१	२१.९१	२२.४२
	स्त्री	१०.९४	१२.६०	११.९४	१२.४८	१२.२५	१४.२६	१५.६६	१५.७४
केरल	पु०	——	२३.०४	२३.३५	२४.२२	२३.२९	——	२५.६७	२६.०५
	स्त्री	——	१७.३७	१७.७४	१७.२१	१७.६०	——	२०.०६	१९.६८
मध्य प्रदेश	पु०	१८.२४	१८.३८	१७.८८	१७.५२	१५.६९	१८.७५	१९.१२	१८.३७
	स्त्री	१२.६७	१२.९७	११.६०	१२.०६	१०.७१	१३.८५	१४.२४	१३.८७
मद्रास	पु०	२३.२१	२३.८१	२३.००	२३.१७	२२.०६	२३.३६	२३.५८	२५.१५
	स्त्री	१४.४१	१५.२५	१५.०८	१५.३१	१४.९२	१६.१३	१७.१८	१८.१४
मैसूर	पु०	२४.१२	२४.२८	२४.२४	२४.९२	२३.८३	२४.६३	२५.४८	२४.४४
	स्त्री	१४.१४	१५.१४	१५.२१	१५.२२	१४.५५	१६.१७	१६.२०	१६.३३
पंजाब	पु०	२२.१८	२१.९४	२१.७९	२२.१५	२१.४१	२०.५९	२१.६९	२१.७३
	स्त्री	१३.१७	१५.०४	१४.६४	१५.१२	१५.१६	१५.४३	१६.३२	१७.४६
राजस्थान	पु०	२०.१६	१९.७०	२१.००	२०.४३	१८.४१	१८.६९	१८.७१	१९.०९
	स्त्री	१२.९८	१३.६७	१२.९६	१३.१३	१२.४१	१३.५४	१४.२४	१४.२२
उत्तर प्रदेश	पु०	१८.१७	१७.६५	१७.७८	१८.२८	१६.६५	१८.१६	१८.१८	१८.७५
	स्त्री	१२.२८	१२.२७	१२.२३	१२.४२	११.६९	१३.०८	१३.७६	१४.४३
प० बंगाल	पु०	१९.०३	१८.९७	२०.७९	२१.४९	१८.७५	२१.६०	२२.०१	२४.१८
	स्त्री	११.१७	११.४१	११.६८	१२.२७	१०.७१	१३.२४	१४.६६	१५.८६
भारतवर्ष	पु०	१९.५५	२०.०१	२०.२६	२०.६९	१८.६२	१९.९१	१९.८९	२१.५९
	स्त्री	१२.५४	१३.१४	१३.१६	१३.६७	१२.६९	१४.६९	१५.५९	१५.८३

और पुरुषों की औसत विवाह कालीन आयु में विशेष गिरावट देखी गई जिसका कारण सम्भवतः १९२९ में बालविवाह निरोधक कानून का पारित किया जाना था। सामान्य रूप से अपने प्रस्तुतकर्ता श्री हरि बिलास सारदा के नाम पर सारदा अधिनियम के नाम से परिचित यह कानून भारत की व्यवस्थापिका सभा में १९२७ में रखा गया तथा २८ सितम्बर १९२९ में पारित किया गया, और इसे १ अप्रैल, १९३० से लागू किया जाना था। सारदा एक्ट के पारित होने तथा उसके वास्तविक कार्यान्वयन के बीच की अवधि में जनता ने व्यापक स्तर पर बाल-विवाह कराए, जिसका परिणाम यह हुआ कि विवाह की आयु के औसत में तीव्र गिरावट आ गई। परन्तु १९३१ के पश्चात स्त्रियों के विवाह की आयु की
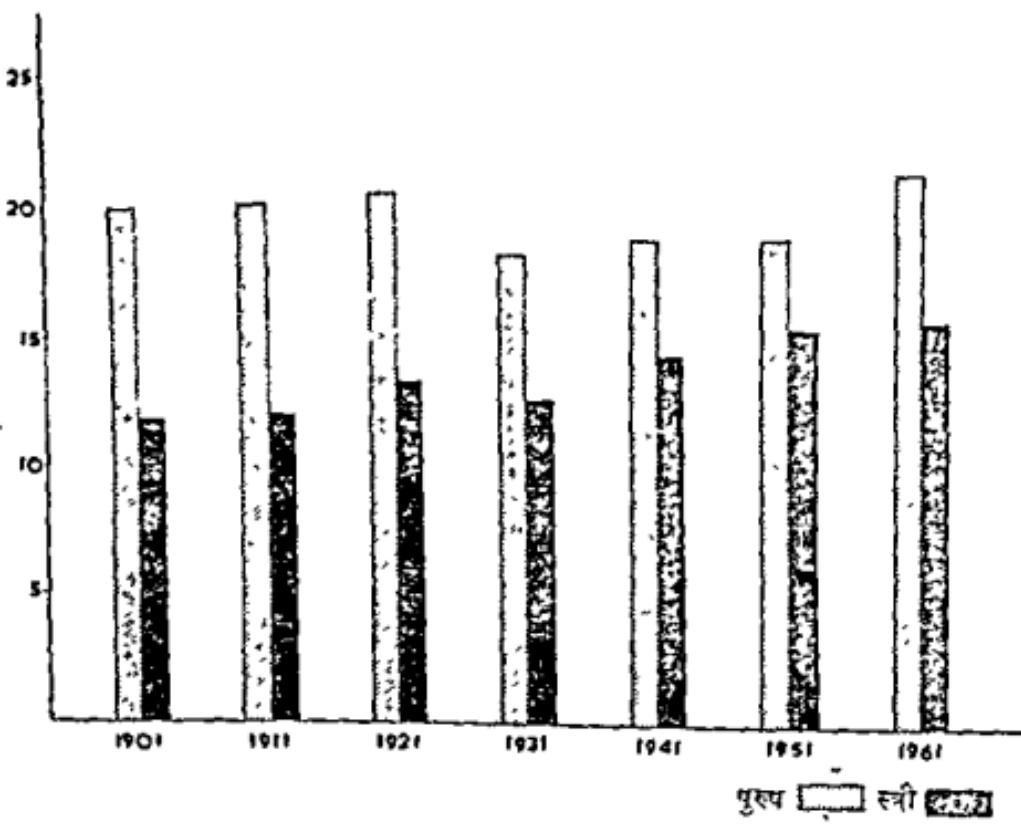
रेखाचित्र १. यौन भेद के आधार पर विवाह की औसत आयु

प्रवृत्ति बढ़ने की ओर रही है और अब (१९६१ जनगणना) यह १६ वर्ष के लगभग है। फिर भी भारत के पांच राज्यों में यानी राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार और उड़ीसा में यह अब भी वैधानिक रूप से निर्धारित न्यूनतम आयु से कम है।

भारत में १९६१ में पुरुषों की विवाह की औसत आयु २२ वर्ष थी। उल्लिखित कारणों से १९३१ में तीव्र गिरावट आने पर भी १८९१ तथा १९५१ के मध्य की अवधि में पुरुषों की विवाह की आयु का औसत २० वर्ष के लगभग रहा है। पिछले ३० वर्षों में अर्थात् १९३१-६१ पुरुषों और स्त्रियों के विवाहों में वयवृद्धि का मुख्य कारण बालविवाहों की कमी है। उदाहरण के लिए २८९१-१९०१ के दशक में २७ प्रतिशत लड़कियों का विवाह १४ वर्ष तक की अवस्था में हुआ, जबकि १९५१-६१ के दशक में केवल २० प्रतिशत इस प्रकार से ब्याही गई। इसी प्रकार १८९१-१९०१ के दशक में दस वर्ष तक की अवस्था की लड़कियों के विवाह ११ प्रतिशत हुए, जब कि १९५१-६१ के दशक में इस प्रकार से ब्याही लड़कियों का प्रतिशित हिसाब नाममात्र रहा।

औसत विवाहकालीन आयु के क्षेत्रीय अन्तरों को देखकर कहा जा सकता है कि भारत के दक्षिणी राज्यों, यानी आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, केरल, महाराष्ट्र, तथा मद्रास में विवाह की आयु उत्तर के राज्यों से अधिक है। परन्तु विवाह की सबसे कम आयु बिहार, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, राजस्थान और उत्तर प्रदेश में पाई जाती है। यह मोटे तौर से पुरुषों और स्त्रियों दोनों की वैवाहिक आयु के लिए सत्य है।

धार्मिक समूहों में विवाह की आयु

भारत में धार्मिक समूहों में विवाह की औसत आयु में अन्तर बहुत स्पष्ट है। कुल मिलाकर ईसाइयों में विवाह की औसत आयु सबसे अधिक है, और उसके पश्चात क्रमशः सिख, मुसलमान तथा हिन्दू लोग आते हैं। यह स्त्रियों और पुरुषों दोनों के लिए सत्य है। यदि हम १८९१-१९३१ के औसत को ले तो जैनियों और मुसलमानों की विवाह की आयु का औसत लगभग एक ही है, पर यदि हम १९३१ के अंकों को न सम्मिलित करें, तो मुसलमानों के विवाह की औसत आयु बढ़ जाती है (सारिणी १२)। पुरुषों में अन्तर (जिनका अधिकतम अन्तर केवल २.५ वर्षों का है) महिलाओं की अपेक्षा कम प्रखर है, जिसमें अधिकतम अन्तर ४.७ वर्षों का है। रोचक तथ्य यह है कि यह अन्तर सभी राज्यों में उसी अनुपात में पाया जाता है, जिससे यह संकेत प्राप्त होता है कि क्षेत्रीय अन्तर धार्मिक समूहों के अन्तर से वज़नदार पड़ता है।

सारिणी १२

भारत के विभिन्न धार्मिक समूहों में विवाह की औसत आयु, १८६१-१६३१

		१८६१	१६०१	१६११	१६२१	१६३१
ईसाई	पुरुष	२४.४	२४.२	२४ १	२३ ७	२२ ६
	स्त्री	१६.६	१७ २	१७ २	१७ ५	१७ २
सिग्ग	पुरुष	१८ ६	२१ २	२१ ८	२२ ७	२१ ५
	स्त्री	१२ ४	१४ ४	१४ ३	१४ ६	१५ ७
मुसलमान	पुरुष	२० ६	२१ २	२१ ५	२१.७	१६.४
	स्त्री	१३.१	१३ ७	१३ ५	१३ ८	१२ ७
जैन	पुरुष	१६.६	१६.६	२०.८	२१ ५	२० ४
	स्त्री	१२.३	१३.४	१३.१	१३ ६	१३.५
हिन्दू	पुरुष	१६.३	१६.५	१६.६	२० ०	१८ ५
	स्त्री	१२.१	१२.८	१२ ४	१२ ६	१२ ३

जाति के आधार पर विवाह की आयु

भारत में जाति के आधार पर विवाह की आयु में अन्तर अत्यन्त प्रखर हैं। कुल मिला कर पिछड़ी हुई जातियों के विवाहों की औसत आयु सब से कम है, जिनके बाद क्रमश. ब्राह्मण, योद्धा जातिया तथा व्यवसायिक जातियां आती हैं, हा अत्यन्त दक्षिणी (मैसूर, मद्रास तथा केरल) राज्य अपवाद हैं, जहा ब्राह्मण स्त्रियो के विवाह की औसत आयु सबसे कम है। व्यवसायी तथा योद्धा जातियों की स्त्रियों की औसत विवाह आयु लगभग एक ही हैं, इसी प्रकार से ब्राह्मणों तथा पिछड़ी हुई जातियो की स्त्रियों की विवाह आयु का औसत भी बहुत ही निकट है। जातियों के दोनो जोड़ों मे अन्तर मोटे तौर से एक वर्ष का है। यह बात ध्यान देने की है कि केरल, मद्रास और मैसूर की कुछ जातियों को छोड़कर १६०१-१६३१ की अवधि में सभी जातियों की स्त्रियो के विवाह की औसत आयु सारदा अधिनियम मे निर्धारित न्यूनतम सीमा १४ वर्ष से कम थी। जैसा कि ऊपर बताया गया है कि अत्यन्त दक्षिणी राज्यों में सामान्य रूप से तथा विशेष रूप से केरल मे स्त्रियों के विवाह की आयु उच्चतर है।

विभिन्न जातियो मे पुरुषो के विवाह की औसत आयु की सामान्य प्रक्रिया उसी

प्रकार की है जैसी स्त्रियों की, सिवाय पिछड़ी हुई जातियों के, जिनमें विवाह की औसत आयु सबसे कम है। शेष तीनों जातियों की लगभग विवाह की एक ही औसत आयु है तथा तीनों में अधिकतम अन्तर केवल ०.६ वर्षों का है।

ग्रामीण और शहरी विवाहों की औसत आयु में महत्वपूर्ण अन्तर के लक्षण अब दिखाई पड़ने लगे हैं। १९६१ की जनगणना ने यह स्पष्ट रूप से सिद्ध कर दिया है कि शहरी क्षेत्रों में विवाह की आयु का औसत २-३ वर्षों तक अधिक है। यह एक महत्वपूर्ण प्रगति है क्योंकि यह ज्ञात है कि विवाह के समय अधिक आयु होने से प्रसवन शक्ति की प्रवृत्ति घटने लगती है जिससे जन्मदर नीचे जाती है। भारत में यह देखा गया है कि उनके मुकाबले जिनका विवाह पहले होता है; उन स्त्रियों की कुल मिला कर प्रवसन शक्ति कम होती है, जो १९-२० की आयु के बाद विवाह करती हैं। गणना के द्वारा यह ज्ञात होता है कि यदि भारत में स्त्रियों के विवाह की आयु १९ वर्षों तक बढ़ा दी जाती है तथा किसी स्त्री को २० वर्ष की आयु से पूर्व शिशु जन्म की आशा न हो, तो २५ वर्षों[1] की अवधि में जन्म के दर में लगभग ४० प्रतिशत की कमी आ सकती हैं। इसीलिए भारत के शहरी क्षेत्रों में स्त्रियों के विवाह की आयु की अधिकता, से जन्मदर के घटने की प्रवृत्ति आ सकती है। देश के परिवार नियोजन कार्यक्रम के लिए एक महत्वपूर्ण प्रगति होगी तथा जन्म के सम्बन्ध में विश्वस्त आंकड़े एकत्रित करना उपादेय होगा, जिससे यह पता लगाया जा सके कि क्या शहरी क्षेत्रों में जन्मदर की प्रवृत्ति घटने की ओर है।

---

१. अग्रवाल, एस० एन०, "इफेक्ट आफ ए राइज इन फीमेल एज ऐट मैरेज आन बर्थरेट इन इण्डिया", विश्व जनसंख्या सम्मेलन, बेलग्रेड, १९६५ में प्रस्तुत पेपर तथा "पेपर्स प्रेजेन्टेड टू द १९६५ वर्ल्ड पापुलेशन कॉनफरेन्स", नई दिल्ली : रेजिस्टार जेनरल का कार्यालय, भारत, १९६५ में प्रकाशित।

अध्याय ५

भारत में पुरुष और स्त्री का मिलन कितनी अवधि तक प्रजनन समृद्ध रहता है ?

प्रजननशक्ति के बारे में ज्ञात है कि यह इन घटकों पर निर्भर रहती है (१) स्त्री के विवाह की आयु (२) वह अवधि जब वे प्रजनन कर पाते हैं तथा (३) वह वेग जिससे वे परिवार की रचना करते हैं। इनमें से पहली समस्या की विवेचना पिछले अध्याय में की जा चुकी है। वर्तमान अध्याय में दूसरी समस्या की व्याख्या की जाएगी।

प्रजनन सम्पर्क का प्रारम्भ 'प्रभावशाली' विवाह यानी गौना से होता है तथा इसकी समाप्ति वैधव्य, विधुरता, पृथक्करण, विवाह-विच्छेद अथवा ५० वर्षों की अधिकतम प्रजनन आयु के पार होने पर होती है। पृथक्करण तथा विवाह-विच्छेद की घटनाएं भारत में नगण्य होने के कारण तथा इस सम्बन्ध में विश्वस्त सूचनाओं के अभाव में इनकी उपेक्षा की जा सकती है। अस्तु प्रजनन सम्पर्क की अवधि को कम करने का मुख्य कारण वैधव्य तथा विधुरता का अधिक घटित होना तथा विधवाओं के पुन. विवाह पर लगे हुए वर्तमान प्रतिबन्ध हैं। परन्तु विवाहित साथियों में से एक की मृत्यु से टूटे हुए प्रजनन सम्पर्क का पुनरारम्भ जीवित साथी के पुनर्विवाह से हो सकता है। इन कारणों को ध्यान में रख कर ही उस अवधि को निर्धारित किया गया है जिसके दौरान एक औसत दम्पति प्रजनन सम्पर्क में रहता है तथा जब उसके गर्भाधारण की आशंका बनी रहती है।

वैधव्य की आयु

जनगणना के आंकड़ों की सहायता से वैवाहिक स्थिति की आयु के आधार पर की गई गणनाओं से यह पता चलता है कि १९५१-६१ के दशक में ५० वर्ष तक की आयु में विधवाओं की औसत वैधव्य आयु ३८.३ थी। पर १९२१-३१ तथा १९४१-५१ के दशकों में यह ३६ वर्ष के आस पास थी, तथा १९११-२१ और १९३१-४१ के दशकों में यह ३३ वर्षों के आस-पास थी। १९११-२१ दशक में औसत वैधव्य आयु

में ह्रास का कारण इन्फलुएंजा का संक्रमण तथा उसके बाद का प्रथम विश्वयुद्ध हो सकता है, तथा १९३१-४१ में २९-३० के बालविवाहों की अधिकता के फलस्वरूप होनेवाली बाल विधवाओं की अधिकता हो सकती है। वैधव्य की औसत आयु के हाल में ऊपर जाने का कारण, मृत्युदर में सुधार है।

सारिणी १३

पचास वर्ष की आयु तक विधवा होने वालों की औसत वैधव्य आयु
भारत तथा राज्य, १९०१-११, १९५१-६१

	१९०१-११	१९११-२१	१९२१-३१	१९३१-४१	१९४१-५१	१९५१-६१
आंध्र प्रदेश	३६.६	३१.२	३६.१	२९.८	३८.२	३७.९
असम	३१.९	३३.१	३५.८	३२.६	३५.०	३६.९
बंगाल	३२.८[१]	३२.२	३४.८	३१.६	३५.४	३५.९
बिहार, उड़ीसा	३३.१[१]	३३.६	३६.९	३५.१	३३.०	४०.६
बम्बई[२]	३७.९	३३.०	३७.८	३४.०	३७.०	३२.७
कश्मीर	३६.१	३४.७	३६.२	३५.३	—	४०.२[४]
केरल[३]	३०.८	३४.२	३६.२	३३.४	३४.९	३९.५
मध्य प्रदेश	३७.९	३३.९	३८.६	३५.४	३४.७	४०.४
मद्रास	३४.४	३०.९	३६.३	३२.१	३४.८	३८.८
मैसूर	३३.२	२७.२	३५.१	३५.२	३६.०	३९.०
पंजाब	३२.४	३६.३	३६.५	३४.५	३७.१	३९.३
राजस्थान	३८.३	३१.९	३६.२	३६.१	३४.९	३९.२
उत्तर प्रदेश	३४.३	३५.४	३८.०	३६.५	३७.८	३९.५
भारत	३४.४	३३.१	३६.६	३२.५	३५.७	३८.३

१. १९०१ जनगणना की संख्याएं बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा की संयुक्त संख्याएं हैं।

२. भूतपूर्व बम्बई राज्य की संख्याएं दी गई हैं—अर्थात् महाराष्ट्र और गुजरात की संयुक्त संख्याएं।

३. १९५१ तक की संख्याएं भूतपूर्व तिरुवांकुर-कोचीन राज्य की हैं।

४. संख्या १९६१ की जनगणना की है।

यह पाया गया है कि प्रत्येक १००० लड़कियों में से, जिनका विवाह ०-४ वर्ष की आयु के बीच में होता है, लगभग ३० से ५० तक विधवा हो जाती है। अगले पच-वर्षीयोत्तर आयु वर्ग में प्रत्येक १००० विवाहित लड़कियों में से ४० से ६० तक विधवा हो जाती हैं।

१०-१४ वयवर्ग में वैधव्य २०-४० प्रति १००० विवाहित स्त्रियों में घट जाता है, तथा इसके पश्चात इसमे बराबर वृद्धि होती है, तथा ५०-५५ के आयुवर्ग तक, मोटे तौर से प्रति हजार में ५००-६०० विधवा हो जाती है। प्रारम्भिक आयु वर्गों में वैधव्य की घटनाएं अधिक होती है, १०-१४ के आयुवर्ग मे उनका ह्रास होना है तथा इसके बाद आयुवर्ग के बढ़ने के साथ-साथ वैधव्य में वृद्धि वास्तव में भारत में स्थित पुरुषो की मृत्युदर के ढांचे के अनुरूप है।

धर्म के आधार पर वैधव्य की आयु

केवल १९३१ की जनगणना तक धर्म के आधार पर वैवाहिक स्थिति सम्बन्धी जनगणना के आंकड़े मिलते है। वैसे धर्म के आधार पर १९४१, १९५१ तथा १९६१ में सूचनाएं एकत्रित की गई थी, पर वैवाहिक स्थिति के आधार पर उन्हें सारिणीबद्ध नहीं किया गया था। इसलिए धर्म के आधार पर वैधव्य की औसत आयु का अध्ययन केवल १९२१-३१ के दशक तक किया जा सकता है।

यह पाया जाता है कि ईसाईयों में वैधव्य की औसत आयु सबसे उच्च है, उसके बाद क्रमश: मुसलमान, हिन्दू, सिख तथा जैन आते हैं। वास्तव में एक ओर ईसाईयों और मुसलमानों की तथा दूसरी ओर हिन्दुओं और सिखों की वैधव्य आयु में काफी निकटता है। जैनियों और बौद्धों की वैधव्य आयु भी निकट है (सारिणी १४)। सम्भव है ऐसा इसलिए है कि ईसाइयों और मुसलमानों में विधवाओं के पुर्नविवाह पर कोई धार्मिक या सामाजिक प्रतिबन्ध नहीं है, जब कि अन्य धार्मिक वर्गों में कुछ प्रतिबन्ध हैं।

यह दिलचस्प है कि सभी धार्मिक वर्गों मे १९११-२१ वाले दशक मे औसत वैधव्य आयु मे ह्रास हुआ है। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, इसका कारण १९१८ की इन्फ्लुएंजा महामारी थी, जिसमें मृत्युदर मे भारी वृद्धि हो गई थी। बाल विवाह निरोधक कानून का प्रभाव सारिणी मे प्रतिफलित नही है क्योंकि १९३१-४१ के दशक के आंकड़े प्राप्त नहीं है।

सारिणी १४

पचास वर्ष तक की आयु तक विधवा होने वाली स्त्रियों की धर्म के आधार पर औसत वैधव्य आयु, भारत, १९०१–११, १९२१–३१

	१९०१–११	१९११–२१	१९२१–३१	औसत
हिन्दू	३५.३	३२.८	३६.६	३४.९
मुसलमान	३५.५	३४.०	३६.६	३५.४
ईसाई	३५.७	३४.९	३७.०	३५.९
सिक्ख	३३.२	३४.०	३५.८	३४.३
जैन	३२.८	२९.६	३३.९	३२.१

प्रजनन संपर्क की औसत अवधि

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, प्रजनन सम्पर्क की अवधि का अर्थ वह समय होता है, जो कि एक स्त्री अपने प्रभावशाली विवाह यानी गौना तथा अपने वैधव्य अथवा ५० वर्ष की अधिकतम प्रजनन आयु के बीच व्यतीत करती है। यह विदित है कि भारत में पति तथा पत्नियां विवाह समारोह के तुरन्त बाद एक साथ रहना प्रारम्भ नहीं करते हैं, विशेष रूप से जब विवाहित दम्पति कम उम्र होता है। एक और समारोह होता है जिसे 'गौना' या 'विदा' कहते हैं, जिसके पश्चात् प्रभावशाली वैवाहिक जीवन का सूत्रपात होता है। दुर्भाग्यवश भारत में गौने की आयु के सम्बन्ध में आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। पर इस धारणा पर एक मोटी गणना की गई है कि जिनका विवाह १५ वर्ष या अधिक आयु में होता है, उनका गौना विवाह के समय पर ही हो जाता है तथा जिनका विवाह १५ वर्ष से कम की आयु में होता है, उनका गौना १५ वर्ष की आयु में कर दिया जाता है। इस प्रकार से गौने की औसत आयु मोटे तौर से १७ वर्ष होती है।[१]

१. अगरवाल [illegible] "मीन ड्यूरेशन आफ फर्टाइल यूनियन इन इण्डिया [illegible]", [illegible] पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन की कार्यवाहियाँ [illegible], [illegible], पृ० सं० [illegible]।

प्रजनन सम्पर्क, जो भारत में १७ वर्ष की औसत आयु में प्रारम्भ होता है, या तो पति की मृत्यु से (वैधव्य) अथवा पत्नी की मृत्यु से (विधुरता) भंग होता है। यह सम्पर्क विवाहित स्त्री के ५० वर्ष की अधिकतम प्रजनन आयु पार करने पर भी समाप्त होता है। उस आयु के जानने के पश्चात, जब कि एक औसत दम्पति प्रजनन सम्पर्क को वैधव्य या विधुरता के कारण छोड़ चुके हैं, वैधव्य तथा विधुरता के प्रभाव की भी गणना की जा चुकी है। ३३ वर्ष की एक पूर्ण अवधि (५० और १७ वर्षों की आयु में अन्तर) को भी उन लोगों के लिए जोड़ा गया है, जो निरन्तर विवाहित जीवन व्यतीत करते हैं। यह पाया गया है कि मोटे तौर से २५ से ३० प्रतिशत विवाहित स्त्रियों

रेखाचित्र ४. विभिन्न दशकों में प्रजनन सम्पर्क की औसत अवधि
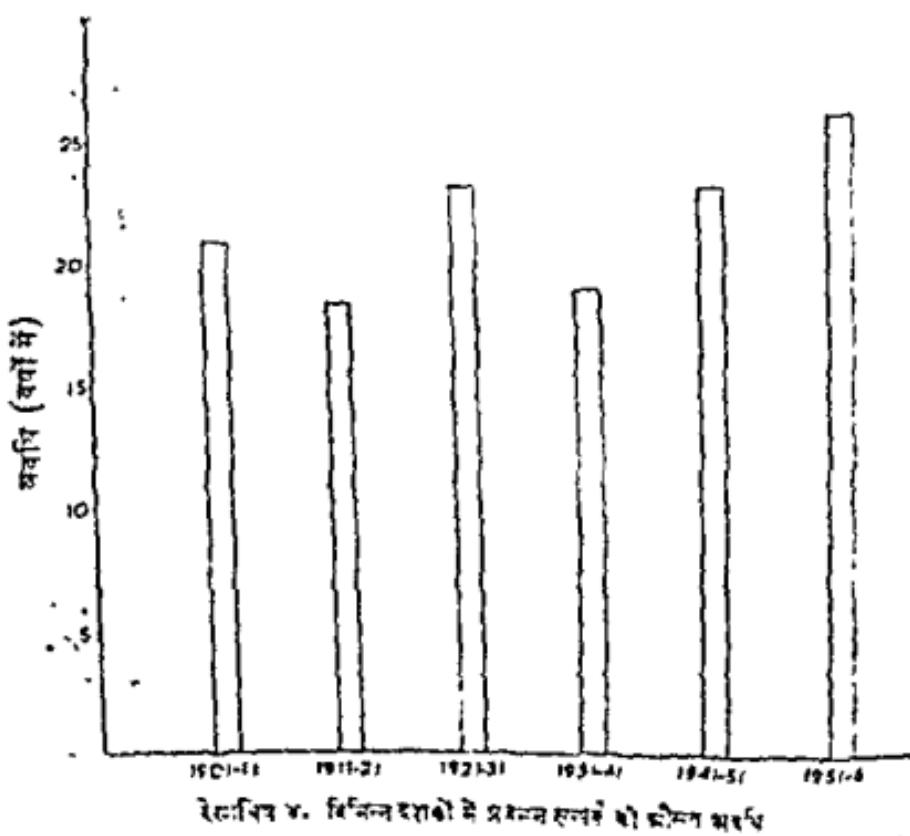
का पुनर्विवाह हो जाता है।[1]

विधवा के पुनर्विवाह के कारण जितने औसत वर्ष बढ़ जाते हैं, उन्हें जोड़ दिया गया है। गणनाओं से प्रगट होता है कि १९५१-६१ में एक विवाहित स्त्री औसतन २६ वर्ष प्रजनन सम्पर्क में व्यतीत करती है, जब कि ५० वर्ष पहले की भारतीय स्त्री केवल २१ वर्ष व्यतीत करती थी (सारिणी १५)। इस वृद्धि का कारण मृत्यु-दर में सुधार है।

सारिणी १५

भारत में प्रजनन सम्पर्क की औसत अवधि, १९०१-११—१९५१-६१

दशक	प्रवेश पर औसतन आयु	प्रजनन सम्पर्क छोड़ने की औसत आयु	औसत अवधि (वर्षों में)
१९०१–११	१७.१	३८.१	२१.०
१९११–२१	१७.०	३५.६	१८.६
१९२१–३१	१७.१	४०.४	२३.३
१९३१–४१	१७.१	३६.०	१८.९
१९४१–५१	१७.०	४०.०	२३.०
१९५१–६१	१७.०	४२.९	२५.९

१. अग्रवाल की खोज के अनुसार दिल्ली के गांवों में ३७.७ प्रतिशत, सहारनपुर जिले में ३४.३ प्रतिशत, रोहतक जिले में २५.२ प्रतिशत तथा मथुरा जिले में २३.० प्रतिशत विधवाओं का पुनर्विवाह होता है। देखिए अग्रवाल, एस० एन०, "विडो रीमैरेजेस इन इण्डिया", मेडिकल डाइजेस्ट, भाग ३०, संख्या १०, १९६२, पृ० सं० ५४९-५५८; और "विडो रीमैरेजेस इन सम रूरल एरियाज आफ नार्दर्न इण्डिया", दिल्ली : इन्स्टीट्यूट आफ इकनोमिक ग्रोथ, १९६६, पृ० सं० १८ (मिमियोग्राफ्ड)।

अध्याय ६

भारत में प्रजनन सामर्थ्य

सामान्य रूप से महिलाओं के बच्चे १५ से ५० वर्ष की आयु के बीच में ३५ वर्ष की अवधि तक होते हैं। वैसे जीवविज्ञान की दृष्टि से १५ वर्ष की अवस्था मे विवाहित स्त्री अगले ३५ वर्षों तक निरन्तर वैवाहिक जीवन व्यतीत करती हुई १४-१५ बच्चों को जन्म दे सकती है, पर आधुनिक समय मे कुल मिलाकर विरली ही स्त्रिया १० बच्चों से अधिक की मा बनती हैं। उन समूहों में जो अधिकतम प्रजनन के लिए ज्ञात हैं यानी उदाहरणार्थ हटराइटों के औसत मे ९ बच्चे होते है, तथा मलय देश के वश की कोकोस टापू पर रहने वाली स्त्रिया औसत मे ८.४ बच्चों को जन्म देती हैं। क्यूबेक की ग्रामीण स्त्रियों के ९.९ बच्चे होते हैं तथा ब्राजील में ८.८ बच्चे। चीनियों और मुसलमानों मे औसत मे ७ या ८ बच्चे होते हैं। इस तुलना में भारतीय स्त्रियो की ६.८ बच्चों की प्रजनन शक्ति तुलनात्मक रूप से नीची है।

अखिल-भारतीय आधार पर प्रसवन सम्बन्धी आकड़े अप्राप्य हैं। भारत में १९११, १९२१ तथा १९३१ की जनगणनाओ मे प्रसवन सम्बन्धी खोज केवल छोटे क्षेत्रों तक सीमित थी। १९५१ की जनगणना के समय प्रसवन सम्बन्धी आंकड़े तिरुवांकुर-कोचीन, पश्चिमी बंगाल तथा मध्य प्रदेश मे एकत्रित किए गए थे, पर केवल तिरुवांकुर-कोचीन के आकड़े यथोचित विश्वस्त हैं। १९६१ की जनगणना के समय रजिस्ट्रार-जेनरल के कार्यालय ने पजीकरण अध्ययन का कार्य चलाकर प्रसवन के आंकड़े एकत्रित किए, पर इसका पूर्ण विवरण अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ है। बहुत से सर्वेक्षणो मे भी जन सूचनाए मिलती हैं, पर वे भी अखिल भारतीय चित्र नहीं प्रस्तुत करते है। फिर भी प्राप्त सूचनाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि एक भारतीय स्त्री, यदि उसके वैवाहिक जीवन मे कोई बाधा नहीं पड़े, तो औसतन ६ से ८ बच्चों को जन्म देती है (सारिणी १६)। सारिणी से यह भी स्पष्ट है कि शहरी क्षेत्रो मे प्रसवन ग्रामीण क्षेत्रों मे कम नही है। वास्तविकता तो यह है कि जब कि शहरी क्षेत्रों मे विस्तार ६.२ तथा ७.८ बच्चों के बीच है ग्रामीण क्षेत्रों के यह ६.० तथा ७.१ के बीच है। प्रसवन मे ग्रामीण-शहरी अन्तर की अनुपस्थिति

भारत में आश्चर्यजनक नहीं है, इस तथ्य को देखते हुए कि वे कारण जो इसमें अन्तर डालते हैं, अभी शहरी क्षेत्रों में क्रियाशील नहीं हुए हैं।

सारिणी १६

प्रति स्त्री जीवित बच्चों के जन्म की औसत

सर्वेक्षण		बच्चों की औसत संख्या	
		ग्रामीण	शहरी
जनगणना के आंकड़े			
तिरुवांकुर-कोचीन	(१९५१)	६.६	६.४
पूर्वी मध्य प्रदेश	(१९५१)	६.१	६.३
पश्चिमी बंगाल	(१९५१)	६.०	—
पंजीकरण के आंकड़े			
उत्तर प्रदेश के सात जिलों में प्रतिदर्श जनगणना	(१९५२-५३)	६.२	—
पंजीकरण के आंकड़े	(१९६१)	—	६.६
सर्वेक्षण			
राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण १६ वां दौर	(१९६०-६१)	—	६.५
मैसूर सर्वेक्षण	(१९५२)	६.०	६.२
कानपुर और लखनऊ सर्वेक्षण	(१९५१)	—	७.८
दिल्ली सर्वेक्षण	(१९५८-६०)	७.१	—

धर्म के अनुसार प्रसवन के आंकड़े

धर्म के आधार पर प्रसवन के अन्तर पर आंकड़े केवल स्थानीय सर्वेक्षणों से प्राप्त हैं, इसीलिए एक अखिल-भारतीय चित्र पाना सम्भव नहीं है। इतने पर भी सभी सर्वेक्षणों में यह पाया गया है कि भारत में मुसलमानों में प्रसवन हिन्दुओं से अधिक है। उदाहरण के लिए, कानपुर के सर्वेक्षण में श्री मजूमदार को ज्ञात हुआ कि

मुस्लिम महिलाओं की प्रसवन सामर्थ्य हिन्दू स्त्री की तुलना में जिनकी प्रसवन शक्ति ७.० है ८.० है।[1] श्री ड्राइवर ने मध्य भारत में पाया कि एक मुस्लिम स्त्री औसतन ४.६ बच्चों को जन्म देती है एक औसत हिन्दू स्त्री के विपरीत जो ४ ५ बच्चों को जन्म देती है।[2] मैसूर के सर्वेक्षण में पाया गया कि जब कि नगरों में रहनेवाली मुस्लिम स्त्री ६.७ बच्चों को जन्म देती है, तो हिन्दू स्त्री केवल ५ २ बच्चों को जन्म देती है। इस प्रकार के मैसूर के ग्रामीण क्षेत्रों की मुस्लिम स्त्री ५ ० बच्चों को जन्म देती है, जब कि हिन्दू स्त्री केवल ४ ८ बच्चों को जन्म देती है।[3] मुस्लिम स्त्रियों में अधिक प्रसवन का कारण यह हो सकता है कि उनके यहाँ विधवाओं के पुनर्विवाह पर प्रतिबन्ध नहीं है जब कि हिन्दुओं के यहाँ है।

शिक्षा-स्तर का प्रसवन से सम्बन्ध

साधारणतया औपचारिक शिक्षा का एक उच्च स्तर निम्न प्रसवन से सम्बद्ध समझा जाता है। मैसूर के सर्वेक्षण से यह तथ्य सामने आया है कि बंगलौर नगर की १५ वर्ष से अधिक आयु की स्त्रियों ने जो या तो निरक्षर थीं या महज लिख-पढ़ सकती थीं अथवा मिडिल स्कूल के स्तर तक शिक्षित थीं, ५ ३ तथा ५ ५ के बीच बच्चों को जन्म दिया। पर उन स्त्रियों ने, जिनकी शिक्षा का स्तर हाई स्कूल या उससे अधिक था, केवल ३ ६ बच्चों को जन्म दिया। इस प्रकार से राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण से यह तथ्य सामने आया, कि अशिक्षित या प्राथमिक स्तर तक शिक्षित स्त्रियों के जीवित बच्चों की औसत संख्या ६.६ थी, जब कि उन्होंने जिनकी शिक्षा मिडिल, मैट्रिक तथा विश्वविद्यालय स्तर तक थी क्रमशः ५.०, ४.६, तथा ३.० बच्चों को जन्म दिया। इससे यह स्पष्ट है कि उन भारतीय महिलाओं की प्रसवन-शक्ति निम्न है, जिनकी शिक्षा का स्तर मैट्रिक या उससे उच्च है।

विवाह के आधार पर प्रसवन सामर्थ्य

भारत में इस के लिए समुचित प्रमाण है कि वे स्त्रियाँ जो देर में विवाह करती हैं, विशेषतया १६ वर्ष की आयु के बादवादी करती उनकी प्रसवन सामर्थ्य

१. मजूमदार, डा० एन०, "सोशल कोन्टुअर्स आफ इन्डस्ट्रियल सिटी", पृष्ठ १७८
२. ड्राइवर, ई० डी०, "डिफरेंशियल फर्टिलिटी इन सेन्ट्रल इन्डिया", पृष्ठ ६८
३. यूनाइटेड नेशन्स, "द मैसूर पापुलेशन स्टडी", पृष्ठ १२०

उनसे कम होती है, जो जल्दी विवाह करती हैं। उदाहरणार्थ मैसूर के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वे ग्रामीण स्त्रियां, जो १४ और १७ वर्ष की आयु के मध्य विवाह करती हैं, ५.६ बच्चों को जन्म देती हैं, पर वे जो १८ से २१ वर्ष के बीच विवाह करती हैं, केवल ४.७ बच्चों को जन्म देती हैं।[१] श्री मजूमदार के कानपुर के सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि वे स्त्रियां जिनके विवाह १५ वर्ष तक की आयु में होते हैं, ६.६ बच्चों को जन्म देती हैं, जब कि वे, जो १६ वर्ष की आयु के बाद विवाह करती हैं, केवल ६.० बच्चों को जन्म देती हैं।[२] कलकत्ता[३], मद्रास[४], लखनऊ तथा दिल्ली[५] में किए गए अध्ययन में पाया गया है कि १६ वर्ष की आयु के बाद विवाह करनेवाली स्त्रियों की प्रसवन सामर्थ्य लगभग ०.५ या १.० बच्चों तक होती है। भारत के रजिस्ट्रार जेनरल ने भी यह पाया है कि उन स्त्रियों की प्रसवन शक्ति, जिनका विवाह अठारह वर्ष की आयु तक होता है उनकी अपेक्षा, जिनका विवाह इस आयु के बाद होता है[६], अधिक होती है। उदाहरणार्थ पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में जिन स्त्रियों का विवाह १८ वर्ष की आयु से पूर्व होता है, ५.७ बच्चों को जन्म देती हैं उनके विपरीत जो १८-२२ की आयु के बीच में विवाह करती हैं तथा ५.२ बच्चों को जन्म देती हैं तथा जो २३ वर्ष की आयु के बाद विवाह करती हैं ४.४ बच्चों को जन्म देती हैं। आगे दी सारिणी में विस्तृत सूचना दी गई है।

आयु के आधार पर प्रसवन सामर्थ्य

भारत में स्त्रियों का विवाह कम आयु में होता है, इसलिए वे बच्चों को जन्म देना भी कम आयु में ही आरम्भ कर देती हैं। एक औसत भारतीय स्त्री का पहला

---

१. यूनाइटेड नेशन्स, "द मैसूर पापुलेशन स्टडी", पृ० ११६

२. मजूमदार, डी० एन०, "सोशल कोन्टुअर्स आफ एन इन्डस्ट्रियल सिटी", पृ० १६१

३. मुकर्जी, एस० बी०, "स्टडीज आन फर्टिलिटी रेट्स इन केलकटा", पृ० १८

४. बालकृष्ण, आर०, "रिपोर्ट आन इकनामिक सर्वे आफ मद्रास सिटी", पृ० १०५

५. अगरवाल, एस० एन०, "ए डेमोग्राफिक सर्वे आफ सिक्स अर्बनाइसिंग विलेजेस" पृ० १-१-४

६. जैन, एस०पी०, "सर्टेन स्टेटिसटिक्स आन फर्टिलिटी आफ इण्डियन वीमेन टू रोडि- [illegible]", पृ० ३

सारिणी १७

विवाह की आयु के आधार पर सम्पूर्ण प्रसवन शक्ति

भारत के रजिस्ट्रार जेनरल		चन्द्रशेखरन		ड्राईवर	
विवाह की आयु	बच्चों की संख्या	विवाह के समय आयु	बच्चों की संख्या	विवाह की आयु	बच्चों की संख्या
ग्रामीण पंजाब					
१८ से कम	५.७	१४-१५	७.७	१३ से कम	४.३
१८-२२	५.२	१६-१७	७.६	१३-१७	६.१
२३ और अधिक	४.४	१८-१६	७.६	१८ और अधिक	३.५
शहरी पंजाब					
१८ से कम	६.०				
१८-२२	५.५				
२३ और अधिक	४.७				

बच्चा १६ वर्ष की आयु में होता है, उसका दूसरा और तीसरा बच्चा तब होता है, जब उसकी आयु २० और २४ के बीच होती है, उसका चौथा और पांचवां बच्चा तब होता है, जब उसकी आयु २५ तथा २६ वर्ष के बीच होती है तथा उसके छठे बच्चे का जन्म ३०-३४ वर्ष की आयु के बीच होता है। इस आयु तक वह अपनी प्रजनन शक्ति के दस में से आठ (८।१०) भाग को पूर्ण कर चुकी होती है, तथा वह अपने अन्तिम तथा सातवें बच्चे को जन्म लगभग १०-१५ वर्षों के समयान्तर की अवधि में देती है। इससे यह स्पष्ट है कि भारतीय स्त्रियाँ अपने परिवारों का निर्माण तब आरम्भ करती हैं, जब वे आयुवर्ग १५-१६ में होती हैं, और उनके परिवार निर्माण की गति जो इस आयुवर्ग में धीमी होती है, एकाएक गतिशील हो जाती है, तथा अगले पन्द्रह वर्षों तक समान रूप में अधिक रहती है, फिर इसमें तीव्र ह्रास होता है तथा अगले पन्द्रह वर्षों तक समान रूप में अधिक रहती है। फिर इसमें मन्द ह्रास होता है तथा अगले पन्द्रह वर्षों तक यह धीमी गति से चलती है। प्रजनन की यह सामर्थ्य बकौला की वक्र का आकार देता है। पश्चिम देशों के प्रजनन व्यवहार से यह स्पष्ट रूप से विपरीत है, जहां प्रजनन शक्ति का निर्माण धीरे धीरे

सारिणी १८

भारत में पंजीकृत मृत्युदर तथा शिशु मृत्युदर

१८८५-१९६०

अवधि	मृत्युदर	शिशु मृत्युदर
१८८५-९०	२६	—
१८९०-१९०१	३१	—
१९०१-१९११	३४	—
१९११-१९१५	३० ७	२०४
१९१६-१९२०	३८ २	२१८
१९२१-१९२५	२६ ३	१७४
१९२६-१९३०	२४ ६	१७८
१९३१-१९३५	२३.६	१७४
१९३६-१९४०	२२.३	१६१
१९४१-४५	१९ ५	१६१
१९४६-१९५०	१४ ५	१३२
१९५१	१४ ४	१२४
१९५२	१३.६	११६
१९५३	१४.४	११९
१९५४	१२.५	११५
१९५५	११ ७	१००
१९५६	११.४	१०१
१९५७	१० ८	१०१
१९५८	११.२	१०१
१९५९	९ २	१०१
१९६०	९.२	८८

विश्वस्त पंजीकृत आकड़े प्राप्त नहीं है, इसलिए जनांकिकीविशारदो ने मृत्यु-दर जानने के लिए अन्य पद्धतिया अपनाई हैं।

रेखाचित्र ६. भारत के विभिन्न दशकों में मृत्युदरें

है। यह अन्तर असम में होनेवाले अधिक मृत्यु संकटों के कारण है। सारिणी २१ में पिछले नौ दशकों में पुरुषों और स्त्रियों के जन्म के समय जीवन की सम्भावनाएं दी गई हैं। १८७२ तथा १९२१ के मध्य के युग में जन्म के समय जीवन की सम्भावना बहुत कम परिवर्तित होती प्रतीत होती है। पर १९२१ तथा १९६१ के बीच पचास प्रतिशत की वृद्धि हुई है। यह देश में मृत्युदर के गिरने की घटनाओं की ओर संकेत करता है।

सारिणी २०

भारत के विभिन्न राज्यों में अनुमानित मृत्युदर तथा जन्म के समय जीवन की सम्भावनाएं १९४१-६१

	मृत्युदर		जन्म के समय जीवन की सम्भावनाएं (वर्षों में)
	१९४१-५१	१९५१-६१	१९५१-६१
असम	३१.८	२६.६	३६.८
आंध्र प्रदेश	२९.५	२५.२	३६.९
बिहार	२६.५	२६.१	३७.६
गुजरात	२९.९	२३.५	४०.०
केरल	१८.०	१६.१	४८.३
मध्य प्रदेश	३८.५	२३.२	४०.६
मद्रास	२२.८	२२.५	३९.८
महाराष्ट्र	२४.९	१९.८	४५.२
मैसूर	१८.९	२२.२	४०.२
उड़ीसा	२९.९	२२.९	४०.९
उत्तर प्रदेश	२७.२	२४.९	३८.९
पंजाब	२६.३	१८.९	४७.५
राजस्थान	२७.२	१९.४	४६.८
पश्चिमी बंगाल	२८.६	२०.५	४४.३
[illegible]	२७.४	२२.८	४१.२

रेखा चित्र ७. यौनभेद के आधार पर विभिन्न दशकों में जन्म के समय जीवन की संभावना

सारिणी २१

भारत में जन्म के समय जीवन की सम्भावना, १८७२-१९६१

वर्ष	जन्म के समय जीवन की सम्भावना (वर्षों में)	
	पुरुष	स्त्री
१८७२-८१	२३.६७	२५.५८
१८८१-९१	२४.५९	२५.५४
१८९१-१९०१	२३.६३	२३.९६
१९०१-११	२२.५९	२३.३१
१९११-२१	२४.८०	२४.७०
१९२१-३१	२६.९१	२६.५६
१९३१-४१	३२.०९	३१.३७
१९४१-५१	३२.४५	३१.६६
१९५१-६१	४१.८९	४०.५५

शिशु, बालक तथा मातृक मृत्युदरें भारत में अब भी अधिक हैं। जब कि अधिकांश आधुनिक देशों में प्रत्येक १००० जन्म लेने वाले बच्चों में केवल ४०-४५ प्रथम वर्ष में मरते हैं, भारत में इस प्रकार की मौतों की संख्या चौगुनी या पंचगुनी और १५०-२०० के बीच है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के १४ वें दौर (१९५८-५९) के अनुसार शिशु मृत्यु संख्या दर प्रति १००० पुरुष जन्मों पर १५३ तथा प्रति १००० स्त्री जन्मों पर १३८ थी, और औसत थी १४६। यह १९२१-३१ वाले दशक में २४० थी। तथा १९४१-५१ दशक में १४६ थी। यह दर्शाता है कि शिशु मृत्यु संख्या दर पिछले ४० वर्षों में घटी है पर अभी यथेष्ट अधिक है। प्रथम वर्ष में होने वाली मौतों को देखें तो ६० प्रतिशत प्रथम तिमाही में मरते हैं। फिर उनमें से प्रथम मास में मरते हैं, लगभग ६० प्रतिशत प्रथम सप्ताह में मरते हैं, २५ प्रतिशत दूसरे सप्ताह में तथा शेष अन्तिम दो सप्ताहों में[1]। प्रारम्भिक शैशव में होनेवाली मौतों में अधिकांशतया

१. अगरवाल, एस० एन "ए डेमोग्राफिक स्टडी आफ सिक्स अर्बनाइजिंग विलेजेस", दिल्ली इन्स्टीच्यूट आफ इकनामिक ग्रोथ; १९६४, अध्याय ६ (मिनियोग्राफ्ड)। राष्ट्रिय प्रतिदर्श सर्वेक्षण, १४ वां दौर के अनुसार, प्रथम मास के जीवन के अन्तर्गत होने वाली मौतों में सम्पूर्ण शिशुओं की मौतों का ४५ प्रतिशत होता है और इनमें से २५ प्रतिशत प्रथम सप्ताह में होती हैं। दूसरे शब्दों में, प्रथम मास में होने वाली मौतों में ५६ प्रतिशत प्रथम सप्ताह में होती हैं।

सहजात कारणों से होती है, जैसे जन्म के समय की चोटें अर्थात् अंग-भंग, ब्रोंको-न्यु-मोनिया, अतिसार तथा जन्मजात दुर्बलता, जब कि बाद के महीनों में होने वाली मौतों का कारण संक्रामक तथा पर-जीवी रोग होते हैं। पुरुष शिशुओं से मौतें स्त्री शिशुओं के अपेक्षाकृत अधिक होती हैं। शिशु मृत्यु वृद्धावस्था में भी अधिक होती है, जब माताएं युवा (२० वर्ष से कम) या अपेक्षाकृत बड़ी, ३४ वर्ष से ऊपर, होती हैं। शिशु काल की मौतें तब भी अधिक होती हैं, जब मातृत्व बार-बार और कम समय के अन्तराल में होता है। आयु-वर्ग १-४ में मृत्यु प्रति १००० बच्चों में लगभग ८० होती है, जबकि आधुनिक देशों में यह मुश्किल से १२ होती है। शिशु-जन्म की आयु में स्त्रियों की मृत्युसंख्या भी अधिक है, जो १५-४५ की आयु की स्त्रियों में प्रति १००० में ३००-४०० के बीच है। यह मुख्यतया मातृत्व तथा जन्मोत्तर देख-रेख की अपर्याप्तता के कारण है। प्रसवकाल की सुविधाओं में सुधार तथा अधिक उप-युक्त एवं पौष्टिक आहार के साथ यह आशा की जाती है कि शिशुओं, बालकों तथा मातृकों की मृत्युसंख्या में और भी कमी होगी।

विभिन्न कारणों से मृत्यु

भारत में विभिन्न कारणों से मृत्यु की घटनाओं पर बहुत कम विश्वसनीय सूचना प्राप्त है। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, पंजीकृत मृत्यु के आंकड़े बहुत ही अपूर्ण हैं और मृत्यु के कारणों पर तो वे और भी अपूर्ण हैं। यह इसलिए है कि भारत के संपूर्ण भूमिक्षेत्र का ठीक से प्रतिवेदन प्राप्त नहीं होता है और सभी मामलों की सूचना नहीं दी जाती। इसलिए यह उचित होगा कि प्रकाशित आधार-सामग्री का उपयोग विभिन्न कारणों से होने वाली मृत्यु के स्तर की रूपरेखा बताने में न किया जाए। पर उनका उपयोग समय की प्रवृत्ति या एक निश्चित अवधि में विभिन्न रोगों की घटनाओं के प्रतिमान के ह्रास जानने के लिए किया जा सकता है।

ज्वर

ज्वर जिसमें मलेरिया भी सम्मिलित है, हमारे देश की मौतों का प्रधान कारण है। दशक १९२१-३१ तथा १९३१-४१ में प्रत्येक दस मौतों में, छः ज्वर के कारण हुईं। १९६२ में इस प्रकार की मौतों का अनुपात घटकर प्रति दस में चार हो गया। यह मुख्यतः १९५३ में प्रारम्भ किए गए राष्ट्रव्यापी मलेरिया नियंत्रण कार्यक्रम के

हो पाया, जो १९५८ में मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम में परिवर्तित कर दिया गया। मलेरिया के कारण होनेवाली पंजीकृत मौतें जो १९४७ में प्रति १००० की जनसंख्या पर ७.३ थी, १९६२ में घटकर ०.३ हो गई, जो कि २४ गुना ह्रास है (सारिणी २२ और २३)।

सारिणी २२

चुने हुए रोगों के आधार पर पंजीकृत मृत्युदर, १९४७-१९६२

वर्ष	मलेरिया	हैजा	चेचक	श्वास सम्बन्धी रोग
१९४७	७.३	०.४	०.१	१.५
१९४८	५.८	०.७	०.२	१.४
१९४९	६.४	०.३	०.१	१.३
१९५०	४.१	०.४	०.३	१.२
१९५१	२.६	०.२	०.४	१.४
१९५२	२.२	०.२	०.२	१.४
१९५३	०.९	०.४	०.१	१.४
१९५४	१.४	०.१	०.१	१.१
१९५५	१.४	०.१	०.१	१.३
१९५६	०.५	०.१	०.१	१.१
१९५७	१.२	०.२	०.२	१.१
१९५८	०.७	०.१	०.४	१.१
१९५९	०.३	०.१	०.१	०.५
१९६०	०.४	०.१	०.१	०.५
१९६१	०.४	०.१	०.१	०.९
१९६२	०.३	०.१	०.१	०.९

द्रष्टव्य

ये आंकड़े बहुत विश्वस्त नहीं हैं, तथा इनका उपयोग प्रवृत्ति देखने के लिए जाना चाहिए न कि मृत्युदर के स्तर के लिए।

ट्रकोमा

ट्रकोमा आशिक या सम्पूर्ण अन्धेपन का मुख्य कारण है। यह रोग पजाब, राजस्थान, उत्तरप्रदेश एव गुजरात में सबसे अधिक प्रचलित है। भारत सरकार ने विश्व स्वास्थ्य सगठन की सहायता से अक्तूबर १९५६ मे ट्रकोमा मार्गदर्शी योजना चालू की और १९६३ मे एक राष्ट्रीय ट्रकोमा नियत्रण कार्यक्रम का सूत्रपात किया। उल्लिखित पाच राज्यो मे अधिक ध्यान दिया जा रहा है, जहा इस रोग की प्रचलन दर पचास प्रतिशत से ऊपर आंकी गई है।

कोढ़

कोढ आध्रप्रदेश, बिहार, उड़ीसा तथा उत्तर प्रदेश मे अधिक होता है। कोढ़ नियत्रण योजना के अन्तर्गत जिन लोगो की परीक्षा की गई है, उनसे ज्ञात हुआ कि चलन दर प्रति १०० व्यक्तियो पर एक से कुछ ऊपर है। अनुमानित रूप से पैंता-रम लाख व्यक्ति कोढ से पीडित हैं तथा इनमे से २० प्रतिशत मामले सक्रामक हैं।

१९६४ की १८ प्रति हजार अमार्जित मृत्यु दर पश्चिमी स्तरो की दृष्टि से भी उच्च है और अनुमान किया जाता है कि १९८१ तक यह नौ तक घट जाएगी। र समय शिशु मृत्यु संख्या दर ४० के आसपास होगी तथा १-४ आयु वर्ग के बच्चो प्रति एक हजार १५ होगी। प्रजननशील माताओ में भी मृत्यु सख्या घटेगी तथा धिक आयु के लोग लम्बे समय तक जीवित रहेंगे। सक्षेप में अधिक लोग और लम्बी धि तक जीवित रहेंगे। इसलिए जब तक जन्म की सख्या मे कमी लाने के गभीर ास नही किए जाएंगे, बढ़ती हुई जनसख्या को भोजन और वस्त्र देने की हमारी स्या कई गुनी बढ़ेगी। भारत मे घटती हुई मृत्यु दर की समस्या जटिल रूप से न नियत्रण के प्रश्न से सम्बद्ध है।

हो पाया, जो १९५८ में मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम में परिवर्तित कर दिया गया। मलेरिया के कारण होनेवाली पंजीकृत मौतें जो १९४७ में प्रति १००० की जनसंख्या पर ७.३ थी, १९६२ में घटकर ०.३ हो गई, जो कि २४ गुना ह्रास है (सारिणी २२ और २३)।

सारिणी २२

चुने हुए रोगों के आधार पर पंजीकृत मृत्युदर, १९४७-१९६२

वर्ष	मलेरिया	हैजा	चेचक	श्वास सम्बन्धी रोग
१९४७	७.३	०.४	०.१	१.५
१९४८	५.८	०.७	०.२	१.४
१९४९	६.४	०.३	०.१	१.३
१९५०	४.१	०.४	०.३	१.२
१९५१	२.६	०.२	०.४	१.४
१९५२	२.२	०.२	०.२	१.४
१९५३	०.९	०.४	०.१	१.४
१९५४	१.४	०.१	०.१	१.१
१९५५	१.४	०.१	०.१	१.३
१९५६	०.५	०.१	०.१	१.१
१९५७	१.२	०.२	०.२	१.१
१९५८	०.७	०.१	०.४	१.१
१९५९	०.३	०.१	०.१	०.५
१९६०	०.४	०.१	०.१	०.५
१९६१	०.४	०.१	०.१	०.९
१९६२	०.३	०.१	०.१	०.९

द्रष्टव्य

ये आंकड़े बहुत विश्वस्त नहीं हैं, तथा इनका उपयोग प्रवृत्ति देखने के लिए किया जाना चाहिए न कि मृत्युदर के स्तर के लिए।

ट्रकोमा

ट्रकोमा आंखों का सम्पूर्ण अन्धेपन का मुख्य कारण है। यह रोग पंजाब, राजस्थान, उत्तरप्रदेश एवं गुजरात में सबसे अधिक प्रचलित है। भारत सरकार ने विश्व स्वास्थ्य संगठन की सहायता से अक्तूबर १९५६ में ट्रकोमा मार्गदर्शी योजना शुरू की और १९६३ में एक राष्ट्रीय ट्रकोमा नियन्त्रण कार्यक्रम का सूत्रपात किया। [illegible] राज्यों में अधिक ध्यान दिया जा रहा है, जहां इस रोग का प्रचलन पचास प्रतिशत से ऊपर आंकी गई है।

कोढ़

कोढ़ आन्ध्रप्रदेश, बिहार, उड़ीसा तथा उत्तर प्रदेश में अधिक होता है। कोढ़ नियन्त्रण योजना के अन्तर्गत जिन लोगों की परीक्षा की गई है, उनसे ज्ञात हुआ कि प्रचलन दर प्रति १०० व्यक्तियों पर एक से कुछ ऊपर है। अनुमानित रूप से पैंतालीस लाख व्यक्ति कोढ़ से पीड़ित हैं तथा इनमें से २० प्रतिशत मामले संक्रामक हैं।

१९६८ की १८ प्रति हजार अमार्जित मृत्यु दर पश्चिमी स्तरों की दृष्टि से अब भी उच्च है और अनुमान किया जाता है कि १९८१ तक यह नौ तक घट जाएगी। उस समय शिशु मृत्यु संख्या दर ४० के आसपास होगी तथा १-४ आयु वर्ग के बच्चों में प्रति एक हजार १५ होगी। प्रजननशील माताओं में भी मृत्यु संख्या घटेगी तथा अधिक आयु के लोग लम्बे समय तक जीवित रहेंगे। संक्षेप में अधिक लोग और लम्बी अवधि तक जीवित रहेंगे। इसलिए जब तक जन्म की संख्या में कमी लाने के गंभीर प्रयास नहीं किए जाएंगे, बढ़ती हुई जनसंख्या को भोजन और वस्त्र देने की हमारी समस्या कई गुनी बढ़ेगी। भारत में घटती हुई मृत्यु दर की समस्या जटिल रूप से प्रसवन नियन्त्रण के प्रश्न से सम्बद्ध है।

हो पाया, जो १९५८ में मलेरिया उन्
मलेरिया के कारण होनेवाली पंजीकृत
पर ७.३ थी, १९६२ में घटकर ०.३ ह
और २३)।

सारि

चुने हुए रोगों के आधार प

वर्ष	मलेरिया	
१९४७	७.३	
१९४८	५.८	
१९४९	६.४	
१९५०	४.१	
१९५१	२.६	
१९५२	२.२	
१९५३	०.९	
१९५४	१.४	
१९५५	१.४	
१९५६	०.५	
१९५७	१.२	
१९५८	०.७	
१९५९	०.३	
१९६०	०.४	०
१९६१	०.४	०
१९६२	०.३	०

आंकड़े बहुत विश्वस्त नहीं हैं, त
चाहिए न कि मृत्युदर के स्तर

हैजा

पिछली शताब्दी में हैजा भारत में एक सामान्य रोग था, पर हाल के वर्षों में यह विशेष कम हो गया है। इस रोग के कारण पंजीकृत मृत्युदर, जो १६००-१६२४ की अवधि में प्रति १००० की जनसंख्या पर १.६ थी, १६४८-६३ के दौरान घटकर ०.२ आ गई, जो ८ गुना ह्रास है (सारिणी २२)। जिन राज्यों में इस रोग की घटनाएं अब भी अधिक हैं, वे हैं—पश्चिमी बंगाल, बिहार, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, मद्रास, मैसूर, मध्य प्रदेश तथा महाराष्ट्र।

सारिणी २३

विभिन्न कारणों से होनेवाली कुल मृत्यु का प्रतिशत हिसाब

१६२१-१६६२

कारण	१६२१-३१	१६३१-४१	१६४१-५१	१६६०	१६६२
ज्वर	५६.१	५८.४	५८.१	५८.१	३८.४
हैजा	३.६	२.४	१.१	१.८	०.३
चेचक	१.२	१.१	४.०	०.६	१.०
ताऊन	२.६	—	०.३	—	—
पेचिश और अतिसार	३.६	४.२	४.४	०.५	५.१
श्वास सम्बन्धी रोग	अप्राप्त	८.२	८.२	४.१	८.८
विविध रोग	अप्राप्त	२५.८	२३.६	३४.६	४६.४
सब कारणों से	१००.०	१००.०	१००.०	१००.०	१००.०

चेचक

चेचक भारत में स्वास्थ्य का एक और संकट है। इसका चक्रवत् उत्थान और ह्रास प्रत्येक ५-७ वर्षों में होता है। भारत सरकार ने १६५६ में चेचक और हैजे के उन्मूलन का कार्यक्रम आरम्भ किया था, तथा १६६५ के मार्च के अन्त तक भारत में रहनेवाले लगभग ७० प्रतिशत लोगों को टीके लगाए जा चुके थे। इसके परिणाम-

हो पाया, जो १९५८ में मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम में परिवर्तित कर दिया गया। मलेरिया के कारण होनेवाली पंजीकृत मौतें जो १९४७ में प्रति १००० की जनसंख्या पर ७.३ थी, १९६२ में घटकर ०.३ हो गई, जो कि २४ गुना ह्रास है (सारिणी २२ और २३)।

सारिणी २२

चुने हुए रोगों के आधार पर पंजीकृत मृत्युदर, १९४७-१९६२

वर्ष	मलेरिया	हैजा	चेचक	श्वास सम्बन्धी रोग
१९४७	७.३	०.४	०.१	१.५
१९४८	५.८	०.७	०.२	१.४
१९४९	६.४	०.३	०.१	१.३
१९५०	४.१	०.४	०.३	१.२
१९५१	२.९	०.२	०.४	१.४
१९५२	२.२	०.२	०.२	१.४
१९५३	०.९	०.४	०.१	१.४
१९५४	१.४	०.१	०.१	१.१
१९५५	१.४	०.१	०.१	१.३
१९५६	०.५	०.१	०.१	१.१
१९५७	१.२	०.२	०.२	१.१
१९५८	०.७	०.१	०.४	१.१
१९५९	०.३	०.१	०.१	०.५
१९६०	०.४	०.१	०.१	०.५
१९६१	०.४	०.१	०.१	०.९
१९६२	०.३	०.१	०.१	०.९

द्रष्टव्य

ये आंकड़े बहुत विश्वस्त नहीं हैं, तथा इनका उपयोग प्रवृत्ति देखने के लिए किया जाना चाहिए न कि मृत्युदर के स्तर के लिए।

ट्रकोमा

ट्रकोमा आंशिक या सम्पूर्ण अन्धेपन का मुख्य कारण है। यह रोग पंजाब, राजस्थान, उत्तरप्रदेश एवं गुजरात में सबसे अधिक प्रचलित है। भारत सरकार ने विश्व स्वास्थ्य संगठन की सहायता से अक्तूबर १९५६ में ट्रकोमा मार्गदर्शी योजना चालू की और १९६३ में एक राष्ट्रीय ट्रकोमा नियंत्रण कार्यक्रम का सूत्रपात किया। उल्लिखित पांच राज्यों में अधिक ध्यान दिया जा रहा है, जहां इस रोग की प्रचलन दर पचास प्रतिशत से ऊपर आंकी गई है।

कोढ़

कोढ़ आंध्रप्रदेश, बिहार, उड़ीसा तथा उत्तर प्रदेश में अधिक होता है। कोढ़ नियंत्रण योजना के अन्तर्गत जिन लोगों की परीक्षा की गई है, उनसे ज्ञात हुआ कि प्रचलन दर प्रति १०० व्यक्तियों पर एक से कुछ ऊपर है। अनुमानित रूप से पैंतालिस लाख व्यक्ति कोढ़ से पीड़ित हैं तथा इनमें से २० प्रतिशत मामले सक्रामक हैं।

१९६४ की १८ प्रति हज़ार अमार्जित मृत्यु दर पश्चिमी स्तरों की दृष्टि से अब भी उच्च है और अनुमान किया जाता है कि १९८१ तक यह नौ तक घट जाएगी। उस समय शिशु मृत्यु संख्या दर ४० के आसपास होगी तथा १-४ आयु वर्ग के बच्चों में प्रति एक हज़ार १५ होगी। प्रजननशील माताओं में भी मृत्यु संख्या घटेगी तथा अधिक आयु के लोग लम्बे समय तक जीवित रहेंगे। संक्षेप में अधिक लोग और लम्बी अवधि तक जीवित रहेंगे। इसलिए जब तक जन्म की संख्या में कमी लाने के गंभीर प्रयास नहीं किए जाएंगे, बढ़ती हुई जनसंख्या को भोजन और वस्त्र देने की हमारी समस्या कई गुनी बढ़ेगी। भारत में घटती हुई मृत्यु दर की समस्या जटिल रूप से प्रसवन नियंत्रण के प्रश्न से सम्बद्ध है।

स्वरूप जब कि १९४१-५१ के दशक में सम्पूर्ण मौतों में से चार प्रतिशत चेचक के कारण हुई थीं, १९६२ में इस प्रकार की मौतें केवल १ प्रतिशत रही (सारिणी २३)।

ताऊन

पिछले साठ वर्षों में इस रोग के प्रकोप में लगातार और निश्चित गिरावट आई है। जब कि १८९८-१९०८ में प्रति एक लाख जनसंख्या में १८३ मौतें ताऊन के कारण हुई थीं, १९५९-६४ में प्रति एक लाख जनसंख्या में केवल एक मृत्यु इस कारण हुई। चित्तूर (आंध्र प्रदेश) सलेम (मद्रास) और कोलार (मैसूर) भारत में वे क्षेत्र हैं जहां प्लेग अब भी प्रचलित है।

श्वास सम्बन्धी रोग

क्षयरोग को मिलाकर श्वास के रोग देश की सम्पूर्ण मौतों में से लगभग १० प्रतिशत रोगों के लिए उत्तरदायी हैं। अनुमानित रूप से ६० लाख व्यक्ति भारत में क्षयरोग से ग्रस्त हैं तथा प्रति वर्ष इस रोग से लगभग ५ लाख मौतें होती हैं। इस प्रकार से प्रति १००० मामलों में अस्वस्थता दर १० की होती है। पर १९५५-५८ में किए गए सर्वेक्षण से पता चलता है कि क्षयरोग की अस्वस्थता दर भारत में प्रति १००० मामलों में १३ तथा २५ के बीच रहती है। ये आंकड़े अधिक विश्वस्त मालूम पड़ते हैं। यह पाया गया है कि इस रोग का प्रकोप ३५ वर्ष तथा इससे ऊपर के पुरुषों में स्त्रियों की अपेक्षाकृत अधिक होता है। राष्ट्रव्यापी बी० सी० जी० अभियान के अन्तर्गत २.१६ करोड़ व्यक्तियों की ट्यूबवर्यूलिन जांच की जा चुकी है तथा जून १९६४ तक ७.८ करोड़ के टीके लग चुके हैं।

फाइलेरिया

भारत के ज्ञात फाइलेरिया क्षेत्रों में अनुमानित रूप से १२.२ करोड़ व्यक्ति रहते हैं। फाइलेरिया का प्राबल्य उत्तर प्रदेश, बिहार, आंध्र प्रदेश, मद्रास तथा पश्चिम बंगाल में अपेक्षाकृत अधिक है। देश में फाइलेरिया के नियंत्रण के लिए भारत सरकार ने १९५५ में एक बृहदस्तरीय मार्गदर्शी कार्यक्रम का सूत्रपात किया था तथा तबसे उन क्षेत्रों में जहां प्रति-लार्वा कदम उठाए गए हैं, फाइलेरिया के संचारण में निश्चित कमी पाई गई है।

उपरोक्त सारिणी से यह स्पष्ट है कि १९२१-३१ से शहरी जनसंख्या की वृद्धि तीव्रता से होने लगी और अधिकतम कुल वृद्धि १९५१-६१ दशक में हुई। यह ध्यान देने की बात है कि १९०१-४१ के चालीस वर्षों में शहरी जनसंख्या की कुल वृद्धि १.८३ करोड़ हुई। १९५१-६१ के दशक में वृद्धि और भी अधिक हुई जो कि
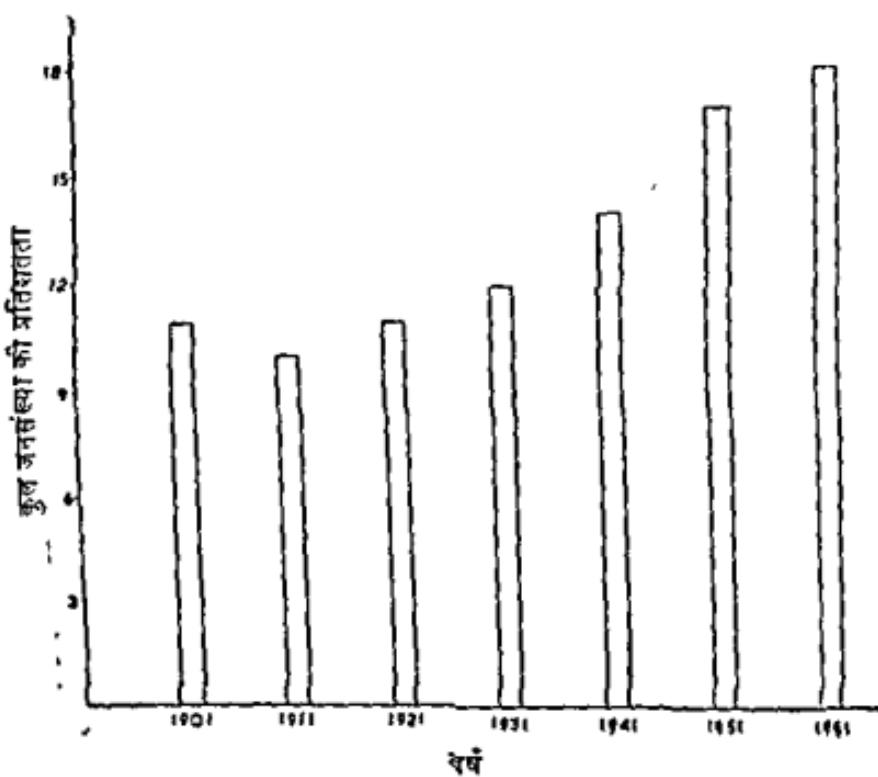
रेखाचित्र ८. शहरी जनसंख्या का प्रतिशत, १९०१-१९६१

२.१२३ करोड़ थी, जो संयोग से १९११-२१ दशक की कुल वृद्धि की लगभग दस गुनी है। पर अधिकतम प्रतिशत वृद्धि १९४१-५१ दशक में ही हुई, जो १९५१-६१ के ३४.० के विपरीत ४१.४ है। परन्तु १९४१-५१ की शहरी जनसंख्या की वृद्धि के एक भाग का कारण देश के विभाजन के फलस्वरूप शरणार्थियों का आना भी ५।

उपरोक्त सारिणी से यह स्पष्ट है कि १९२१-३१ से शहरी जनसंख्या की वृद्धि तीव्रता से होने लगी और अधिकतम कुल वृद्धि १९५१-६१ दशक में हुई। यह ध्यान देने की बात है कि १९०१-४१ के चालीस वर्षों में शहरी जनसंख्या की कुल वृद्धि १.८३ करोड़ हुई। १९५१-६१ के दशक में वृद्धि और भी अधिक हुई जो कि

रेखाचित्र ८. शहरी जनसंख्या का प्रतिशत, १९०१-१९६१

२.१२२ करोड़ थी, जो संयोग से १९११-२१ दशक की कुल वृद्धि की लगभग दस गुनी है। पर अधिकतम प्रतिशत वृद्धि १९४१-५१ दशक में ही हुई, जो १९५१-६१ के २४.० के विपरीत ४१.४ है। परन्तु १९४१-५१ की शहरी जनसंख्या की वृद्धि के एक भाग का कारण देश के विभाजन के फलस्वरूप शरणार्थियों का आना भी था।

सारिणी २१

भारत में जन्म के समय जीवन की सम्भावना, १८७२-१९६१

वर्ष	जन्म के समय जीवन की सम्भावना (वर्षों में)	
	पुरुष	स्त्री
१८७२-८१	२३.६७	२५.५८
१८८१-९१	२४.५९	२५.५४
१८९१-१९०१	२३.६३	२३.९६
१९०१-११	२२.५९	२३.३१
१९११-२१	२४.८०	२४.७०
१९२१-३१	२६.९१	२६.५६
१९३१-४१	३२.०९	३१.३७
१९४१-५१	३२.४५	३१.६६
१९५१-६१	४१.८९	४०.५५

शिशु, बालक तथा मातृक मृत्युदरें भारत में अब भी अधिक हैं। जब कि अधिकांश आधुनिक देशों में प्रत्येक १००० जन्म लेने वाले बच्चों में केवल ४०-४५ प्रथम वर्ष में मरते हैं, भारत में इस प्रकार की मौतों की संख्या चौगुनी या पंचगुनी और १५०-२०० के बीच है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के १४ वें दौर (१९५८-५९) के अनुसार शिशु मृत्यु संख्या दर प्रति १००० पुरुष जन्मों पर १५३ तथा प्रति १००० स्त्री जन्मों पर १३८ थी, और औसत थी १४६। यह १९२१-३१ वाले दशक में २४० थी। तथा १९४१-५१ दशक में १४६ थी। यह दर्शाता है कि शिशु मृत्यु संख्या दर पिछले ४० वर्षों में घटी है पर अभी यथेष्ट अधिक है। प्रथम वर्ष में होने वाली मौतों को देखें तो ६० प्रतिशत प्रथम तिमाही में मरते हैं। फिर उनमें से प्रथम मास में मरते हैं, लगभग ६० प्रतिशत प्रथम सप्ताह में मरते हैं, २५ प्रतिशत दूसरे सप्ताह में तथा शेष अन्तिम दो सप्ताहों में[१]। प्रारम्भिक शैशव में होनेवाली मौतों में अधिकांशतया

१. अगरवाल, एस० एन "द डेमोग्राफिक स्टडी आफ सिक्स अर्बनाइजिंग विलेजेस", दिल्ली इन्स्टीच्यूट आफ इकनामिक ग्रोथ; १९६४, अध्याय ६ (मिमियोग्राफ्ड)। राष्ट्रिय प्रतिदर्श सर्वेक्षण, १४ वां दौर के अनुसार, प्रथम मास के जीवन के अन्तर्गत होने वाली मौतों में सम्पूर्ण शिशुओं की मौतों का ४५ प्रतिशत होता है और इनमें से २५ प्रतिशत प्रथम सप्ताह में होती हैं। दूसरे शब्दों में, प्रथम मास में होने वाली मौतों में ५६ प्रतिशत प्रथम सप्ताह में होती हैं।

सहजात कारणों से होती हैं, जैसे जन्म के समय की चोटें आदि अपोषण, ब्रोन्कोन्यूमोनिया, अतिसार तथा जन्मजात कुरचना, जब कि आगे के सप्ताहों में होने वाली मौतों का कारण सकामक तथा पर-जीवी रोग होते हैं। पुरुष शिशुओं मे मौतें स्त्री शिशुओं के अपेक्षाकृत अधिक होती है। शिशु मृत्यु उस स्थिति में भी अधिक होती हैं, जब माताए युवा (२० वर्ष से कम) या अपेक्षाकृत बडी, ३४ वर्ष के ऊपर, होती हैं। शिशु काल की मौतें तब भी अधिक होती हैं, जब मातृत्व बार-बार और अल्प समय के व्यवधान में होता है। आयु-वर्ग १-४ मे मृत्यु प्रति १००० बच्चो मे लगभग ८० होती है, जबकि आधुनिक देशों मे यह मुश्किल से १२ होती है। शिशु-जन्म की आयु में स्त्रियों की मृत्युसख्या भी अधिक है, जो १५-४५ की आयु की स्त्रियों मे प्रति १००० में ३००-४०० के बीच है। यह मुख्यतया प्राकप्रसव तथा जन्मोत्तर देख-रेख की अपर्याप्तता के कारण है। अस्पताल की सुविधाओं मे सुधार तथा अधिक उपयुक्त एव पौष्टिक आहार के साथ यह आशा की जाती है कि शिशुओं, बालकों तथा मातृकों की मृत्युसंख्या में और भी कमी होगी।

विभिन्न कारणों से मृत्यु

भारत मे विभिन्न कारणों से मृत्यु की घटनाओं पर बहुत कम विश्वस्त सूचनाएं प्राप्त हैं। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, पजीकृत मृत्यु के आकडे बहुत ही अपूर्ण हैं और मृत्यु के कारणों पर तो वे और भी अपूर्ण हैं। यह इसलिए है कि भारत के सपूर्ण भूमिक्षेत्र का ठीक से प्रतिवेदन प्राप्त नही होता है और सभी मामलों की सूचना नहीं दी जाती। इसलिए यह उचित होगा कि प्रकाशित आधार-सामग्री का उपयोग विभिन्न कारणों से होने वाली मृत्यु के स्तर की रूपरेखा बनाने मे न किया जाए। पर उनका उपयोग समय की प्रवृत्ति या एक निश्चित अवधि मे विभिन्न रोगों की घटनाओं के प्रतिशत के ह्रास जानने के लिए किया जा सकता है।

ज्वर

ज्वर जिसमें मलेरिया भी सम्मिलित है, हमारे देश की मौतों का प्रधान कारण है। दशक १९२१-३१ तथा १९३१-४१ मे प्रत्येक दस मौतों मे, छ ज्वर के कारण हुई। १९६२ मे इस प्रकार की मौतों का अनुपात घटकर प्रति दस मे चार हो गया। यह मुख्यतः १९५३ मे प्रारम्भ किए गए राष्ट्रव्यापी मलेरिया नियत्रण कार्यक्रम के कारण

हो पाया, जो १९५८ में मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम में परिवर्तित कर दिया गया। मलेरिया के कारण होनेवाली पंजीकृत मौतें जो १९४७ में प्रति १००० की जनसंख्या पर ७.३ थी, १९६२ में घटकर ०.३ हो गई, जो कि २४ गुना ह्रास है (सारिणी २२ और २३)।

सारिणी २२

चुने हुए रोगों के आधार पर पंजीकृत मृत्युदर, १९४७-१९६२

वर्ष	मलेरिया	हैजा	चेचक	श्वास सम्बन्धी रोग
१९४७	७.३	०.४	०.१	१.५
१९४८	५.८	०.७	०.२	१.४
१९४९	६.४	०.३	०.१	१.३
१९५०	४.१	०.४	०.३	१.२
१९५१	२.६	०.२	०.४	१.४
१९५२	२.२	०.२	०.२	१.४
१९५३	०.९	०.४	०.१	१.४
१९५४	१.४	०.१	०.१	१.१
१९५५	१.४	०.१	०.१	१.३
१९५६	०.५	०.१	०.१	१.१
१९५७	१.२	०.२	०.२	१.१
१९५८	०.७	०.१	०.४	१.१
१९५९	०.३	०.१	०.१	०.५
१९६०	०.४	०.१	०.१	०.५
१९६१	०.४	०.१	०.१	०.९
१९६२	०.३	०.१	०.१	०.९

द्रष्टव्य

ये आंकड़े बहुत विश्वस्त नहीं हैं, तथा इनका उपयोग प्रवृत्ति देखने के लिए किया जाना चाहिए न कि मृत्युदर के स्तर के लिए।

हैजा

पिछली शताब्दी में हैजा भारत में एक सामान्य रोग था, पर हाल के वर्षों में यह विशेष कम हो गया है। इस रोग के कारण पंजीकृत मृत्युदर, जो १९००-१९२८ की अवधि में प्रति १००० की जनसंख्या पर १ ६ थी, १९४८-६३ के दौरान घटकर ०.२ आ गई, जो ८ गुना ह्रास है (सारिणी २२)। जिन राज्यों में इस रोग की घटनाएं अब भी अधिक हैं, वे हैं—पश्चिमी बंगाल, बिहार, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, मद्रास, मैसूर, मध्य प्रदेश तथा महाराष्ट्र।

सारिणी २३

विभिन्न कारणों से होनेवाली कुल मृत्यु का प्रतिशत हिसाब

१९२१-१९६२

कारण	१९२१-३१	१९३१-४१	१९४१-५१	१९६०	१९६२
ज्वर	५६.१	५८.४	५८.१	५८.१	३८ ६
हैजा	३.६	२ ४	१.१	१ ८	०.३
चेचक	१ २	१ १	४ ०	० ६	१ ०
प्लाउन	२ ६	—	० ३	—	—
पेचिश और अतिसार	३.६	४.२	४ ४	०.५	५.१
श्वास सम्बन्धी रोग	अप्राप्त	८.२	८ २	४ १	८ ८
विविध रोग	अप्राप्त	२५ ८	२३ ६	३४ ६	४६ ४
सब कारणों से	१००.०	१००.०	१००.०	१०० ०	१००.०

चेचक

चेचक भारत में स्वास्थ्य का एक और संकट है। इसका चक्रवत् उत्थान और ह्रास प्रत्येक ५-७ वर्षों में होता है। भारत सरकार ने १९५९ में चेचक और हैजे के उन्मूलन का कार्यक्रम आरम्भ किया था, तथा १९६५ के मार्च के अन्त तक भारत में रहनेवाले लगभग ७० प्रतिशत लोगों को टीके लगाए जा चुके थे। इसके परिणाम-

अध्याय ८

भारत में नागरीकरण

१९६१ की जनगणना के समय ४३.९ करोड़ व्यक्तियों में से ७.९ करोड़ व्यक्ति भारत के शहरी क्षेत्रों में निवास करते हुए पाए गए थे। भारतीय जनगणनाओं में ५००० या अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्रों को, जहां कुछ विशेष शहरी लक्षण पाए जाते हैं 'शहरी' के रूप में वर्गीकृत किया है। परन्तु १९६१ की जनगणना में और कठिन परिभाषा अपनाई गई, तथा केवल वे क्षेत्र 'शहरी' कहलाए, जहां की तीन चौथाई जनसंख्या कृषि पर निर्भर न थी। यह अनुमान लगाया जाता है कि इससे शहरी जनसंख्या ४७ लाख के लगभग घट गई, जो अन्यथा ८.३७ करोड़ या सम्पूर्ण जनसंख्या की १९.०५ प्रतिशत होती। नीचे दी हुई सारिणी में भारत में पिछले साठ वर्षों की सम्पूर्ण एवं शहरी जनसंख्या का प्रतिशत दिया गया है।

सारिणी २४

कुल और शहरी जनसंख्या का प्रतिशत, भारत, १९०१-६१

वर्ष	सम्पूर्ण शहरी जनसंख्या (दस लाख में)	सम्पूर्ण जनसंख्या में शहरी जनसंख्या का प्रतिशत	प्रत्येक दशक में वृद्धि (दस लाख में)	प्रत्येक दशक में प्रतिशत वृद्धि
१९०१	२५.८५	१०.८	—	—
१९११	२५.९४	१०.३	०.०९	०.३५
१९२१	२८.०९	११.२	२.१५	८.२९
१९३१	३३.४६	१२.०	५.३७	१९.१२
१९४१	४४.१५	१३.९	१०.६९	३१.९५
१९५१	६२.४४	१७.३	१८.२९	४१.४३
१९६१	८३.६७[१]	१९.१[१]	२१.२३[१]	३४.०[१]

१. संवर्द्धित आंकड़े १९६१ की जनगणना के आंकड़ों को परिवर्तित करने के पश्चात् के हैं, जिससे कि वे शहरी की पहली परिभाषा की शृंखला के अन्तर्गत लाए जा सकें।

उपरोक्त सारिणी से यह स्पष्ट है कि १९२१-३१ से शहरी जनसंख्या की वृद्धि तीव्रता से होने लगी और अधिकतम कुल वृद्धि १९५१-६१ दशक में हुई। यह ध्यान देने की बात है कि १९०१-४१ के चालीस वर्षों में शहरी जनसख्या की कुल वृद्धि १.८३ करोड़ हुई। १९५१-६१ के दशक में वृद्धि और भी अधिक हुई जो कि
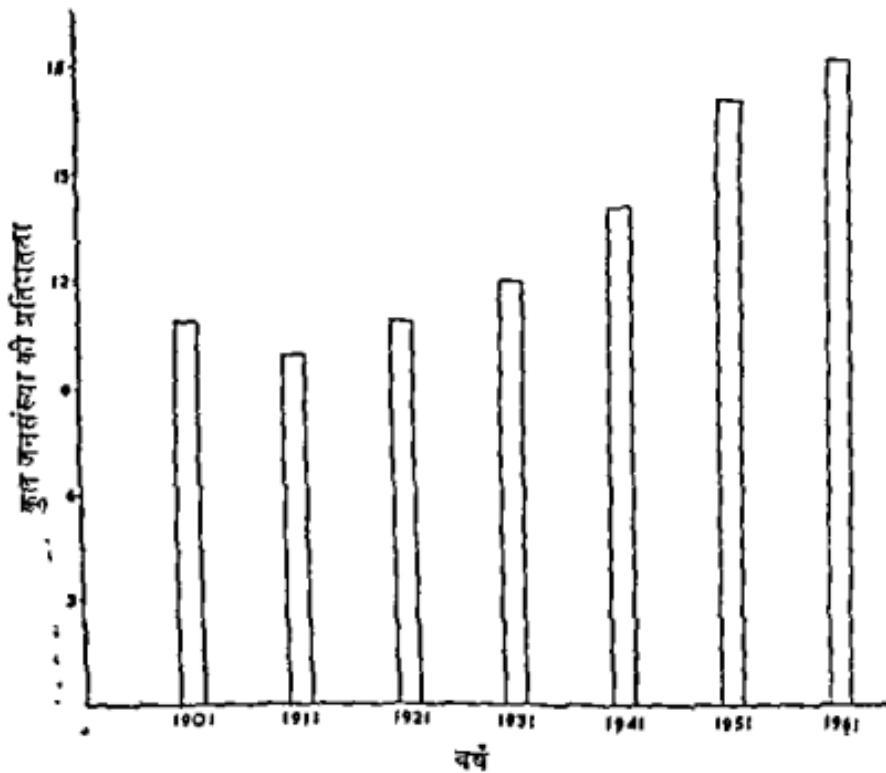
रेखाचित्र न० शहरी जनसंख्या का प्रतिशत, १९०१-१९६१

२.१२३ करोड़ थी, जो संयोग से १९११-२१ दशक की कुल वृद्धि की लगभग दस गुनी है। पर अधिकतम प्रतिशत वृद्धि १९४१-५१ दशक में ही हुई, जो १९५१-६१ के २४० के विपरीत ४१.४ है। परन्तु १९४१-५१ की शहरी जनसख्या की वृद्धि के एक भाग का कारण देश के विभाजन के फलस्वरूप शरणार्थियों का आना भी था।

अनुमान लगाया गया है कि यह ६.२ प्रतिशत था। अगर इसे छोड़ दिया जाए, तो प्रतिशत वृद्धि केवल ३५ तक आती है। इस प्रकार से शहरी जनसंख्या की दस वार्षिक प्रतिशत वृद्धि पिछले तीन दशकों में काफी निकट रही।

अपनी परम्पराओं के अनुसार भारतीय जनगणनाओं ने नगरों को जनसंख्या के आकार पर आधारित निम्नलिखित छ वर्गों में वर्गीकृत किया है:

१	१,००,००० तथा इससे अधिक
२	५०,००० से १,००,०००
३	२०,००० से ५०,०००
४	१०,००० से २०,०००
५	५,००० से १०,०००
६	५,००० से कम

भारतीय जनगणनाओं में १,००,००० या उससे अधिक जनसंख्या वाले शहरी क्षत्रों को "नगर" (city) कहा गया है तथा वे शहरी क्षेत्र जो नगरों के निकटवर्ती हैं तथा जिनकी जनसंख्या १,००,००० या उससे अधिक है "नगरवर्ग" (town group) कहे गए हैं। १९६१ की जनगणना के समय नगरों तथा नगर वर्गों में मोटे रूप से शहरी जनसंख्या का ४८ प्रतिशत भाग था। शहरी जनसंख्या का लगभग १२ प्रतिशत भाग उन नगरों में रहता हुआ पाया गया, जिनकी जनसंख्या ५०,००० तथा ९९,९९९ के बीच थी तथा अन्य २० प्रतिशत उन कस्बों में जिनका आकार २०,००० तथा ४९,९९९ के बीच था। इस प्रकार से भारत में शहरी जनसंख्या का तीन चौथाई से कुछ अधिक भाग उन नगरों और कस्बों में रहता है, जिनकी जनसंख्या २०,००० तथा इससे अधिक है। भारत में १०७ नगर हैं, जिनकी जनसंख्या १,००,००० तथा अधिक है, १३९ नगर ५०,००० तथा १,००,००० की जनसंख्या के बीचवाले हैं तथा ५१८ नगर २०,००० तथा ५०,००० की बीच की जनसंख्यावाले हैं।

विभिन्न राज्यों में महाराष्ट्र की शहरी जनसंख्या २८.२ प्रतिशत सबसे अधिक है तथा उड़ीसा की ६.३ प्रतिशत सबसे कम है। महाराष्ट्र के अतिरिक्त मद्रास, गुजरात और पश्चिमी बंगाल अन्य तीन राज्य हैं, जिनकी एक चौथाई जनसंख्या शहरी है। निम्न सारिणी में विस्तृत व्याख्या दी गई है:

सारिणी २५

विभिन्न राज्यों की शहरी जनसंख्या का प्रतिशत, १९६१

राज्य	शहरी जनसंख्या का प्रतिशत	राज्य	शहरी जनसंख्या का प्रतिशत
महाराष्ट्र	२८.२	जम्मू और कश्मीर	१६.६
मद्रास	२६ ७	राजस्थान	१६ ३
गुजरात	२५ ८	केरल	१५ १
पश्चिम बंगाल	२४ ६	मध्य प्रदेश	१४ ३
मैसूर	२२.३	उत्तर प्रदेश	१२ ९
पंजाब	२०.१	बिहार	८.४
आंध्र प्रदेश	१७ ४	असम	७ ७
		उड़ीसा	६ ३

यदि २०,००० तथा अधिक आबादी वाले नगरों में रहने वाली जनसख्या को "प्रभावशाली शहरी" तथा २०,००० से कम वाले नगरों की जनसख्या को "अर्द्ध-शहरी" कहा जाए, तो यह कहा जा सकता है कि जबकि प्रभावशाली शहरी जनसख्या १९३१-४१ के बीच ४७ १ प्रतिशत बढ़ी तथा १९४१-५१ के बीच ५२.६ प्रतिशत बढ़ी, १९५१-६१ के दशक में उसकी वृद्धि केवल ४२.३ प्रतिशत हुई। इसी प्रकार से अर्द्ध-शहरी जनसख्या जब कि १९३१-४१ दशक में १२.३ प्रतिशत के दर पर बढ़ी, तथा १९४१-५१ के दशक में २२.४ प्रतिशत बढ़ी, इसकी वृद्धि १९५१-६१ दशक में केवल १६.४ प्रतिशत रही। इस प्रकार १९५१-६१ के दशक में शहरी वृद्धि की दर १९४१-५१ दशक से धीमी रही है। इस बात से बहुतों को आश्चर्य होता है क्योंकि १९५१-६१ तीव्र औद्योगीकरण का दशक रहा है। शहरी जनसख्या की वृद्धि दर में कमी आने के कारणों में औद्योगीकरण की धीमी गति, ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक दशा में सुधार तथा इसके फलस्वरूप गावों से शहरों में जाकर बसने की धीमी गति, शहरी क्षेत्रों में श्रमिकों की अत्यधिक वृद्धि तथा बढ़ती हुई बेरोजगारी जिससे गावों से आकर शहरों में बसने में आकर्षण नहीं रह जाता, उद्योगों का 'वट-'

बारा एवं संतुलित क्षेत्रीय विकास तथा ऐसे ही अन्य कारण वताए गए हैं। इन कारणों के सम्वन्ध में हमारी जानकारी अव भी सीमित है यह सारी व्याख्या एक धारणा से अधिक नहीं है। पर यह मान लेना तर्कसंगत प्रतीत होता है कि जव १६७६ में भारत की सम्पूर्ण जनसंख्या सम्भावित ६३.० करोड़ के लगभग होगी तथा १६८१ में ७२.० करोड़ के लगभग होगी, तव शहरी जनसंख्या क्रमशः १५.७ तथा १६.० करोड़ होगी।

नागरीकरण पर की गई विवेचना वास्तव में सम्पूर्ण ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में जाकर वसने की विवेचना होगी। इसे समझना कठिन नहीं है। नागरीकरण हुआ ऐसा तव कहा जाता है, जव सम्पूर्ण जनसंख्या का शहरी क्षेत्र में रहनेवाला अनुपात ग्रामीण क्षेत्रों से अधिक तीव्रगति से वढ़ता है। जनसंख्या वृद्धि इन घटकों पर निर्भर करती है (१) प्राकृतिक वृद्धि, अर्थात् मृत्यु पर जन्म की अधिकता, तथा (२) कुल देशान्तरगमन। भारत में शहरी क्षेत्रों में प्राकृतिक वृद्धि की दर ग्रामीण क्षेत्रों से बहुत अलग नहीं है। उदाहरण के लिए नगरों में मृत्युदर ग्रामीण क्षेत्रों से कुछ कम है, पर यही वात जन्मदर पर भी लागू होती है। इस प्रकार से अधिकांश नागरीकरण जनसंख्या के ग्रामीण से नागरी क्षेत्रों में जाकर वसने से होता है।

यह अनुमान किया गया है कि मोटे तौर से १६४१-५१ दशक में नव्वे लाख व्यक्ति तथा १६५१-६१ दशक में ५०.२ लाख व्यक्ति ग्रामीण से नागरी क्षेत्रों में गए हैं।[1] देशान्तरामन की धाराएं केवल महानगरों तथा वड़े औद्योगिक नगरों की ओर नहीं वह रही हैं, वरन् साथ ही सैकड़ों मध्यम आकार के छोटे नगरों की ओर भी प्रवाहित हो रही हैं। यह कहना अब सही न होगा कि भारत के ग्रामीण वाहार वसने को अनिच्छुक हैं अथवा वहिर्गमन प्रधानतया पुरुषों तक ही सीमित है। १६४१-५१ तथा १६५१-६१ के दशकों में स्त्रियों का पुरुषों के ही समान संख्या में नगरों को वहिर्गमन हुआ।

शहरी क्षेत्रों में लोगों का देशान्तरगमन रोजगार की आशा में होता है। १६५१ की जनगणना के जीविका वर्ग के आंकड़ों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि आनेवाले प्रवासियों की वड़ी संख्या गैर-कृपक उद्योगों में व्यस्त थे जैसे उत्पादन, वाणिज्य, परिवहन

---

१. वोग, डी० जे०, तथा जकारिया, के० सी०, "अर्वनाईजेशन एण्ड माइग्रेशन इन इण्डिया," राय टर्नर (सम्पादित) की "इण्डियाज़ अर्वन फ्यूचर" पृ० ३१, जकारिया, के० सी० तथा जे० पी० अम्बन्नवर के "पापुलेशन रीडेस्ट्रीब्यूशन इन इण्डिया ; इन्टर स्टेट एण्ड रूरल अर्वन", ए पेपर प्रेसेन्टेड टू ए सेमीनार हेल्ड इन द इन्स्टीटयूट आफ इकनामिक ग्रोथ, दिल्ली १६६४, में (मिमयो ग्राफ्ड)।

तथा सेवाएं। पर प्रवासी-रोजगार की दो प्रधान शाखाएं कारखानों में उत्पादन तथा नौकरियां ही थीं।

नागरीकरण तथा औद्योगिक विकास का निकट सम्बन्ध है। उन कारणों से जो कि सर्वविदित हैं तथा जिनकी यहां पर व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है, नगरों में उद्योगों के विकास के लिए कुछ विशेष लाभ के अवसर हैं। पर साथ ही नगरों में कुछ खर्च पड़ते हैं, जो आवास, सड़क, शिक्षा, जल संभरण, मल-निर्यात, चिकित्सा की सुविधाएं तथा इस प्रकार के अन्य कार्य, जिनका भार भारतीय अर्थव्यवस्था वर्तमान समय में उठाने की स्थिति में नहीं है। इसीलिए भारत में यह दृढ़ भावना है कि बड़े उद्योगों का तो नगरों में विकास होने देना चाहिए, पर भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार प्रधानतः ग्रामीण होना चाहिए। पर यह स्पष्ट नहीं है कि किस प्रकार से यह सन्तुलित विकास हो सकता है। भारत में शहरी विकास अभी तक अधिकांश रूप में अनियोजित हुआ है, और यदि आर्थिक तथा सामाजिक क्षति को रोकना है, तो योजना एवं नीतियां बनाने वालों को सन्तुलित शहरी-ग्रामीण विकास की समस्या को गम्भीरता से सोचना होगा।

जब कि जनसंख्याविशारदों ने "नागरीकरण" शब्द को संकीर्ण रूप में लोगों के ग्रामीण क्षेत्रों से नागरी क्षेत्रों के आवागमन के अर्थ में प्रयुक्त किया है, समाजशास्त्रियों ने आधुनिकीकरण तथा पश्चिमीकरण के जटिल सामाजिक प्रक्रिया के रूप में इसके अर्थ लिए हैं। यह वह प्रक्रिया है जिससे ग्रामीण क्षेत्र शहरी क्षेत्रों में परिवर्तित हो जाते हैं तथा जिसमें एक शहरी समाज का निर्माण होता है। यह कार्य दो भिन्न प्रक्रियाओं से होता है: (1) शहरी सामाजीकरण, अर्थात् आकर बसने वालों द्वारा शहरी जीवन पद्धति अपनाना तथा (2) ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी प्रभाव का बढ़ जाना। शहरी सामाजीकरण के फलस्वरूप नए सामाजिक आधारों तथा संस्थाओं में भाग लेते हैं, नए व्यवहारों को सीखते हैं तथा नए मूल्यों का विकास करते हैं। दूसरी प्रक्रिया में शहरी प्रभाव ग्रामीण क्षेत्रों में प्रवेश करता है। किसान नगरों में बने हुए वस्त्रों को पहनने लगते हैं, नगरों में बने हुए औजारों और मशीनों का प्रयोग करते हैं तथा नगरों से निर्मित वस्तुओं को खरीदते हैं। उनके पसन्द के नमूने एवं अभिरुचियां, उनके विचार तथा व्यवहार नगरों के सांचे में ढले होते हैं। नागरीकरण की प्रक्रिया विकेन्द्रीकृत विचारों तथा भिन्न व्यवहार की ओर ले जाती है। इस अर्थ में नागरीकरण की प्रक्रिया अभी तक हमारे देश में आरम्भ नहीं हुई है।

अध्याय ६

भविष्य में भारत की जनसंख्या की वृद्धि

योजनाकार तथा नीति निर्धारक जनसंख्या के भविष्य के आकार तथा वृद्धि दर जानने को उत्सुक हैं, क्योंकि आर्थिक एवं सामाजिक विकास के यथार्थवादी नक्शों को प्रस्तुत करने में उन्हें इन सूचनाओं की आवश्यकता है। जनसंख्या का भविष्य खाका बनाने वाले जनसंख्याविशारदों की अक्सर आलोचना की जाती है कि उनके अनुमान सही नहीं उतरते। पर खाका क्या होता है तथा कैसे बनाए जाता है, इस बात के अपूर्ण ज्ञान पर यह आलोचना आधारित है। जनसंख्या का खाका वास्तव में भविष्य की जनसंख्या के आकार की निश्चित भविष्यवाणी नहीं होती है और न ही उन्हें जनसंख्या के सम्भावित यौन तथा आयु के विभाजन का संकेत समझना चाहिए। सही अर्थों में वे केवल इतना है कि दी हुई भविष्य तिथियों में यदि प्रसवन दर, मृत्यु-दर तथा देशान्तरगमन कुछ निश्चित प्रवृत्तियों पर चलते हैं, तो जनसंख्या के आकार, यौन तथा आयु की संरचना क्या होगी। प्रसवन, मृत्युदर तथा देशान्तरगमन के स्तर को निर्धारित करनेवाले कारणों के सम्बन्ध में हमारा ज्ञान पूर्ण नहीं है, इसलिए धारणाओं में अनिश्चितता का तत्व रहता है और इसलिए इस बात की सदैव सम्भावना रहेगी कि खाका वास्तविक न निकले। पर महत्वपूर्ण बात यह है कि जो जनसंख्या का खाका तैयार करते हैं तथा वे भी जो इनका उपयोग करते हैं, उनको बराबर यह बात अपने मस्तिष्क में रखनी चाहिए कि अनुमानों में अनिश्चितता की मात्रा रहती है तथा जितने अधिक समय के लिए ये खाके तैयार किए जाएंगे, उतनी ही अधिक अनिश्चितता की सम्भावना है।

भारत की जनसंख्या के लिए समय-समय पर कई खाके प्रस्तुत किए गए हैं। केवल कुछ का उल्लेख किया जा रहा है। किंग्सले डेविस (१९४९) ने यह विचार किया कि भारत की जनसंख्या १.२ प्रतिशत की दर से प्रतिवर्ष बढ़ने की सम्भावना

---

१. डेविस, किंग्सले "द [illegible] आफ इंडिया एण्ड पाकिस्तान" प्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस, १९[illegible] [illegible]० सं० ८८-[illegible]

है, जबकि जनगणना कमिश्नर श्री आर० ए० गोपालस्वामी[1] (१९५१) ने यह अनुमान व्यक्त किया कि जनसंख्या १.३४ प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से बढ़ सकती है। जिससे इनका यह अनुमान था कि १९८१ में भारत की जनसंख्या ३८.४ तथा ४०.३ करोड़ होगी, कोल तथा हूवर[2] (१९५८) का, जिन्होंने विभिन्न धारणाओं पर आधारित है ए मान्यों के क्रम को तैयार किया, अनुमान था कि १९६१ में जनसंख्या ४१.८ तथा ४२.० करोड़ के बीच होगी। भविष्य भारत की जनसंख्या की सम्भावित वृद्धि का अनुमान लगाने के लिए भारत सरकार द्वारा जीवन-मरण आंकड़े तथा स्वास्थ्य सांख्यिकीय पर नियुक्त विशेषज्ञों की समिति ने[3] यह अनुमान लगाया कि १९६१ में भारत की जनसंख्या ४०.५ करोड़ तक होगी। ये सभी अनुमान कम हो रहे क्योंकि १९६१ में जनसंख्या ४३.९ करोड़ पाई गई। इस संक्षिप्त विवरण से यह पता लगता है कि जनसंख्या अनुमान भविष्य की जनसंख्या के सम्बन्ध में केवल मात्र अनुमान ही है तथा अवधि से अवधि अनुमान में भी त्रुटि होती ही है।

भारत के लिए नवीनतम जनसंख्या अनुमान, १९६१ की जनगणना के प्रारम्भिक जनसंख्या के आंकड़ों के प्रकाशित होने के बाद, १९६३ में नियुक्त एक विशेषज्ञ समिति ने तैयार किया। समिति ने तीन अनुमानों के वर्ग तैयार किए—उच्च, मध्यम तथा निम्न—तथा तीसरी और चौथी पंचवर्षीय योजनाओं ने मध्यम प्रक्षेपणों का उपयोग किया।

मध्यम प्रक्षेपण इस धारणा पर आधारित है कि १९६६ तक प्रसवनशक्ति में कोई परिवर्तन नहीं आएगा। पर यह माना गया है कि यह १९६६-७० के बीच ५ प्रतिशत तक घटेगी, १९७१-७५ के बीच १० प्रतिशत तक; तथा १९७६-८० के बीच २० प्रतिशत तक घटेगी। मृत्युसंख्या के गिरने की सम्भावना इस प्रकार मानी गई है कि जन्म के समय जीवन की सम्भावना वार्षिक दर से १९६१-७० में ०.९ वर्ष तथा

---

१. सेन्सस कमिश्नर आफ इण्डिया, सेन्सस आफ इण्डिया, १९५१, अध्याय १, भाग १-अ, रिपोर्ट, पृ० सं० १७६-१८०।

२. कोल, ए० जे० तथा एडगर एम० हूवर, "पापुलेशन ग्रोथ एण्ड इकनामिक डेवलपमेंट इन लो इनकम कन्ट्रीज़ प्रिंसटन", प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, १९५८, पृ० सं० ३५६-३६७

३. भारत के रेजिस्ट्रार जेनरल, एस्टीमेट्स आफ इंडियाज़ पापुलेशन फार १९६१ एण्ड १९६६ नई दिल्ली भारत, के रेजिस्ट्रार जेनरल का कार्यालय, १९५९, पृ० सं (मिमियो ग्राफ्ड)

१९७१-८० में ०.७५ वर्ष बढ़ेगी। तदनुसार भारत की जनसंख्या १९६६ में ४९.४ करोड़ तथा १९८१ में ६९.३ करोड़ तक बढ़ जाने की सम्भावना है। सारिणी २६ में सम्पूर्ण जनसंख्या के यौन के आधार पर अनुमान दिए गए हैं तथा सारिणी २७ में मध्यम प्रक्षेपणों के १९६१-८१ की अवधि के जन्मदर, मृत्युदर तथा वृद्धिदर दी गई है।

इस बात का संकेत किया जा सकता है कि जनसंख्याविशारदों में भारत में मृत्युदर के ह्रास की सम्भावित भविष्य दर के सम्बन्ध में यथेष्ट मात्रा में मतैक्य है। पिछले ४० वर्षों में मृत्युदर लगभग आधी हो गई है तथा इस बात की सम्भावना है कि अगले २० वर्षों में इसमें और पचास प्रतिशत तक ह्रास होगा। इसके १९८१ तक प्रति १००० की जनसंख्या पर ९ या १० तक के निम्न स्तर तक पहुंचने की सम्भावना है, जो अधिकांश आधुनिक देशों की मृत्युदर का स्तर है। पर प्रजननशक्ति के गिरने का मार्ग अनिश्चित है। ऐसा इसलिए है कि प्रजननशक्ति बाहरी उद्दीपनों से प्रभावित होकर स्वतः नहीं घटती है। जब तक लोग गर्भधारण को रोकने के लिए कुछ विधियों का प्रयोग नहीं करते, प्रसवनसंख्या घट नहीं सकती है। निरोधक विधियों का प्रयोग लोगों में छोटे परिवार की इच्छा पर निर्भर करता है। यह मालूम नहीं है कि भारत के विवाहित दंपतियों की विशाल बहुसंख्या परिवार नियोजन के विधियों का प्रयोग करेगी अथवा नहीं, इसीलिए प्रसवनशक्ति गिरने की सम्भावित दर की पूर्वसूचना देना कठिन है।

सारिणी २८ तथा २९ में चुने हुए वर्षों में विभिन्न आयुवर्गों के स्कूल जानेवाले बच्चों की अनुमानित संख्या दी गई है। ये आंकड़े मध्यम अनुमानों पर आधारित हैं। ६ से १० तक की आयु कक्षा एक से पांच तक ११-१३ की आयु कक्षा ६ से ८ तक के, १४-१५ की आयु कक्षा ९ से १० तक तथा १६-१७ की आयु कक्षा ११ १२ तक के सदृश हैं। यह बात ध्यान देने की है कि आयु वर्ग ६-१० के स्कूल जानेवाले बच्चों की संख्या, जो १९६१ में ५.६ लाख थी १९८१ में बढ़कर ८.९ लाख हो जाएगी। इसी प्रकार से जो लोग आयु ११-१३ वर्ग में हैं, वे १९६१-८१ के बीच २.९ लाख से बढ़कर ५.१ लाख हो जाएंगे। इससे जनसंख्या की गति के परिणामस्वरूप समस्या की विशालता की कुछ कल्पना की जा सकती है।

सारिणी ३० तथा ३१ में १९६६-८१ की अवधि के पुरुषों और स्त्रियों की श्रमजीवी जनसंख्या के अनुमान दिए गए हैं। १५-५९ वाले आयुवर्ग में काम करने के लिए उपलब्ध व्यक्तियों को श्रमजीवी श्रेणी में आते हैं। १९६१ में १२.९ करोड़

विभिन्न आयु वर्गों के स्कूल जानेवाले बच्चों की अनुमानित संख्या, १९६६, (,००में)

राज्य	पु० ६-१०		११-१३ आयु वर्ग		१४-१५		१६-१७	
	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
आंध्र प्रदेश	२४६४८	२४६११	१३०४०	१२९६६	८२५४	८१९६	७९९४	७९३३
असम	९८८२	१००२०	५०८७	५०२६	३१०२	३०१०	२८९६	२७६९
बिहार	३६७३७	३६२११	१९५८७	१८७७४	११८७२	११०८२	१०८९९	९९४७
गुजरात	१६६६९	१५६८७	८८१५	८२८५	५४१३	५०७६	५०६४	४७३४
जम्मू और कश्मीर	२४३७	२२७०	१३६३	१२२५	८६३	७७५	८२७	७४८
केरल	१२६५३	१२१६४	६७५९	६६२३	४१७३	४१८०	३९१९	४००९
मध्य प्रदेश	२५७३४	२५१६५	१२७८५	१२३२३	७६१२	७२५७	६९९९	६६१४
मद्रास	२२२७१	२१७९३	११७४४	११५३४	७३९९	७३७०	७१४४	७२२०
महाराष्ट्र	२९६०६	२८९९६	१५९३२	१५२०२	९९२१	९२२५	९३९३	८५४०
मैसूर	१७६६१	१७३५८	८८९४	८७४२	५५५४	५४७७	५३६८	५३१२
उड़ीसा	१२३३०	१२७३१	६५४४	६८०७	४०९९	४२०८	३९१९	३९५६
पंजाब	१७१२५	१५१९६	९११८	८१०४	५६७१	५००८	५३००	४७०२
राजस्थान	१६६२७	१५५३३	८५९२	८०३७	५२७८	४९१८	४९७०	४६०५
उत्तर प्रदेश	५५९४२	५१९५७	२८२९०	२६८३१	१७७०४	१६६०८	१७१२८	१५७७४
प० बंगाल	२६७५३	२६९२३	१३५८३	१३५०६	८४५७	८२४४	८१३०	७७६१
भारत	३३४२१६	३२३६७१	१७३८८७	१६७४३०	१०७५९२	१०२७१९	१०२००५	९६५९३

पुरुष श्रमजीवी थे। उनकी संख्या १९६६ में १३.८ करोड़ तथा १९८१ में २०.२ करोड़ तक बढ़ने की सम्भावना है। उसी प्रकार से श्रमजीवी आयुवर्ग की स्त्रियों की संख्या १९६६ के १२.६ करोड़ से १९८१ में १८.६ करोड़ तक बढ़ने की संभावना है, इससे बढ़ती हुई जनसंख्या को काम देने के लिए अतिरिक्त सेवा सुविधाओं के निर्माण किए जाने की आवश्यकता की कल्पना की जा सकती है।

सारिणी २६

यौन आधार पर भारत की प्रक्षिप्त जनसंख्या, १९६६-१९८१ (दस लाख में)

	उच्च अनुमान	मध्यम अनुमान	निम्न अनुमान
१९६६			
कुल	४९४	४९४	४९४
पुरुष	२५५	२५५	२५५
स्त्री	२३९	२३९	२३९
१९७१			
कुल	५६३	५५८	५५५
पुरुष	२९०	२८८	२८६
स्त्री	२७३	२७०	२६८
१९७६			
कुल	६४३	६२९	६१५
पुरुष	३३२	३२५	३१८
स्त्री	३११	३०४	२९७
१९८१			
कुल	७२३	६९३	६६६
पुरुष	३७३	३५८	३४४
स्त्री	३५०	३३५	३२२

सारिणी २७

सामान्य प्रजनन शक्ति दर, जन्म दर तथा मृत्युदर, १९६१-८१

	सामान्य प्रजननदर	जन्मदर	मृत्युदर	प्राकृतिक वृद्धि की दर
१९६१-६६	१९५	४१.०	१७.२	२३ ८
१९६६-७१	१८५	३८ ६	१४ ०	२४ ६
१९७१-७६	१६७	३५ १	११.३	२३ ८
१९७६-८१	१३३	२८ ७	९.७	१९ ५

१९७१-८० में ०.७५ वर्ष बढ़ेगी। तदनुसार भारत की जनसंख्या १९६६ में ४९.४ करोड़ तथा १९८१ में ६९.३ करोड़ तक बढ़ जाने की सम्भावना है। सारिणी २६ में सम्पूर्ण जनसंख्या के यौन के आधार पर अनुमान दिए गए हैं तथा सारिणी २७ में मध्यम प्रक्षेपणों के १९६१-८१ की अवधि के जन्मदर, मृत्युदर तथा वृद्धिदर दी गई है।

इस बात का संकेत किया जा सकता है कि जनसंख्याविशारदों में भारत में मृत्युदर के ह्रास की सम्भावित भविष्य दर के सम्बन्ध में यथेष्ट मात्रा में मतैक्य है। पिछले ४० वर्षों में मृत्युदर लगभग आधी हो गई है तथा इस बात की सम्भावना है कि अगले २० वर्षों में इसमें और पचास प्रतिशत तक ह्रास होगा। इसके १९८१ तक प्रति १००० की जनसंख्या पर ९ या १० तक के निम्न स्तर तक पहुंचने की सम्भावना है, जो अधिकांश आधुनिक देशों की मृत्युदर का स्तर है। पर प्रजननशक्ति के गिरने का मार्ग अनिश्चित है। ऐसा इसलिए है कि प्रजननशक्ति बाहरी उद्दीपनों से प्रभावित होकर स्वतः नहीं घटती है। जब तक लोग गर्भधारण को रोकने के लिए कुछ विधियों का प्रयोग नहीं करते, प्रसवनसंख्या घट नहीं सकती है। निरोधक विधियों का प्रयोग लोगों में छोटे परिवार की इच्छा पर निर्भर करता है। यह मालूम नहीं है कि भारत के विवाहित दंपतियों की विशाल बहुसंख्या परिवार नियोजन के विधियों का प्रयोग करेगी अथवा नहीं, इसीलिए प्रसवनशक्ति गिरने की सम्भावित दर की पूर्वसूचना देना कठिन है।

सारिणी २८ तथा २९ में चुने हुए वर्षों में विभिन्न आयुवर्गों के स्कूल जानेवाले बच्चों की अनुमानित संख्या दी गई है। ये आंकड़े मध्यम अनुमानों पर आधारित हैं। ६ से १० तक की आयु कक्षा एक से पांच तक ११-१३ की आयु कक्षा ६ से ८ तक के, १४-१५ की आयु कक्षा ९ से १० तक तथा १६-१७ की आयु कक्षा ११ १२ तक के सदृश हैं। यह बात ध्यान देने की है कि आयु वर्ग ६-१० के स्कूल जानेवाले बच्चों की संख्या, जो १९६१ में ५.६ लाख थी १९८१ में बढ़कर ८.९ लाख हो जाएगी। इसी प्रकार से जो लोग आयु ११-१३ वर्ग में हैं, वे १९६१-८१ के बीच २.९ लाख से बढ़कर ५.१ लाख हो जाएंगे। इससे जनसंख्या की गति के परिणामस्वरूप समस्या की विशालता की कुछ कल्पना की जा सकती है।

सारिणी ३० तथा ३१ में १९६६-८१ की अवधि के पुरुषों और स्त्रियों की श्रमजीवी जनसंख्या के अनुमान दिए गए हैं। १५-५९ वाले आयुवर्ग में काम करने के लिए उपलब्ध व्यक्तियों को श्रमजीवी श्रेणी में आते हैं। १९६१ में १२.९ करोड़

पुरुष श्रमजीवी थे। उनकी संख्या १९६६ में १३.८ करोड़ तथा १९८१ में २०.२ करोड़ तक बढ़ने की सम्भावना है। इसी प्रकार से श्रमजीवी आयुवर्ग की स्त्रियों की संख्या १९६६ के १२.६ करोड़ से १९८१ में १८.९ करोड तक बढ़ने की सम्भावना है, इससे बढ़ती हुई जनसंख्या को काम देने के लिए अतिरिक्त सेवा सुविधाओं के निर्माण किए जाने की आवश्यकता की कल्पना की जा सकती है।

सारिणी २६

यौन आधार पर भारत की प्रक्षिप्त जनसंख्या, १९६६-१९८१ (दस लाख में)

	उच्च अनुमान	मध्यम अनुमान	निम्न अनुमान
१९६६			
कुल	४९४	४९४	४९४
पुरुष	२५५	२५५	२५५
स्त्री	२३९	२३९	२३९
१९७१			
कुल	५६३	५५८	५५५
पुरुष	२९०	२८८	२८६
स्त्री	२७३	२७०	२६८
१९७६			
कुल	६४३	६२९	६१५
पुरुष	३३२	३२५	३१८
स्त्री	३११	३०४	२९७
१९८१			
कुल	७२३	६९३	६६६
पुरुष	३७३	३५८	३४४
स्त्री	३५०	३३५	३२२

सारिणी २७

सामान्य प्रजनन शक्ति दर, जन्म दर तथा मृत्युदर, १९६१-८१

	सामान्य प्रजननदर	जन्मदर	मृत्युदर	प्राकृतिक वृद्धि की दर
१९६१-६६	१९५	४१.०	१७.२	२३.८
१९६६-७१	१८५	३८.६	१४.०	२४.६
१९७१-७६	१६७	३५.१	११.३	२३.८
१९७६-८१	१३३	२८.७	९.२	१९.५

सारिणी २८

विभिन्न आयु वर्गों के स्कूल जानेवाले बच्चों की अनुमानित संख्या, १९६६, (,००में)

राज्य	पु० ६-१०		११-१३ आयु वर्ग		१४-१५		१६-१७	
	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
आंध्र प्रदेश	२४६४८	२४६११	१३०४०	१२९९९	८२५४	८१९६	७९९४	७९३३
असम	९८८२	१००२०	५०८७	५०२६	३१०२	३०१०	२८९६	२७९९
बिहार	३६७३७	३६२११	१९५८७	१८७७४	११८७२	११०८२	१०८९९	९९४७
गुजरात	१६६६९	१५६८७	८८१५	८२८५	५४१३	५०७६	५०६४	४७३४
जम्मू और कश्मीर	२४३७	२२७०	१३६३	१२२५	८६३	७७५	८२७	७४८
केरल	१२६५३	१२१६४	६७५९	६६२३	४१७३	४१८०	३९१९	४००९
मध्य प्रदेश	२५७३४	२५१६५	१२७८५	१२३२३	७६१२	७२५७	६९९९	६६१४
मद्रास	२२२७१	२१७९३	११७४४	११५३४	७३९९	७३७०	७१४४	७२२०
महाराष्ट्र	२९६०६	२८९९६	१५९३२	१५२०२	९९२१	९२२५	९३९३	८५४०
मैसूर	१७६६१	१७३५८	८८९४	८७४२	५५५४	५४७७	५३६८	५३१२
उड़ीसा	१२३३०	१२७३१	६५४४	६८०७	४०९९	४२०८	३९१९	३९५६
पंजाब	१७१२५	१५१९६	९१९८	८१०४	५६७१	५००८	५३००	४७०२
राजस्थान	१६६२७	१५५३३	८५९२	८०३७	५२७८	४९१८	४९७०	४६०५
उत्तर प्रदेश	५५९४२	५१९५७	२८२९०	२६८३१	१७७०४	१६६०८	१७१२८	१५७७४
प० बंगाल	२६७५३	२६९२३	१३५८३	१३५०६	८४५७	८२४४	८१३०	७७६१
भारत	३३४२१६	३२३६७१	१७३८८७	१६७४३०	१०७५९२	१०२७१९	१०२००५	९९५९३

सारिणी २६

विभिन्न आयु वर्गों के स्कूल जानेवाले बच्चों की अनुमानित संख्या, १९८१ (,००) में

राज्य	आयु वर्ग							
	६-१०		११-१३		१४-१५		१६-१७	
	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
आन्ध्र प्रदेश	३३५३६	३१४२७	१९२९९	१८०२१	१२२९८	११४६८	११७७१	१०९५०
असम	१५६८९	१५५३६	८६७६	८२६०	५३३३	५०७१	४९८९	४७०९
बिहार	६९३५८	६३११४	२७६११	२६३९७	१७४०६	१६६२३	१६५४८	१५७७६
गुजरात	२४१६३	२२५८७	१३६६६	१२७५६	८६६४	८०६२	८२५९	७६६०
जम्मू और कश्मीर	२९५५	२८२०	१७३६	१६०४	११२९	१०३९	११०१	१०१६
केरल	१७७५१	१६३०२	१०१३९	९३४६	६४१३	५९३९	६०८८	५६६६
मध्य प्रदेश	३४७४८	३२७०४	१९५१७	१८३८५	१२३७५	११५८२	११८१२	१०९७८
मद्रास	२६९६८	२५२१६	१५७६०	१४७४१	१०११०	९४३८	९७२०	९०४४
महाराष्ट्र	४१९६२	३९०७९	२३९८९	२२३३४	१५३४६	१४२४७	१४७४४	१३६४८
मैसूर	२४६२२	२२९३९	१३९२३	१२९७७	८८११	८१७८	८३७७	७७४४
उड़ीसा	१७४०२	१६५९०	९९६५	९४९७	६३४६	६०३२	६०६१	५४५४
पंजाब	२६४५८	२३७९२	१४९१३	१३३८७	९३९७	८४४३	८९०२	८००६
राजस्थान	२४१५४	२१८६१	१३६६०	१२३३६	८६३६	७७८६	८२०७	७३९०
उत्तर प्रदेश	७४३२०	६९९७४	४२२२५	३९७५३	२६७६०	२५१४५	२५४७३	२३८८६
प० बंगाल	४०४०५	३८४२३	२२५४४	२१४५९	१४१७४	१३४६५	१४४१०	१२७२०
भारत	४६१३९५	४३२४१५	२६०५२४	२४४८२७	१६५२७९	१५५०४७	१५७७२९	१४७६०६

सारिणी ३०

राज्यों के आधार पर प्रक्षिप्त श्रमजीवी १९६६-१९८१ (,०० में)

पुरुष

राज्य	१९६६	१९७१	१०७६	१९८१
आंध्र प्रदेश	१११४३९	१२२४२९	१३६६५६	१५४३२८
असम	३७३२३	४२२८०	४८७७७	५७२०२
बिहार	१३५४८८	१५४९५७	१७८५१९	२०५५६३
गुजरात	६३६५७	७२७६२	८३८२२	९७८८४
जम्मू और कश्मीर	११२१२	११९३९	१२८४८	१४२०९
केरल	५०४८३	५७७१६	६६२७०	७६५९७
मध्य प्रदेश	१०००६१	११२२७८	१२९३४५	१४८४८२
मद्रास	१०६०६३	११५५२५	१२७८१९	१४०९३६
महाराष्ट्र	१२६०८८	१४१९६३	१६०६४३	१८४२८२
मैसूर	७३१५५	८१४६०	९२९३३	१०६३१६
उड़ीसा	५४५९६	५९३४८	६६६७८	७६०६२
पंजाब	६३९७२	७४१०२	८६०४२	१०२०७७
राजस्थान	६४०५१	७३२७८	८४५७१	९९२६८
उत्तर प्रदेश	२३३५४३	२५८४३०	२९३६७७	३३३१३५
पश्चिम बंगाल	११५४५५	१२८०६७	१४५१४३	१६६३५५
भारत	१३७५६४०	१५४५९२०	१७६३३००	२०१८७७०

सारिणी ३१

राज्यों के आधार पर प्रक्षिप्त श्रमजीवी १९६६-१९८१ (,००में)

स्त्री

राज्य	१९६६	१९७१	१९७६	१९८१
आंध्रप्रदेश	१०७३५८	११८४४४	१३२९०३	१४९३६१
असम	३०९२८	३६७२४	४४३०७	५३१०१
बिहार	१३३७०२	१५२०९९	१७५४८४	२०११०५
गुजरात	५८६२६	६७१६३	७७४४३	९०३१७
जम्मू और कश्मीर	९४७८	१०१६६	१०९३२	१२२१४
केरल	५२२०६	५९००५	६६९०२	७६०९६
मध्य प्रदेश	९२५४१	१०४७०६	१२१७७१	१३९७७२
मद्रास	१०५०५२	११४२६५	१२६२९६	१३८२४४
महाराष्ट्र	११५०९०	१३०८१९	१५००२४	१७२६१०
मैसूर	५८३०९	७७०२४	८८७५९	१०१४२२
उडी—	५३५९९	५८७८३	६६५५८	७५४९६
	५४९१५	६३९५३	७४६४४	८९०३९
	५६४७८	६५११३	७६०४३	८८८५२
	२०७५१९	२३२३५९	२६४९५८	३०२७४२
।त	९४६२८	१०९८९५	१२८८९६	१५१४३८
	१२६३९५०	१४३२१८०	१६४७८१०	१८९२२८०

अध्याय १०

जनसंख्या वृद्धि तथा खाद्य पूर्ति

खाद्य समस्या हमारी आधारभूत आर्थिक समस्या है। इसका कारण यह है कि भारतीय जनसख्या में कम-से-कम प्रत्येक चार मे एक, तथा सम्भवतः प्रत्येक तीन मे एक मन्दपोषित है। मन्दपोषण किस हद तक है, यह आकना और भी कठिन है। "प्रमाण यह सकेत करते हैं कि यह कही अधिक है तथा भारत के लिए मन्दपोषण कम-से-कम पचास प्रतिशत तक हो सकता है। इसके अतिरिक्त मन्दपोषितों मे से बहुसख्यक कुपोषित भी हैं। इससे यह लगता है कि भारत की जनसंख्या मे से कोई २५.० करोड़ आज या तो मन्दपोषित हैं या कुपोषित, अथवा दोनों"[1]। पर यह आश्चर्यजनक नही है, क्योकि ६० प्रतिशत से अधिक जनसख्या का प्रतिव्यक्ति उपभोक्ता व्यय पचास पैसे प्रतिदिन से भी कम है।

तृतीय पंचवर्षीय योजना के प्रथम तीन वर्षों मे भारत में कृषि उत्पादन ८ करोड़ टन के आसपास था। पर १९६४-६५ से हमारे यहा सौभाग्य से ८.८ करोड़ टन की उपज की कुल खाद्यान्नो की भरी पूरी फसल हुई। यह आशा की जाती थी, कि १९६५-६६ में, जो तीसरी योजना का अन्तिम वर्ष था, उपज ९.२ करोड़ टन के आसपास होगी। पर इसके स्थान पर मानसून की गड़बड़ी के परिणामस्वरूप उत्पादन अपने १९६४-६५ के स्तर से अनुमानतः १.० से १.२ करोड़ टन नीचे आ गया। (सारिणी ३२)।

१९६१ मे भारत की जनसख्या ४३.९ करोड़ थी। उसके १९७१ तक ५५.८ करोड़ तक होने की सम्भावना है। तृतीय पंचवर्षीय योजना के अनुसार राष्ट्रीय आय के १९६०-६१ के १४,५०० करोड़ रुपये से १९७०-७१ में २५,००० करोड़ रुपये तक और प्रति व्यक्ति आय १९६०-६१ में ३३० रुपये से १९७०-७१ में ४५० रुपये तक बढ़ने की आशा है। जनसंख्या वृद्धि खाद्यान्नों की माग की आय का लचीलापन तथा इस प्रकार के अन्य कारणों को ध्यान मे रखते हुए १९७०-७१ मे खाद्यान्नों की माग

1. सुखात्मे, पी० वी० फीडिंग इंडियाज ग्रोइंग मिलियन्स बम्बई, एशिया पब्लि० हाउस, १९६५ पृ० ७५।

का अनुमान लगभग १२.० करोड़ टन किया गया (सारिणी ३३)।

खाद्यान्नों की आवश्यकता के अनुमान पोषण के दृष्टिकोण से भी किए गए हैं। यह अनुमान कैलोरी की आवश्यकता के न्यूनतम तथा माध्यमिक स्तरों पर आधारित हैं। मोटे तौर पर न्यूनतम स्तर में छै वर्ष से कम की आयु के शिशुओं और आंशिक रूप से अन्य सुवेध्य वर्ग के लिए पशु प्रोटीनों की आवश्यकताएं आती हैं। माध्यमिक स्तर इनके अतिरिक्त ६ से १६ वर्ष की आयु के स्कूल जानेवाले बच्चों की पशु प्रोटीन सम्बन्धी आवश्यकताओं को और पूर्ण रूप से समेटता है तथा अन्य सुवेध्य वर्गों के लिए अधिक पर्याप्त व्यवस्था करता है। न्यूनतम तथा माध्यमिक स्तरों में कुल केलोरियों में महत्त्वपूर्ण अन्तर नहीं हैं, पर विवरण में अन्तर है (सारिणी ३४)।

सारिणी ३२

भारत में चुने हुए विशेष वर्षों में खाद्यान्नों का उत्पादन तथा आयात, १९५०-५१, १९६४-६५

(दस लाख टन में)

वर्ष	चावल	गेहूं	अन्य अनाज	कुल अनाज	दालें	कुल खाद्यान्न	खाद्यान्नों का आयात
१९५०-५१	२०.६	६.५	१५.४	४२.५	८.४	५०.९	२.२
१९५५-५६	२७.६	८.८	१९.५	५५.९	११.०	६६.९	०.७
१९६०-६१	३४.६	११.०	२३.७	६९.३	१२.७	८२.०	५.१
१९६१-६२	३५.७	१२.१	२३.२	७१.०	११.८	८२.८	३.५
१९६२-६३	३१.९	१०.८	२४.३	६७.०	११.४	७८.४	३.६
६३-६४	३६.९	९.९	२३.४	७०.२	१०.१	८०.३	४.६
-६५	३८.७	१२.१	२५.२	७६.०	१२.४	८८.४	६.३

सारिणी ३३

अनुमानित मांग खाद्यान्नों की १९७०-७१ में

(दस लाख टन में)

अनुमान करनेवाले	अनाज	दालें	कुल खाद्यान्न
१. वर्किंग ग्रुप, कृषि विभाग	१०६ २	१६ ६	१२२.६
२. पर्सपेक्टिव प्लैनिंग डिवीजन योजना आयोग	——	——	१२२-१२७
३. नेशनल कौन्सिल आफ एप्लाईड इकोनोमिक रिसर्च	९४.३	२०.६	११४ ९

सारिणी ३४

न्यूनतम तथा माध्यमिक स्तरो मे कैलोरियो में मूल्य

वस्तु	न्यूनतम स्तर	माध्यमिक स्तर
अनाज	१४२३	१३२४
दालें तथा गिरीदार फल	३२६	२९७
मण्डमय जड़ें	४३	४३
फल तथा तरकारियां	५२	६०
शक्कर	१७६	१९७
दूध तथा दुग्ध का उत्पादन	१६६	२३३
मांस, मछली तथा अण्डे	२६	४७
चर्बी तथा तेल	१५९	१७९
कुल	२३७५	२३७८

डा० पी० वी० सुखात्मे[1] तथा डा० वी० के आर० वी० राव[2] ने भी न्यूनतम और माध्यम क्षेत्रों के आधार पर खाद्यान्नों तथा पशु उत्पादनों की आवश्यकताओं के अनुमान किए हैं। डा० राव और डा० सुखात्मे सम्पूर्ण केलोरी सम्बन्धी आवश्यकताओं पर सहमत हैं, पर अनाजों तथा मण्डमय जड़ों से केलोरियों की प्राप्ति में मतभेद रखते हैं। वे विशेष रूप से १९७१ के बाद की जनसंख्या वृद्धि की अनुमानित दर में भी मतभेद रखते हैं। हमारे अनुमान डा० सुखात्मे के केलोरिक आवश्यकता के न्यूनतम तथा मध्यम क्षेत्रों पर तथा विशेषज्ञ समिति के जनसंख्या वृद्धि के अनुमानों पर आधारित हैं। डा० सुखात्मे तथा डा० राव के अनुमान (सारिणी ३६) में दिए गए हैं।

सारिणी ३६

न्यूनतम तथा मध्यम लक्ष्यों के आधार पर खाद्य की आवश्यकताएं

१९७१-८१

	न्यूनतम लक्ष्य				मध्यम लक्ष्य	
	१९७१		१९७६		१९८१	
	सुखात्मे	राव	सुखात्मे	राव	सुखात्मे	राव
अनाज	८१.६	७८.६	९१.९	८७.६	९४.४	८६.३
मण्डमय जड़ें	९.३	१६.४	१०.५	१८.२	११.६	२३ ७
शक्कर	१०.१	१०.१	११.४	११ २	१४.१	१३ ६
दालें तथा गिरीदार फल	२१.१	२०.९	२३ ७	२३ ४	२३ ९	२३ १
फल तथा तरकारियां	२७.८	३२ ८	३१.२	३६.६	३९.८	४७ ४
मांस	१.४	१.४	१.६	१.६	२ ५	२.४
मछली	३.४	३.४	३ ९	३ ८	८.१	७.८
अण्डे	०.४	०.४	०.४६	० ४४	१.३	१.२
दूध	४०.७	४०.४	४५.८५	४५.०	६९.८	६७.३
चर्बी	३.७	३ ६	४.१	४.०	५ ०	४ ९

१. सुखात्मे, पी० वी०, फंडिंग इंडियाज़ ग्रोइंग मिलियन्स, बंबई: एशिया पब्लिशिंग हाउस, सन् १९६५ पृ० सं० १७२

२. राव. वी० के० आर० वी०, "इंडियाज लाग टर्म फूड प्रोब्लम," सन् १९६६ के मथारे मेमोरियल लैक्चर्स, त्रिवेंद्रम : केरल विश्वविद्यालय, सन् १९६६ पृ० सं० ४८

दोनों अनुमान यह संकेत करते हैं कि १९७०-७१ में खाद्यान्नों की मांग १२.० करोड़ टन के आसपास होगी। इसके तात्पर्य यह हुए कि चौथी योजना की अवधी में १९६५-६६ के ७.२ करोड़ टन के खाद्यानों के उत्पादन से लगभग ४.८ करोड़ टन अधिक खाद्यान उत्पादन की वृद्धि के प्रयास करने होंगे। दूसरे शब्दों में कृषि उत्पादन में वार्षिक दर से १० प्रतिशत से कुछ ऊपर वृद्धि करनी होगी। यह सरल कार्य नहीं, क्योंकि १९४९-५० से १९६१-६२ तक की अवधि में १९५१-५२ में त्रैवार्षिक समाप्ति को आधार मानकर कृषि उत्पादन में चार प्रतिशत की दर से वार्षिक वृद्धि हुई। गेहूं और चावल के उत्पादन की वृद्धि दर ४.३ प्रतिशत तथा ७ प्रतिशत क्रमशः प्रतिवर्ष निकाली गई है। फसल के क्षेत्र की वृद्धि की दर २ प्रतिशत प्रतिवर्ष हुई तथा कृषि उत्पादन में १.५ प्रतिशत प्रतिवर्ष के लगभग विकास हुआ। पर आगे की योजनाओं में कृषि उत्पादकता के अंतर्गत क्षेत्रफल की वृद्धि का क्षेत्र सीमित प्रतीत होता है और इसीलिए ५ या ६ प्रतिशत प्रतिवर्ष की वृद्धि भी कठिन दिखाई पड़ती है। पर जिस वात की आवश्यकता है, वह वार्षिक दर पर दस प्रतिशत की वृद्धि है।

केवल खाद्यान्न ही नहीं, वल्कि मण्डमय जड़ों, शक्कर, तिलहनों, दूध तथा दुग्ध उत्पादनों, मांस, अण्डे तथा मछली के १९७१ के न्यूनतम पोपक लक्ष्य चौथी योजना के अंतर्गत निर्धारित लक्ष्यों से ऊंचे हैं। उदाहरण के लिए चौथी योजना में दूध तथा दुग्ध उत्पादनों का लक्ष्य ३२ करोड़ २ लाख ५ हज़ार टन है, जव कि १९७१ में ४२ करोड़ ४ लाख २० हज़ार टन उत्पादन की आवश्यकता न्यूनतम पोपक मानक के लिए होगी। इसलिए जव चौथी योजना के निर्धारित कृषि के लक्ष्य पूर्ण रूप से प्राप्त भी कर लिए जाएंगे न्यूनतम पोषक आवश्यकताएं पूरी न होंगी। हम केवल १९७६ तक न्यूनतम पोपक स्तर को प्राप्त करने की आशा कर सकते हैं। तब भी हमारे खाद्य के उपभोग का स्तर पश्चिम यूरोप, उत्तरी अमेरिका तथा औशनिया के विकसित देशों में वर्तमान समय में प्रचलित स्तरों के पास नहीं फटकेगा।

अध्याय ११

शिक्षा नियोजन तथा जनसंख्या वृद्धि

भारत के संविधान में सम्मिलित राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्त में निम्नलिखित बात कही गई थी :

> "इस संविधान को लागू होने के दस वर्षों की अवधि में सभी बच्चों के लिए उनके १४ वर्ष की आयु के होने तक राज्य नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने के लिए प्रयत्न करेगा।"
>
> अनुच्छेद—४५

संविधान के अनुसार १९६८ तक ६-१३ की आयु के प्रथम से आठवीं कक्षाओं में पढ़नेवाले सभी बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था कर दी जानी थी। पर देश निर्धारित लक्ष्य से अब भी बहुत दूर है। तृतीय पंचवर्षीय योजना (मार्च, १९६६) के अन्त में भी १ से ५ कक्षाओं में ६ से १० वाले आयुवर्ग के बच्चों का नामांकन ७६ प्रतिशत रहा, तथा ५ से ८ कक्षाओं में ११-१३ वाले आयुवर्ग के बच्चों का नामांकन लगभग ३० प्रतिशत मात्र रहा (सारिणी ३७)। प्रगति की यह मन्द गति आंशिक रूप से स्कूल जानेवाली जनसंख्या की वृद्धि की तीव्रता के कारण रही है।

योजना आयोग द्वारा नियुक्त एक पैनल की बैठक पूना में १९५७ में हुई, जिसका उद्देश्य अनिवार्य शिक्षा के लक्ष्य को १९६८ तक प्राप्त करने की सम्भावनाओं का अध्ययन करना था। पैनल ने पाया कि यह कार्य दस वर्षों की अल्पावधि में पूरे किए जाने के लिए बहुत बड़ा है तथा इस लक्ष्य को दो सोपानों में प्राप्त करने का सुझाव दिया। प्रथम सोपान में, जो तीसरी योजना के अन्त तक पूरा किया जाए, ६-१० वाले आयु वर्ग के सभी बच्चों की नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने की चेष्टा की जाए। दूसरे सोपान में, जिसे पाचवीं योजना के अन्त तक पूरा करने का सुझाव दिया गया, ११-१३ वाले आयुवर्ग तक नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। पर संशोधित लक्ष्य का प्रथम सोपान भी पूर्ण नहीं

सारिणी ३७

स्कूलों में नामांकन १९५१-६६ के मध्य (हजारों में)

	लड़के	लड़कियां	कुल
कक्षाएं १-५ में नामांकन			
१९५१	१,३७,३०	५३,८५	१,९१,१५
१९५६	१,७५,२८	७६,३९	२,५१,६७
१९६१	२,३५,९३	१,१४,०१	३,४९,९४
१९६४	२,९२,३४	१,५३,९९	४,४६,३३
१९६६	३,१६,००	१,९६,००	५,१२,००
कक्षाएं १-५ में ६-१० आयु के कुल बच्चों के नामांकन का प्रतिशत हिसाब			
१९५०-५१	५९.८	२४.६	४२.६
१९५५-५६	७०.३	३२.४	५२.९
१९६०-६१	८२.४	४१.३	६२.२
१९६५-६६[1]	९४.६	६०.६	७७.८
कक्षाएं ५-८ में नामांकन			
१९५१	२५,८६	५,३४	३१,२०
१९५६	३४,२६	८,६७	४२,९३
१९६१	५०,७४	१६,३१	६७,०५
१९६४	६७,८१	२४,१६	९१,९७
१९६६	७९,२३	२८,७७	१०८,००
कक्षाएं ५-८ में ११-१३ आयु के कुल बच्चों के नामांकन । प्रतिशत हिसाब			
१९५०-५१	२०.७	४.५	१२.७
१९५५-५६	२५.५	६.९	१६.५
१९६०-६१	३३.१	११.२	२२.४
१९६५-६६	४५.६	१७.२	३१.६

• सम्भावित नामांकन

किया जा सका है क्योंकि मार्च, १६६६ तक ६-१० आयुवर्ग के केवल ७६ प्रतिशत बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा दी जा सकी है। राज्य सरकारों के लिए यह असम्भव प्रतीत होता है कि वे इस लक्ष्य के दूसरे सोपान को १६७६ तक पूरा कर पाएंगे। यह आंशिक रूप से स्कूल जाने वाली जनसंख्या की वृद्धि में तीव्र गति के कारण है।

६-१० वाले आयुवर्ग के बच्चों की जनसंख्या के १६६६ में ६.६ करोड़ होने का अनुमान है। इसके १६७१ में ७.६ करोड़, १६७६ में ८.३ करोड़, १६८१ में ८.१ करोड़ तथा १६८६ में ८.७ करोड़ तक बढ़ने की सम्भावना है। ये आकड़े उन अनुमानों पर आधारित हैं, जो यह मानते हैं कि १६७६ के बाद प्रजनन में तीव्र गिरावट आएगी। अगर ऐसा नहीं होता है, तो स्कूल जानेवाली जनसंख्या और भी बड़ी होगी। यदि यह भी मान लिया जाए कि ६-१० वाले आयुवर्ग के बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का लक्ष्य १६७६ तक अर्थात् पांचवीं पंचवर्षीय योजना के अन्त तक पूरा कर लिया जाएगा, तब भी यह आवश्यक होगा कि मोटे तौर में १.६० करोड़ अतिरिक्त बच्चों को १६६६-७१ के पंचवार्षिकी में, २.२० करोड़ बच्चों को १६७१-७६ में तथा ८२ लाख बच्चों को १६७६-८१ में नामांकन करने की व्यवस्था करनी होगी। इसी प्रकार से यदि ११-१३ वाले आयुवर्ग के बच्चों को १६६८ तक अनिवार्य शिक्षा प्रदान करनी है, तो मोटे तौर से ८० लाख अतिरिक्त बच्चों को १६६६-७१ के पंचवार्षिकी में, १ करोड़ को १६७१-७६ में, १ करोड़ २७ लाख को १६७६-८१ में तथा १ करोड़ ५५ लाख को १६८१-८६ में शिक्षा की सुविधाएं प्रदान करनी होगी। यदि हम दोनों को जोड़ दें, तो यह पाते हैं कि ६-१३ वाले आयुवर्ग के २.७ करोड़ बच्चों को चौथी योजना के दौरान, ३.२ करोड़ को पांचवीं योजना के दौरान, २.१ करोड़ को छठी योजना के दौरान तथा १.६ करोड़ को सातवीं योजना के दौरान शिक्षा सुविधाएं प्रदान करनी होंगी। यह छोटा कार्य नहीं है। केवल एक उदाहरण लेने से ८ वीं कक्षा तक को शिक्षा देने के लिए १६६८ में आनुमानिक २३ लाख अतिरिक्त अध्यापकों की आवश्यकता होगी, यदि अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करना है (सारिणी ३८)। यह इस धारणा पर आधारित है कि शिक्षक-शिक्षार्थी का अनुपात १ : ४० होगा।

सारिणी ३८

प्राथमिक कक्षाओं के लिए आवश्यक अध्यापकों की संख्या
१९७१-८१

वर्ष	कुल अध्यापक जिनकी आवश्यकता है	अतिरिक्त अध्यापक जिनकी आवश्यकता है
१९७१	२२.२५	५.९९
१९७६	३०.२५	१३.९९
१९८१	३५.३८	१९.१२
१९८६	३९.२५	२२.९९

माध्यमिक शिक्षा

आगरा, इलाहाबाद, गोरखपुर, लखनऊ तथा बम्बई को छोड़कर भारत के सभी विश्वविद्यालयों ने १९६५-६६ में उच्च माध्यमिक या प्राक-विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम के पश्चात तीन वर्षीय डिग्री पाठ्यक्रम लागू कर दिया है। उपरोक्त पांच विश्वविद्यालयों में दो वर्षों के इण्टरमीडिएट पाठ्यक्रम के पश्चात् दो वर्ष का डिग्री पाठ्यक्रम हैं। इण्टरमीडिएट कक्षाओं में १९५१ में विद्यार्थियों का नामांकन २.२३ लाख था। १९६४ में यह बढ़कर ५.३ लाख हो गया। उच्चतर माध्यमिक स्कूलों में नामांकन १९५१ में १२ लाख से बढ़कर १९६४ में ५३ लाख हो गया (सारिणी ३९)।

सारिणी ३९

उच्चतर माध्यमिक तथा इण्टरमीडिएट कक्षाओं में नामांकन
१९५१-६६　　　　(लाखों में)

वर्ष	उच्चतर माध्यमिक कक्षाएं	इण्टरमीडिएट कक्षाएं
१९५१	१२.८०	२.२३
१९५४	१५.९५	३.४३
१९५६	१८.५७	४.१८
१९५८	२१.८३	४.५६
[illegible]६१	२८.८७	५.१६
[illegible]	४०.०३	५.२६

इस प्रकार से नामांकन १९६१ में १९५१ के नामाकन का लगभग ढाई गुणा था तथा १९६६ मे चौगुना। जनसंख्या के भविष्य सम्भावित वृद्धि के आधार पर तथा आधारभूत शिक्षा के विस्तार मे पड़नेवाले दबाव के कारण यह आशा की जाती है, कि उच्चतर माध्यमिक तथा इण्टरमीडिएट कक्षाओ मे विद्यार्थियों की संख्या प्रत्येक सात वर्षों मे दुगुनी हो जाएगी। १९६६ में अनुमानित १७.८ प्रतिशत आयु-वर्ग १४-१५ के बच्चों का नामाकन उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं मे हुआ। यदि इस प्रतिशत संख्या के १९७१ मे ३० तथा १९८६ में ६० तक बढने की सम्भावना है तो १९७१ मे ७५ लाख के आसपास, तथा १९८६ मे २१० लाख के आसपास सम्भावित नामाकन होंगे। इसी प्रकार से यदि ११ तथा १२ कक्षाओ मे नामाकन का प्रतिशत हिसाब १९७१ में १५ तथा १९८६ से ३० तक बढ़ने की सम्भावना है, तो १९७१ मे सम्भावित नामांकन ३४ लाख तथा १९८६ मे १ करोड़ १ लाख होगा (सारिणी ४०)। यह समस्या की विशालता का परिचय देता है।

सारिणी ४०

कक्षाएं ९-१२ में नामांकन का योग तथा प्रतिशतता, १९७१-८६

वर्ष	कक्षाएं ९-१० में १४-१५ वाले आयुवर्ग की जनसंख्या का सम्भावित नामांकन		कक्षाएं ११-१२ में १६-१७ वाले आयुवर्ग की जनसंख्या का सम्भावित नामांकन	
	प्रतिशत हिसाब	योग (लाखों में)	प्रतिशत हिसाब	योग (लाखों में)
१९७१	३०	७५	१५	३४
१९७६	४०	११५	२०	५४
१९८१	५०	१६०	२५	७८
१९८६	६०	२०९	३०	१०१

प्रारम्भिक तथा माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में योजना तथा नीति बनानेवालो के सामने जो समस्या आनेवाली है, उसके इस संक्षिप्त विवरण से यह बात पूर्ण रूप से सिद्ध हो जाती है कि स्कूल जानेवाली जनसंख्या की वृद्धि की तीव्रता ने हमारे सीमित आर्थिक साधनों पर एक गम्भीर तनाव उपस्थित कर दिया है तथा १९७६ तक भी संविधान द्वारा निर्धारित प्राथमिक शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त करना सम्भव न

हो सकेगा। माध्यमिक, विश्वविद्यालय स्तरीय तथा प्राविधिक शिक्षा की प्रगति भी मन्द रहेगी तथा हमारी आवश्यकताओं से कही कम रहेगी। इससे हमारे देश की आर्थिक प्रगति दर में भी प्रतिरोध हो सकता है।

यह अब स्वीकृत है कि किसी देश का धन मानवीय साधनों पर उतना ही निर्भर करता है, जितना भौतिक पूंजी के संचय पर। इसलिए शिक्षा नियोजन का उद्देश्य मानवीय साधनों में विद्यमान सम्पूर्ण क्षमताओं को पूर्णरूप से बाहर निकालने का होना चाहिए। यह एक समाकलित शिक्षण कार्यक्रम द्वारा ही किया जा सकता है। जब तक शिक्षण कार्यक्रम को कुल राष्ट्रीय विकास की योजना से समाकलित करके उसका देश की भविष्य की आवश्यकताओं का सामना करने के लिए विकास न किया जाएगा, तब तक देश के समस्त आर्थिक तथा सामाजिक विकास में इसका योगदान बहुत कम हो सकेगा।

भारत की वर्तमान शिक्षा योजनाओं में प्रारम्भिक शिक्षा को उच्चतम प्राथमिकता दी जा रही है। वैसे माध्यमिक शिक्षा के विस्तार की आवश्यकता को भी माना गया है, पर उसे निम्न प्राथमिकता दी गई है। विश्वविद्यालय शिक्षा का विस्तार धीरे-धीरे हो रहा है तथा वह इस योग्य नहीं है कि वह विकास की गतिवर्धित प्रक्रिया को बढ़ाने के लिए समुचित संख्या में उच्च स्तरीय प्राविधिकों की व्यवस्था कर सके। प्राविधिक शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया जा रहा है, पर विकासशील अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए यथेष्ट प्राविधिक स्कूल नहीं हैं। शिक्षण योजनाएं विभिन्न आयु वर्गों के स्कूल जानेवाले बच्चों की अनुमानित जनसंख्या पर आधारित हैं, और भविष्य में विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षित कर्मचारियों की आवश्यकता पर कम ध्यान दिया जा रहा है। परिणाम यह है कि शिक्षा प्रणाली एक विषम पिरामिड उत्पन्न करती है, जिसमें प्राथमिक शिक्षा का कार्यक्रम विस्तृत आधार वाला है, जो ऊपर बहुत ही संकीर्ण माध्यमिक शिक्षा प्रणाली का रूप लेते हुए उच्च शिक्षा की परत पर और भी संकीर्ण और पतली हो जाती है। इस प्रकार के ढांचे में कठिनाई यह है कि इसमें अधिकाधिक अकुशल तथा अर्द्ध-कुशल कार्यकर्त्ता उत्पन्न होते हैं। वैसे कुशल तथा अत्यन्त कुशल व्यक्तियों में थोड़ी वृद्धि होती है, पर यह विकासशील-अर्थव्यवस्था की बढ़ती हुई आवश्यकताओं की गति को पकड़ पाने में अपर्याप्त है। इसलिए ऐसी समाकलित शिक्षण योजना बनाने की आवश्यकता है, जो देश की विकास की योजनाओं द्वारा उपस्थित बढ़ती हुई मांगों को पूरा कर सके।

अध्याय १२

भारत में जनसंख्या वृद्धि और आर्थिक विकास

भारत एक कृषिप्रधान देश है तथा मोटे तौर से इसकी सत्तर प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। पर कृषि की अवस्था गिरी हुई है तथा राष्ट्रीय आय में इसका योगदान केवल ४७ प्रतिशत है। कृषि उत्पादन को बढ़ाने के गम्भीर प्रयत्न होते हुए भी १९४९-५० से १९६१-६२ की अवधि में वार्षिक वृद्धि की दर ४ प्रतिशत के आसपास रही। कृषिक्षेत्र में केवल लगभग २ प्रतिशत की तथा कृषि की उत्पादकता में लगभग १.५ प्रतिशत की वृद्धि हुई है। तृतीय योजना के दौरान कृषि उत्पादन में कोई विशेष वृद्धि नहीं पाई गई, केवल १९६४-६५ को छोड़कर जब उत्पादन ८८ करोड़ टन पहुंचा। पर १९६५-६६ में उत्पादन खराब मौसम के कारण ७२ करोड़ टन तक गिर गया। चौथी योजना के दौरान यह आशा की जाती है कि कृषि उत्पादन मोटे तौर से ५.६ प्रतिशत तक बढ़ जाएगा। पर यह बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए समुचित न होगा तथा आयात आवश्यक हो जाएगा।

भारत की जनसंख्या की आयु का ढांचा इस प्रकार का है कि आधार तो बहुत बड़ा है तथा शिखर सुण्डाकार है, जिससे निर्भरता का अनुपात उच्च है। निर्भरता अनुपात से तात्पर्य है कि १५ वर्ष से कम आयु के बच्चे तथा ६० वर्ष से अधिक आयु के वृद्ध व्यक्तियों का अनुपात कार्य करनेवाली १५-५९ की आयु की जनसंख्या से अधिक है। कार्यरत आयुवर्ग के प्रत्येक १०० व्यक्तियों पर निर्भर रहनेवालों की संख्या भारत में ९६ है जब कि आर्थिक रूप से विकसित देशों में यह संख्या केवल ६५ है। यदि जन्मदर उच्च ही रहती है तथा मृत्युदर घटती ही जाती है, तो निर्भरता बोझ के और भी भारी होने की सम्भावना है।

प्रथम दो योजनाओं के दस वर्षों में औद्योगिक उत्पादन में ४९ प्रतिशत की तथा राष्ट्रीय आय में ४२ प्रतिशत की वृद्धि हुई। पर इसी अवधि में जनसंख्या २१ प्रतिशत बढ़ी, जिससे प्रति व्यक्ति की आय में केवल १६ प्रतिशत की वृद्धि हो सकी। इस स्थिति का वर्णन करते हुए तीसरी योजना में कहा गया है कि जनसंख्या की वृद्धि तथा सम्भावित प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय आय की लगातार

६ प्रतिशत प्रतिवर्ष के आसपास की वृद्धि की दर कायम रखने पर भी, द्वितीय योजना में १६५०-५१ के स्तर की राष्ट्रीय आय को प्रति व्यक्ति पांचवीं योजना के मध्य तक दुगुना करने के प्रतिवद्ध उद्देश्य को पूरा करना कठिन होगा।[1]

तृतीय योजना के अन्त में राष्ट्रीय आय में अभीष्ट पांच प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य आधे से भी कम पूरा हुआ। प्रथम वर्ष में राष्ट्रीय आय की वृद्धि २.५ प्रतिशत की दर से हुई तथा योजना के दूसरे वर्ष में यह १.७ प्रतिशत हुई। अगले दो वर्षों में तीव्र उठान हुआ तथा क्रमशः वृद्धि-दर ४.६ प्रतिशत तथा ७.६ प्रतिशत रही। पर पांचवें वर्ष में राष्ट्रीय आय में वास्तव में ४.२ प्रतिशत का ह्रास हुआ। यह आशा की जाती है कि राष्ट्रीय आय जो अभी १६,६०० करोड़ रुपये है, १६७०-७१ में १६६५-६६ के मूल्यों पर २६,५०० करोड़ रुपये तक बढ़ जाएगी। इस अवधि में १६६५-६६ के मूल्यों पर १६७०-७१ तक प्रति-व्यक्ति-आय के ४४७ रुपये से ५३२ रुपये तक बढ़ जाने की आशा है।

योजना के पिछले पन्द्रह वर्षों में वेकारों की संख्या वढ़ी है। प्रथम योजना के अन्त में वेकारों की संख्या ५३ लाख थी। दूसरी योजना के दौरान श्रमजीवी तत्त्व की वर्तमान वृद्धि को काम देने के लिए समुचित नौकरियां नहीं तैयार की जा सकीं, जिससे कि बेकारों की संख्या ६० लाख पहुंच गई। तृतीय योजना के दौरान वेकारों की संख्या वढ़ रही है तथा १६६५-६६ तक इसके एक करोड़ तक होने की सम्भावना थी। चौथी योजना के दौरान श्रमजीवी तत्त्व में नवागन्तुकों की संख्या २ करोड़ ३० लाख तक होने की सम्भावना है। चौथी योजना के दौरान अतिरिक्त कार्य के अवसर औद्योगिक क्षेत्र में लगभग १ करोड़ ४० लाख व्यक्तियों के लिए और लगभग कृषि क्षेत्र में ५० लाख व्यक्तियों के लिए निर्मित किए जाने की सम्भावना है। इस प्रकार से नए प्रवेश पाने वालों को भी कार्य प्रदान करना कठिन हो जाएगा, जिससे कि वेकार व्यक्तियों की संख्या चौथी योजना के अन्त में १ करोड़ ४० लाख होगी, तृतीय योजना के अन्त के १ करोड़ व्यक्ति ही बेकार थे।

राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के आंकड़ों के आधार पर कुल जनसंख्या के ६३.१ प्रतिशत की मासिक आय २१ रु० प्रतिमास से कम है। इसी के साथ सरकार इस के लिए प्रतिवद्ध है कि वह १६७६ तक प्रत्येक परिवार को कम-से-कम २० रुपये की मासिक आय प्रदान करेगी। इसलिए आवश्यकता है कि अभी तक जितना सम्भव

१. योजना आयोग, तृतीय पंचवर्षीय योजना, पृ० २१

हो सका है, उससे प्रत्येक वर्ष मे अधिक कार्य के अवसर प्रदान किए जाएं।

इस प्रकार देखा जा सकता है कि तीन योजनाओ की अवधि मे कृषि उत्पादन १९५०-५१ में ५ करोड १० लाख टन से १९६४-६५ मे ८ करोड ८० लाख टन पहुंच गया। औद्योगिक उत्पादन का सूचकाक १९५१ के ७४ से १९६४ मे १७५ तक बढ़ गया। राष्ट्रीय आय में वृद्धि १९५०-५१ में ८८ ५ दस खरब रुपये से १९६३-६४ मे १९४८-४९ के मूल्यो पर १३९ १ दस खरब रुपये हो गई। पर इसी अवधि में जनसंख्या की वृद्धि १९५१ के ३६ १ करोड से १९६५ मे ४८.६ करोड़ हो गई। परिणामस्वरूप भोजन की प्रति व्यक्ति प्राप्यता में १९५० में प्रतिदिन १४ औंस से १९६४-६५ मे प्रतिदिन १५ ७ औंस हो गई। १९४८-४९ के मूल्यो में प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय मे १९५१ के रुपये २४७ ५ से १९६४ के रुपये २९९.८ की ही वृद्धि हुई। इस प्रकार से हमारी प्रगति का अधिकाश भाग जनसंख्या की वृद्धि की तीव्रता ने ही खा डाला है।

वास्तविकता के अनुरूप ही है कि भारत सरकार ने भारत की जनसंख्या की वृद्धि को स्थिरता प्रदान करने का लक्ष्य स्वीकार किया है। जन्मदर को वर्तमान ४० से २५ तक जितनी शीघ्रता से सम्भव हो सके नीचे लाना अभीष्ट है। यह आशा की जाती है कि चौथी योजना के दौरान अधिकाश सतानोत्पादनसमर्थ दम्पतियों को गर्भ-निरोधक सेवाएं प्रदान की जाएगी। मुख्य बल अन्त. गर्भाशय गर्भनिरोधकों पर दिया जाएगा, जिसके प्रयोग करनेवालों की सख्या १९६६ के ६० लाख से १९७०-७१ तक १ करोड़ ६ लाख तक वृद्धि होने की सम्भावना है। अनुर्वरीकरण तथा परम्परागत गर्भ-निरोधकों को भी प्रोत्साहन दिया जाएगा।

यह अनुमान लगाया गया है कि भारत में परिवार नियोजन पर व्यय किए गए पचास रुपये का वही आर्थिक प्रभाव होना है, जो देश के आर्थिक विकास पर लगाए गए ५०० रुपयों का होता है। यह भी अनुमान लगाया गया है कि भारत मे प्रतिवर्ष ३०० करोड़ रुपये जन्म लेनेवाले दो करोड़ बच्चो की देखरेख पर व्यय किए जाते हैं। यदि पाच वर्ष की अवधि के लिए भारत में "जन्म छुट्टी" मनाना सम्भव हो सके, तो १५०० करोड़ रुपये के आन्तरिक साधन उपलब्ध हो सकेंगे जो मोटे तौर से *चौथी योजना के लिए निर्धारित कुल धनराशि १६,००० करोड़ रुपये का एक-दहाई* भाग होगा।

अध्याय १३

भारत में परिवार नियोजन कार्यक्रम

देशों में भारत का स्थान जनसंख्या में द्वितीय है, तथा भूमि क्षेत्रफल में सातवां है। संसार की जनसंख्या का इसमें पन्द्रह प्रतिशत है तथा भूमिक्षेत्र का २.२ प्रतिशत। १९५१ में इसकी जनसंख्या ३५.७ करोड़ थी, जो सोवियत संघ को छोड़कर योरोप का नब्बे प्रतिशत है तथा चीन की जनसंख्या का साठ प्रतिशत है। आज (अप्रैल १९६६) यह ५० करोड़ है। इसकी जनसंख्या का घनत्त्व प्रति वर्ग मील ३१२ व्यक्ति है, यह सोवियत संघ को छोड़कर योरोप से चालीस प्रतिशत अधिक है तथा चीन से २५० प्रतिशत अधिक है। पर इसका भूमिक्षेत्र सोवियत संघ को छोड़ कर योरोप का केवल दो तिहाई है।

१८९१ की जनगणना के समय भारत की जनसंख्या २३.६ करोड़ थी। तीस वर्ष बाद अर्थात् १९२१ में इसकी जनसंख्या १.२ करोड़ बढ़ गई, पर अगले तीस वर्षों में अर्थात् १९२१ से १९५१ में भारत की जनसंख्या १०.९ करोड़ बढ़ गई, जो पहले से नौ गुनी अधिक थी। पर केवल १९५१-६१ के दशक में ही यह ७.९ करोड़ बढ़ गई। १९२१ के पूर्व एक दशक की तीव्र जनसंख्या वृद्धि के पश्चात, एक दशक में मन्द वृद्धि होती थी और कभी-कभी नकारात्मक वृद्धि भी होती थी। इसका मुख्य कारण अक्सर होने वाली महामारियां तथा अकाल थे। उदाहरण के लिए, यह अनुमान लगाया गया है कि भारत में १९१८ के एनफ्लुएंजा महामारी से ६ करोड़ व्यक्ति मरे थे; तथा १८९८-१९१८ की अवधि में लगभग पांच लाख व्यक्ति प्रतिवर्ष ताऊन से मरते थे। पर १९२१ से भारत महामारियों तथा अकालों के विध्वंसों से अपेक्षाकृत मुक्त रहा। इसके परिणामस्वरूप जन्मदर की वृद्धि के स्थान पर मृत्युदर की कमी के कारण जनसंख्या पहले से अधिक तीव्रता से बढ़ी है।

यह सामान्य रूप से स्वीकार किया गया है कि भारत में जनसंख्या वृद्धि की दर लगभग ढाई प्रतिशत प्रतिवर्ष है। जनसंख्या वृद्धि की यह उच्च दर इतिहास में अभूतपूर्व है। यह असामान्य तो नहीं है क्योंकि दक्षिण-पूर्वीय एशियाई देशों में वर्तमान समय में प्रचलित जनसंख्या वृद्धि की दर

भी लगभग यही है। वर्तमान समय मे, संयुक्त राष्ट्र की जनसंख्या वृद्धि की दर १.७ प्रतिशत, अर्जेन्टीना की दर २.२ प्रतिशत, ब्राजील की दर २.४ प्रतिशत, मैक्सिको की २.८ प्रतिशत तथा कोस्टारीका की ३.६ प्रतिशत प्रतिवर्ष है। पर जो बात भारत की जनसंख्या वृद्धि की दर को अत्यंत भयंकर बनाती है, वह है यहाँ की जनसंख्या की आधार की विशालता, जिससे भारत की जनसंख्या मे कुल वार्षिक वृद्धि लगभग १.२ करोड होती है। दूसरी बात यह है कि भारत की पिछली अल्पाहारक्लिष्ट तथा मन्दपोषित जनसंख्या को, तथा कुल वार्षिक वृद्धि को ध्यान मे रखते हुए आर्थिक नियोजन की चेष्टाओ के बावजूद जनसंख्या को जीवन के उठते हुए स्तर पर बनाए रखना संभव न हो सकेगा। तीसरा तथ्य यह है कि मृत्युदर मे गिरावट आ रही है तथा इस बात की युक्तिसंगत संभावना है कि जनता की स्वच्छता तथा स्वास्थ्य की स्थितियों मे लगातार सुधार होते रहने से इसमें लगातार गिरावट आती जाएगी। इसका यह अर्थ है कि यदि जन्मदर में गिरावट नही आती है, तो जन्म तथा मृत्युदरों में अन्तर लगातार बढ़ता जाएगा तथा भारत के सम्मुख तीव्र गति से बढती हुई बहुसंख्या का संकट होगा, जिसे अक्सर "जनसंख्या विस्फोट" कहा जाता है। यह सामान्य धारणा है कि भारत मे १९७१ में ५६.० करोड, १९७६ में ६४.० करोड़ तथा १९८१ मे लगभग ७२.० करोड़ जनसंख्या होने की सम्भावना है।

अगर हम ऐतिहासिक रूप से जनसंख्या के विकास को देखें, तो पाएंगे कि पश्चिमी देश जब आर्थिक रूप से पिछड़े थे, तथा उनका धंधा कृषि था, तब उनकी जन्म तथा मृत्युदरें उच्च थीं। इसलिए उनकी जनसंख्या मे वृद्धि धीरे-धीरे हुई। पीने के पानी की सुविधाओं मे सुधार, स्वच्छता मे सुधार, पहले से अच्छे यातायात इत्यादि के साथ ही मृत्युदर मे कमी आई पर जन्मदर उच्च ही रही। परिणाम यह हुआ कि जनसंख्या की वृद्धि तेज होती गई। योरोप मे जनसंख्या के तीव्र विस्तार की यह अवधि, जिसे "संक्रामक अवधि" कहते हैं, तीन शताब्दियों तक रही, तथा इसमे जनसंख्या में लगभग सातगुनी वृद्धि हुई[1]। निश्चय के साथ नहीं कहा जा सकता कि क्या संसार के कम-विकसित देश जनसंख्या विकास की वही प्रवृत्ति अपनाएंगे जो पश्चिम के देशों मे अनुभव की गई। पर प्रतिजीवाणुओं के प्रयोगों जैसे डी० डी० टी० के छिड़काव,

---

१. नोटेस्टान, एफ० डब्ल्यू०, "समरी फाक द डेमोग्राफिक बैकग्राउन्ड फार प्राब्लेम्स आफ अन्डर डेवलप्ड कन्ट्रीज" मिलबैंक मैमोरियल फन्ड के "इन्टर नेशनल अप्रोचेज टु प्रोब्लेम्स आफ अन्डरडेवलप्ड एरियाज" में १९४८ पृ० २

सी० सी० ओ० इत्यादि से, मृत्युदर में तीव्र कमी लाना तो अब संभव हो सकता है। इसके समर्थन में श्रीलंका, फारमोसा, जमाइका, मलाया, कोस्टारिका, ब्रिटिशगायना इत्यादि के उदाहरण दिए जा सकते हैं। मृत्युदर में पचास प्रतिशत की कमी, जैसे चालीस से बीस, जिसे पश्चिमी देशों में लाने में १०० वर्ष से अधिक समय लगा था, इन कम विकसित देशों में थोड़े और से दस वर्ष की अवधि में ही ले आया गया। इस महत्वपूर्ण उपलब्धि को प्राप्त करने की सम्भावना जनसांख्यिकीय संक्रमण की समस्या को कम विकसित देशों में और भी गम्भीर बना देती है, तथा इन देशों के भाग्यों का संचालन करनेवालों के कन्धों पर और भी गुरुतर उत्तरदायित्व रख देती है।

एक महत्वपूर्ण पाठ जो कम विकसित देशों को पश्चिमी राष्ट्रों के अनुभव से सीखना है, वह यह है कि जब कि मृत्युदरों में महामारियों की आयात की गई औषधियों द्वारा नियंत्रण तथा पीने के पानी की सुविधाओं में सुधार के द्वारा तथा कृषि की पद्धतियों एवं यातायात के साधनों से कमी लाई जा सकती है। प्रजननशक्ति में ऊपर से आरोपित परिवर्तनों से कमी लाना संभव नहीं है, जो "केवल जीवन के बाह्य को प्रभावित करती हैं तथा जनता की आशाओं, भय, विश्वासों, रीतियों तथा सामाजिक संगठनों को अपेक्षाकृत अछूता छोड़ देते हैं"[1]। यह बाद के घटक बहुत महत्वपूर्ण हैं,क्यों कि जब तक उनमें सुधार नहीं किया जाता प्रजननशक्ति लगातार उच्च रहेगी। बिमारियों को नियंत्रित[2] करने के समुचित प्रयास तो किए गए पर परिवार को सीमित करने के लिए जनता की धारणा में परिवर्तन लाने के लिए थोड़ा ही कार्य किया गया है।

प्रजनन सामर्थ्य निर्भर करती है (१) स्त्रियों की विवाह करने की आयु पर (२) उस अवधि पर, जिसके दौरान वे यौन सम्पर्क में रहती हैं; तथा (३) उस तेज़ी पर जिससे वे अपने परिवार का निर्माण करती हैं। प्रकाशित जनगणना पर आधारित एक अध्ययन यह दर्शाता है कि स्त्रियों की औसत विवाह की आयु १९२१-३१ दशक के

---

१. नोटेरटीन, एफ० डब्लू०, "समरी आफ द डेमोग्राफिक बैकग्राउन्ड आफ प्रोबलेम्स आफ अन्डरडेवलप्ड कन्ट्रीज" मिल बैंक मेमोरियल फन्ड "इंटर नेशनल अप्रोचेस टु प्रोब्लेम्स आफ अन्डर डेवलप्ड एरियाज" में, १९४८ पृ० ९-१०

२. उदाहरण के लिए जब लगभग ७.५ करोड़ व्यक्ति १९४७ के आस पास मलेरिया से [illegible]मित थे, यह संख्या १९६० में ५० लाख तक नीचे आ गई। यह आशा की जाती है कि चौथी [illegible] योजना के अन्त तक मलेरिया भारत में पूर्ण रूप से उन्मूलित कर दिया जाएगा।

१२.६ से १९५१-६१ दशक में १५.६ तक बढ़ गई है जब कि पुरुषों की औसत आयु २० पर ही लगभग स्थिर रही है। २० वर्षों की अवधि में स्त्रियों की विवाह के समय की आयु में मोटे तौर से तीन वर्षों की वृद्धि का परिणाम मोटे हिसाब से जन्मदर में तीन प्रतिशत का ह्रास होगा।

जनगणना के आकडों से प्राप्त, विवाहित स्त्रियों पर विधवाओं के उम्रवार अनुपात के एक दूसरे अध्ययन से गणना की गई है कि उन स्त्रियों के वैधव्य की औसत आयु, जो पैंतालीस वर्ष की आयु तक विधवा हो गई थी, १९२१-३१ दशक में ३२.८ वर्ष थी, यह १९४१ -५१ दशक में बढकर ३४.४ वर्ष हो गई। इसका परिणाम सन्तानोत्पादन की आयु में स्थित विधवाओं के अनुपात में कमी हो गई। १९२६-४६ की अवधि में वैधव्य के (दोनों को सम्बन्धित दशकों के मध्य वर्षों के रूप में लिया गया है) इस ह्रास का परिणाम मोटे तौर से जन्मदर में लगभग दस प्रतिशत की वृद्धि होगी।

जनता द्वारा गर्भ निरोधकों के प्रयोग से जन्मदर में ह्रास लाया जा सकता था। भारत में परिवार नियोजन का आन्दोलन अभी बहुत शक्तिशाली नहीं है। लगभग ४५ लाख व्यक्ति ही गर्भ निरोधकों का प्रयोग करते हुए ज्ञात हैं, उनके प्रयोग के परिणामस्वरूप जन्मदर में कोई विशेष कमी नहीं है। इसलिए यह आश्चर्य की बात नहीं है कि भारत में जन्मदर में कोई महत्त्वपूर्ण ह्रास पंजीकृत नहीं है।

भारत में परिवार नियोजन

भारत सरकार, भारत की जनता में परिवार नियोजन का प्रचार करने के लिए अत्यन्त उत्सुक है। वे दिन जब प्रोफेसर रघुनाथ धोंधों कर्वे को बम्बई में एक संतति-निग्रह चिकित्सालय खोलने पर (१९२५) अपनी नौकरी से त्यागपत्र देना पड़ा था, अब जा चुके हैं। १९३० से देश के शिक्षित जनमत ने परिवार नियोजन को पसन्द किया है। १९३० में मैसूर सरकार ने राज्य के अन्दर एक परिवार-नियोजन केन्द्र खोला। दो वर्ष बाद १९३२ में मद्रास सरकार अपनी प्रेसीडेन्सी में संतति निग्रह चिकित्सालयों को खोलने के लिए सहमत हो गई। इसी वर्ष में लखनऊ में आल इण्डिया वीमेन्स कान्फ्रेन्स ने एक प्रस्ताव पास कर यह सिफारिश की कि "पुरुषों और स्त्रियों को मान्यताप्राप्त चिकित्सालयों में संतति-निग्रह के साधनों की शिक्षा दी जानी चाहिए।" भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा जवाहर लाल नेहरू की

अध्यक्षता में १९३५ में नियुक्त राष्ट्रीय योजना समिति ने परिवार नियोजन की सशक्त सिफारिश की।[1] डा० ए० पी० पिल्लई ने १९३६ में एक परिवार नियोजन प्रशिक्षण पाठ्यक्रम संचालित किया। १९३९ में उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश में कुछ संततिनिग्रह चिकित्सालय खोले गए। १९४० में श्री पी० एन० सप्रू ने राज्यसभा में संततिनिग्रह चिकित्सालयों की स्थापना के लिए एक सफल प्रस्ताव रखा। भारत सरकार द्वारा १९४३ में सर जोसेफ भोर की अध्यक्षता में नियुक्त स्वास्थ्य सर्वेक्षण तथा विकास समिति ने सिफारिश की कि विभिन्न सरकारी अस्पतालों में संततिनिग्रह चिकित्सालयों को खोलने के प्रबन्ध किए जाने चाहिए। बम्बई में १९४९ में श्रीमती धनवन्थी रामा राव की अध्यक्षता में भारतीय परिवार नियोजन संघ का निर्माण किया गया।

स्वतन्त्रता के बाद से भारत सरकार ने इस आन्दोलन का सक्रिय रूप से समर्थन किया है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में परिवार नियोजन कार्यक्रम के लिए ६५ लाख रुपयों का व्यवस्था की गई, जिसका उद्देश्य परिवारों को सीमित करने के लिए प्रभावशाली पद्धतियों को खोज निकालना था, तथा ऐसी विधियों का सुझाव देना था जिससे पद्धति का ज्ञान विस्तृत रूप से प्रसारित किया जा सके। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए वित्तीय व्यवस्था ४.९ करोड़ रुपये तक और तृतीय पंचवर्षीय योजना के लिए २७ करोड़ रुपये तक बढ़ा दी गई। चौथी योजना में व्यय को प्रारम्भिक ९५ करोड़ रुपए से २२९.३ करोड़ रुपये तक बढ़ा दिया गया। इस प्रकार से तृतीय योजना में जहां प्रति व्यक्ति ५८ पैसों की व्यवस्था की गई थी, चौथी योजना में पांच रुपये प्रति व्यक्ति बढ़ा दी गई है।

शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों दोनों में परिवार नियोजन चिकित्सालयों को खोलने में समुचित प्रगति हुई है। १९५६ में द्वितीय पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में इस प्रकार के केवल १४७ चिकित्सालय थे, ग्रामीण क्षेत्रों में इक्कीस तथा नागरी क्षेत्रों में १२६। नवम्बर १९५९ के अन्त तक चिकित्सालयों की संख्या १,१४७ तक बढ़ गई, जिनमें से ७१२ ग्रामीण क्षेत्रों में थे। इनके अतिरिक्त १,३१८ मातृत्व तथा

१. देखिए के० टी० शाह (सम्पादित) जनसंख्या (१९३७) सिफारिशों में से एक है "सामाजिक अर्थव्यवस्था, पारिवारिक सुख तथा राष्ट्रीय नियोजन के हित में परिवार नियोजन तथा बच्चों की परिमितता आवश्यक है, तथा राज्य को इन्हें प्रोत्साहन देने के लिए ऐसी नीति अपनानी चाहिए", पृष्ठ १७४।

बाल कल्याण केन्द्र, इक्कीस मेडिकल कालेज तथा ६३ अन्य प्रशिक्षण केन्द्र थे, जहा परिवार नियोजन की सलाह दी जाती थी। परिवार नियोजन चिकित्सालयो तथा केन्द्रो की सख्या अब लगभग २०,००० है। अनुमानित १२ लाख व्यक्तियों का अनुर्वरीकरण कर दिया गया है तथा लगभग इतनी ही सख्या मे लूप दिया जा चुका है। अनुमानित २५ लाख व्यक्ति परम्परागत गर्भनिरोधकों का प्रयोग कर रहे हैं।

चौथी योजना मे परिवार नियोजन कार्यक्रम के मुख्य विषय निम्न हैं : ५,२०० प्रारम्भिक स्वास्थ्य केन्द्रो तथा २६,२०० उपकेन्द्रो मे परिवार नियोजन सेवाओं की व्यवस्था; २,५०० ग्रामीण कल्याण नियोजन केन्द्रों तथा २०,००० उपकेन्द्रो के लिए भवनों का निर्माण, २२४० शहरी चिकित्सालयों को जारी रखना तथा प्रारम्भ करना; ३३० जिलो मे से प्रत्येक मे एक जिला परिवार नियोजन ब्यूरो का प्रबन्ध, अनुर्वरीकरण तथा अन्त गर्भाशय गर्भनिरोधको के लिए अस्पतालो मे ६,००० शैयाओं की व्यवस्था; सामान्य ड्यूटी के चिकित्सा अधिकारियो का क्लिनिक बल, तथा १५ अनुर्वरता चिकित्सा केन्द्रो का खोला जाना। इनके अतिरिक्त ४५ राज्य परिवार नियोजन कार्यकर्त्ता प्रशिक्षण केन्द्रो को शक्तिशाली बनाने की तथा ४०,००० धात्रियो, १,५०,००० दाईयो एवं ४०,००० परिवार नियोजन सहकारियो और बुनियादि स्वास्थ्य कार्यकर्त्ताओं के प्रशिक्षण की एक योजना है। जनता मे प्रचार के माध्यम तथा शिक्षा के कार्यक्रम, परिवार नियोजन शिक्षा के अवैतनिक नेताओं तथा अंशकालिक ग्रामीण स्तर के कार्यकर्त्ताओं की नियुक्ति पर बल दिया जा रहा है।

भारतीय जनता का परिवार नियोजन के प्रति रुख

जो कुछ हो रहा है सब बहुत उत्तम है, पर यह पता लगाना उपयुक्त होगा कि भारत की जनता की, विशेष रूप से ग्रामीणजनो का, परिवार नियोजन के प्रति क्या रुख है। क्या यह सत्य नहीं है कि भारत की ग्रामीण जनता ईश्वर मे डरनेवाली, अशिक्षित, निर्धन तथा परम्परावादी है ? तब भला कैसे वे परिवार नियोजन को अपनाएंगे।

मोटे तौर से अभी तक भारत में सत्ताईस परिवार नियोजन के प्रतिरूप के सर्वेक्षण पूरे किए जा चुके हैं। सात सर्वेक्षण कलकत्ता के आसपास किए गए हैं, पाच दिल्ली के आसपास, चार पूना के आसपास, तीन बंगलौर के आसपास, दो कानपुर

कुछ सर्वेक्षणों ने दर्शाया है कि ग्रामों की वृद्ध स्त्रियां अक्सर युवा स्त्रियों को परिवार-नियोजन की पद्धतियां सिखाती हैं। ग्रामीण दाई की संस्था का पूर्ण रूप से उपयोग नहीं किया गया है तथा उसकी सहायता ग्रामीण स्त्रियों मे परिवार-नियोजन सम्बन्धी ज्ञान फैलाने में अत्यन्त सहायक सिद्ध हो सकती है।

स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष परिवार-नियोजन मे कम रुचि रखते हुए प्रतीत होते हैं। इसका कारण सम्भवतया यह है, कि पुरुष समझते हैं कि बच्चों तथा उनका पालन-पोषण केवल स्त्रियों से सम्बन्ध रखता है, क्योंकि पुरुष परिवार सम्बन्धी सभी महत्त्व-पूर्ण निर्णय लेते हैं, महिलाए गर्भनिरोधक को एक पक्षीय रूप से नहीं अपना सकती हैं। परिवार-नियोजन पर पुरुषों के रुख को जानने की दिशा मे बहुत कम जाच की गई है, पर भविष्य के सर्वेक्षणों के लिए यह एक उत्साहवर्द्धक क्षेत्र प्रतीत होता है।

लगता है कि ग्रामीण स्त्रिया परिवार-नियोजन से पूर्णतया सम्बद्ध चिकित्सा-लयों मे जाने को बहुत अनिच्छुक रहती हैं। यदि वे किसी ऐसे चिकित्सालय मे जाती हैं, तो वे दूसरों का ध्यान आकर्षित करती हैं और उनके कार्य पर ग्रामीणों मे चर्चा होती है। वे इसकी बजाए ऐसे चिकित्सालय मे जाना पसन्द करती है, जहा परिवार-नियोजन के अतिरिक्त अन्य कोई सेवा भी प्रदान की जाती है, जैसे सामान्य स्वास्थ्य सेवा या बाल-कल्याण कार्य। यदि वे इस प्रकार के चिकित्सालय मे जाती हैं,तो वे अपने सही उद्देश्य को हमेशा छिपा सकती हैं और गाव मे प्रचार या प्रपंच के बिना वे परि-वार-नियोजन की सलाह ले सकती हैं। इसलिए वास्तव मे परिवार-नियोजन कार्यक्रम के भारत मे अधिक सफल होने की तभी सम्भावना है, जब उसे सामान्य स्वास्थ्य कार्यक्रम मे सम्मिलित कर लिया जाए।

परिवार-नियोजन के प्रति रुख के विभिन्न सर्वेक्षणों मे पाए गए परिणामों के आधार पर सामान्यीकरण करते हुए यह कहा जा सकता है, जैसा कि ऊपर बताया गया है कि पैंतीस वर्ष से ऊपर की आयु की, तथा चार या पांच जीवित बच्चोंवाली विवाहित स्त्रियों के लिए पूरी सम्भावना है कि वे परिवार-नियोजन को ग्रहण करेंगी। इसलिए उन्हें परिवार-नियोजन के आरम्भिक ज्ञान की शिक्षा देने के प्रयास किए जाने चाहिए और साथ ही गर्भ-निरोधक के सरल और कम मूल्य के साधनों को उनके लिए उपलब्ध किया जाना चाहिए। जब ये महिलाए गर्भनिरोधकों का प्रयोग आरम्भ करेंगी, तो इनका अच्छा प्रदर्शन सम्बन्धी प्रभाव होगा और इस बात की सम्भावना होगी कि इनसे कम आयु वर्ग की स्त्रियां भी इन साधनों को अपनाने के लिए प्रेरित हों।

किन्तु पुरुषों का रुख अभी तक यथेष्ट ज्ञात नहीं है। पर जैसा कि सर्वेक्षणों से प्रगट होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों की स्त्रियां, इस तरह के विषयों, जैसे वांछित बच्चों की संख्या, गर्भनिरोधकों का प्रयोग इत्यादि पर अपने पतियों से बहुत कम बात करती हैं, तो इससे यह भी बहुत हद तक सम्भव है कि पतियों को अपनी पत्नियों की वास्तविक इच्छाओं के सम्बन्ध में ज्ञान ही न हो। इस प्रकार से यदि एक शैक्षणिक कार्यक्रम के द्वारा स्त्रियों को प्रेरित किया जाए कि वे इन विषयों पर अपने पतियों से और भी खुलकर बातें करें, तो पति लोग भी शायद परिवार-नियोजन की युक्तियों से सहमत हो जाएं। पर यह केवल अनुमान ही है।

इन सहायक चिह्नों के बावजूद अधिक सफलता तब तक नहीं प्राप्त की जा सकती है, जब तक गर्भनिरोध की सस्ती और सरल पद्धतियां ग्रामीण जनता को उपलब्ध नहीं कराई जातीं। दिल्ली के सर्वेक्षण से यह प्रगट होता है कि ग्रामीण स्त्रियां गर्भनिरोधकों पर प्रतिमास ०.२५ से ०.३२ रुपयों से अधिक व्यय नहीं करना चाहती तथा वे चाहतीं हैं कि गर्भनिरोधक उन्हें बिना किसी मूल्य के प्राप्त हों। पद्धति सरल भी होनी चाहिए। रिद्म-पद्धित तथा सुरक्षित-अवधि पद्धित की भारत में असफलता का कारण इनकी जटिलता है।

अन्त: गर्भाशय पद्धति (लूप)—जो भारतीय महिलाओं को १९६५ से उपलब्ध कराई जा रही है—सस्ती तथा सुगम है। एक बार लगाने के पश्चात यह अपने स्थान पर कई वर्षों तक रहती है। यह प्रभावशाली भी है क्योंकि लूप के अपने स्थान पर रहने पर गर्भाधारण की बहुत कम घटनाएं हुई हैं। पर लूप में कठिनाई यह है कि इससे स्त्रियों के बहुत बड़े प्रतिशत में लगातार रक्त स्रवन होता है। रक्त स्रवन का वास्तविक कारण ज्ञात नहीं है, पर स्त्रियों की एक बड़ी संख्या इससे डर जाती है। भारत में लगातार रक्त स्रवन, शरीर में दर्द तथा अन्य कठिनाइयों के कारण लगभग १२ प्रतिशत लूप पहननेवालियों ने इसे एक वर्ष के प्रयोग के बाद निकलवा दिया। दूसरे दस प्रतिशत मामलों में यह अपने-आप गिर जाता है। स्त्रियों को लूप लगाने से पूर्व रक्त स्रवन होने तथा शरीर के दर्द के सम्बन्ध में ठीक से शिक्षित किए जाने की आवश्यकता है। साथ ही इस सेवा के पश्चात उचित देखभाल की आवश्यकता है तथा कम-से-कम दो बार घरों में जाकर देखभाल की व्यवस्था की जानी चाहिए, पहले पन्द्रह दिन के बाद और दुबारा लगभग एक महीने के बाद।

गर्भनिरोधकों की प्रभावशीलता

यह स्पष्ट है कि केवल सरल, सुरक्षित तथा सस्ती और विश्वस्त गर्भनिरोधक पद्धतियों से ही जनसंख्या नियंत्रण की समस्या हल नहीं हो सकेगी। लोगों को समय से तथा उचित तरीके से गर्भनिरोधकों के प्रयोग के लिए प्रेरित तथा शिक्षित करना होगा। गर्भनिरोधकों के बारे में ज्ञात है कि इनकी प्रभावशीलता में इनके प्रयोग करनेवालों की सामाजिक-आर्थिक विशिष्टताओं के आधार पर अन्तर होता है, जैसे आय, शिक्षा, कार्य, स्तर इत्यादि के आधार पर, तथा साथ ही इनके प्रयोग सम्बन्धी निर्देशों के आधार पर भी प्रयोग करनेवालों की शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक विशिष्टताओं, उनके वैवाहिक सम्बन्धों तथा गर्भधारण को रोकने की आवश्यकता को वे किस हद तक अनुभव करते हैं। इसीलिए यह अपेक्षित किया जाना चाहिए कि एक ही गर्भनिरोधक के प्रयोग से विभिन्न वर्गों के लोगों की सफलता अलग-अलग मात्रा में प्राप्त होगी।

प्रयोगशाला की अवस्था में सभी गर्भनिरोधक लगभग शत-प्रतिशत प्रभावशाली होते हैं। पर वास्तविक व्यवहार में, या तो इनके प्रयोग करनेवालों के उचित सलाह के पालन न करने से अथवा चिकित्सालय कर्मचारियों द्वारा उचित सलाह ठीक से न देने के कारण, कई बार आकस्मिक गर्भाधान हो जाते हैं। इन घटकों के कारण यह आशा खतरनाक होगी कि एक गर्भनिरोधक जितना अधिक प्रभावशाली एक देश में सिद्ध होता हो, वह दूसरे देश में भी उतना ही सफल होगा।

भारत में दो अध्ययनों का सम्बन्ध गर्भनिरोधकों की प्रभावशीलता से रहा। दिल्ली अध्ययन में[1] दिल्ली के योगदत्त स्वास्थ्य सेवा चिकित्सालयों के भाग लेनेवालों को लिया गया है, जो मध्यम आय-वर्ग तथा कार्यरत मध्यम वर्ग के लोग हैं। रिपोर्ट में अध्ययन किए जानेवाले रोगियों की औसत आय २१४ रुपये थी। रोगी अधिकांशतया शिक्षित थे—८९ प्रतिशत स्त्रियां तथा ९९ प्रतिशत पुरुष पढ़-लिख लेते थे। इन चिकित्सालयों में प्रथम नामांकन के समय स्त्रियों की औसत आयु सत्ताईस वर्ष तथा उनके पतियों की औसत आयु बत्तीस वर्ष पाई गई। चिकित्सालयों में प्रथम नामांकन के समय दम्पत्तियों का विवाह औसतन मोटे तौर पर दस वर्ष पहले हो

---

१. अगरवाला, एस० एन० "फर्टिलिटी कण्ट्रोल थ्रू कान्ट्रासेप्शन : ए स्टडी आफ फैमिली प्लेनिंग क्लिनिक्स आफ मेट्रोपोलिटन देहली," नई दिल्ली : डाइरेक्टरेट जेनरल आफ हैल्थ सर्विसेज, भारत सरकार, १९५९

सारिणी ४२

योजनाओं के दौरान परिवार नियोजन पर उद्व्यय

	प्रथम योजना	द्वितीय योजना	तृतीय योजना	चतुर्थ योजना
१. परिवार नियोजन पर उद्व्यय रुपये (करोड़)	०.७	५.०	०.२७	२२९.३
२. संपूर्ण योजना उद्व्यय से परिवार नियोजन पर प्रतिशत उद्व्यय	०.०३६	०.१०९	०.३६०	१.४३
३. सम्पूर्ण स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन उद्व्यय से परिवार नियोजन पर प्रतिशत उद्व्यय	०.५०	२ २२	७.८६६	३१.८
४. योजना के दौरान परिवार नियोजन पर प्रतिव्यक्ति उद्व्यय (रुपये)	०.१८	०.१२०	०.५८१	४.४०
५. स्वास्थ्य और परिवार नियोजन पर कुल उद्व्यय, रुपये (करोड़)	१४०	२२५	३४१.८	८५७
६. सम्पूर्ण योजना उद्व्यय से स्वास्थ्य तथा परिवार नियोजन पर प्रतिशत उद्व्यय	७.१४	४.८६	४ ५६	४.५१
७. योजना के दौरान स्वास्थ्य तथा परिवार नियोजन पर प्रतिव्यक्ति (रुपये) उद्व्यय	३.७२	५.४०	७.३५	१३ ८४
८. योजना के दौरान चिकित्सा प्रशिक्षण तथा अनुसंधान पर प्रति व्यक्ति उद्व्यय (रुपये)	०.५७४	० ८६३	१.२११	३.४२२
योजना के दौरान अस्पतालों तथा डिस्पेंसरियों पर प्रति व्यक्ति उद्व्यय (रुपये)	०.६६५	०.८६३	१ ३२७	[illegible]

कर्मचारी का स्थान

मुख्यालय	परिवार-नियोजन आयुक्त	(१)
	ए० डी० जी०, परिवार-नियोजन	(२)
	सेक्शन अधिकारी	(२)
	अनुसन्धानकर्त्ता	(५)
	प्रचार सहायक	(१)
	तकनीकी सहायक	(८)
	सहायक	(४)

क्षेत्रीय कार्यालय

पूर्वी (कलकत्ता)	ए०डी०जी०, परिवार नियोजन	(६)
उत्तर (लखनऊ)	अनुसंधानकर्त्ता	(६)
उत्तरी पश्चिमी (चंडीगढ़)	तकनीकी सहायक	(६)
मध्य (भोपाल)	आशुलिपिक	(६)
पश्चिमी (बड़ौदा)	अवर श्रेणी लिपिक	(६)
दक्षिणी (बंगलौर)	चालक	(६)
	चौकीदार	(६)
	स्वच्छकर्त्ता	(६)

अवैतनिक परिवार-नियोजन प्रमुख

जिला	१४४
क्षेत्रीय	७
प्रादेशिक	१५
संस्थागत	७
अभिस्थापन शिविर	३,२२०

परिवार-नियोजन-कार्यकर्त्ताओं के प्रशिक्षण केन्द्र

केन्द्र	१६
प्रशिक्षणार्थी	४२,०१७
चिकित्सक	७,६५६
धात्रियां	३४,३५८

सारिणी ४२

योजनाओं के दौरान परिवार नियोजन पर उद्व्यय

	प्रथम योजना	द्वितीय योजना	तृतीय योजना	चतुर्थ योजना
१. परिवार नियोजन पर उद्व्यय रुपये (करोड़)	०.७	५.०	०.२७	२२६.३
२. संपूर्ण योजना उद्व्यय से परिवार नियोजन पर प्रतिशत उद्व्यय	०.०३६	०.१०६	०.३६०	१.४३
३. सम्पूर्ण स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन उद्व्यय से परिवार नियोजन पर प्रतिशत उद्व्यय	०.५०	२.२२	७.८९६	३१.८
४. योजना के दौरान परिवार नियोजन पर प्रतिव्यक्ति उद्व्यय (रुपये)	०.१८	०.१२०	०.५८१	४.४०
५. स्वास्थ्य और परिवार नियोजन पर कुल उद्व्यय, रुपये (करोड़)	१४०	२२५	३४१.८	८५७
. सम्पूर्ण योजना उद्व्यय से स्वास्थ्य तथा परिवार नियोजन पर प्रतिशत उद्व्यय	७.१४	४.८६	४ ५६	४.५१
. योजना के दौरान स्वास्थ्य तथा परिवार नियोजन पर प्रतिव्यक्ति (रुपये) उद्व्यय	३.७२	५.४०	७.३५	१३ ८४
योजना के दौरान चिकित्सा प्रशिक्षण तथा अनुसंधान पर प्रति व्यक्ति उद्व्यय (रुपये)	०.५७४	० ८६३	१.२११	३.४२२
योजना के दौरान अस्पतालों तथा डिस्पेंसरियों पर प्रति व्यक्ति उद्व्यय (रुपये)	०.६६५	०.८६३	१ ३२७	३ ४७४

सारिणी ४३

परिवार नियोजन प्रशिक्षण तथा शिक्षा कार्यक्रम में प्रगति

राज्य	प्रशिक्षण केंद्रों की संख्या		प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रशिक्षित व्यक्तियों की स०				अवैतनिक जिला परि० नियोजन शिक्षा प्रमुख		शिक्षाकार्यक्रम अभिस्थापन शिविर	
			दीर्घकालीन पाठ्यक्रमों में		अल्पकालीन पाठ्यक्रमों में					
	लक्ष्य	कार्य करनेवालों की सख्या	डाक्टर	अन्य	डाक्टर	अन्य	लक्ष्य	नियुक्ति सख्या	शिविरों की संख्या	अभिस्थापित व्यक्तियों की संख्या
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
१. आंध्र प्रदेश	४	२	१८	१४३	—	—	२०	६	४०५	१६२००
२. असम	१	१	४७	११६	७२	५६५	११	२	१७	१८०८
३. विहार	५	—	—	—	४६४	१६३७	१७	४	८७	५५९५
४. गुजरात	२	२	२३	८३९	४९३	३८१	१७	८	१४२	१४१४२
५. जम्मू और कश्मीर	—	—	१९	५	—	—	९	—	अप्राप्त	अप्राप्त
६. केरल	२	१	—	७५८	७७	४३	९	७	११६	६८४०
७. मध्य प्रदेश	३	२	१८५	४३७	—	३६८९	४३	२३	४८३	३१८०६६

"उचित अवधि के अन्दर जनसंख्या वृद्धि को स्थिर कर देने का लक्ष्य सुनियोजित विकास केन्द्र के सामने होना चाहिए। इस संदर्भ में तृतीय योजना तथा इसके बाद की पंचवर्षीय योजनाओं में परिवार नियोजन के कार्यक्रम पर सबसे अधिक बल देना होगा। इसमें भरपूर शिक्षा, बड़े से बड़े पैमाने पर सुविधाओं और सलाह का प्रबन्ध तथा प्रत्येक ग्रामीण और शहरी स्थलों में व्यापक जनप्रिय प्रयास सन्निहित होंगे। देश की परिस्थितियों में परिवार नियोजन को एक बड़े विकास कार्यक्रम मात्र के रूप में नहीं बल्कि एक ऐसे राष्ट्र-व्यापी आंदोलन के रूप में लाना होगा, जो व्यक्ति, परिवार तथा समुदाय के लिए अच्छे जीवन की दिशा में एक आधारभूत वृत्ति पैदा कर सके"।[१]

भारत सरकार ने १९६२-६३ में सम्पूर्ण परिवार नियोजन कार्यक्रम की आलोचना की थी तथा एक नए दृष्टिकोण का सुझाव दिया गया, जिसे "विस्तार" अभियान कहा गया है। इस नए दृष्टिकोण को परिवार नियोजन बोर्ड ने अक्टूबर, १९६३ में अनुमोदित किया तथा सरकार ने अंगीकार किया।

"विस्तार दृष्टिकोण"

विस्तार शिक्षा से अर्थ है, लोगों के एक समूह को परिवार नियोजन का ज्ञान प्राप्त करने के लिए सहायता, जिससे वे इसके अनुकूल नए मानों तथा रुखों का विकास कर सकें। विस्तार की प्रक्रिया इस प्रकार से प्रस्तुत की जाती है कि वह जनता के व्यवहार को प्रभावित करे, जिससे वे निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार समस्या का मुकाबला स्वेच्छा से दे सकें। इसका तात्पर्य लोगों से यह बताना नहीं है कि वे क्या करें, बल्कि उन्हें अपनी ही आवश्यकताओं को खोजने में मदद करना है। इस कार्यक्रम में परिवार नियोजन कार्यकर्त्ता को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग अदा करना होता है। वह एक उत्प्रेरक की भांति है तथा ऐसी स्थितियां प्रदान करता है जो "जनता को सहायता अपनी सहायता स्वयं करने के लिए" प्रेरित करती है। परिवार नियोजन कार्यकर्त्ता नेतृत्व नहीं करता है, बल्कि स्थानीय नेताओं तथा संस्थाओं के सहयोग से केवल कार्य करता है।

लाभ

भारत में परिवार नियोजन कार्यक्रम का [illegible] है जिसकी सीमा [illegible]

१. [illegible]

(ख) उन मार्गों से जिनमे मनोवैज्ञानिक या भौतिक बाधाएं कम-से कम हो गर्भनिरोधकों की पूर्ति।

चार सहायक सुविधाएं निम्नलिखित हैं :

(क) विशेष मामलों में चिकित्सा सेवाओ तथा सहायता की व्यवस्था;
(ख) प्रजनन सामर्थ्य पर सांख्यिकीय कार्यक्रम के प्रभाव की व्यवस्था
(ग) समस्त प्रशासनिक समन्वय; तथा
(घ) प्रशिक्षण की सुविधाए।

(क) सामुदायिक शैक्षणिक कार्य : ऐसा पाया गया है कि एक समुदाय द्वारा अपने सदस्यो पर किए गए प्रयत्नों का प्रभाव बाहरी व्यक्तियों द्वारा व्यक्तिगत निर्देशों से कही अधिक होता है। "विस्तार" दृष्टिकोण मे ऐसी परिस्थितियो को उत्पन्न करने की परिकल्पना की गई है, जिनसे समूह द्वारा दवाव की शक्तिया प्रेरित हो सकती हैं। इसमें जनता के विभिन्न उपसमूहो के प्रभावशाली नेताओ के लिए ऐसी पद्धतियों का विकास सन्निहित है, जिनसे वे ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किए जा सके तथा अपने समूहो में छोटे परिवार के प्रतिमानो को विकसित करने मे रुचि लें, जिससे उन्हे अन्य समूहों मे परिवार नियोजन के व्यवहार को सक्रिय रूप से अभिप्रेरित करने की सहायता मिल सके। यह दृष्टिकोण परिवर्तनो को लाने के लिए अधिक प्रभावशाली ही नही रहेगा, बल्कि इससे एक अकेले कार्यकर्त्ता के लिए व्यक्तिगत प्रवेश द्वारा कही अधिक संख्या में लोगों तक पहुंचना सम्भव होगा।

ऐसे समूहों पर उत्तरदायित्वों को डालना सम्भव है, जैसे पचायती समितियां, ग्राम विकास समितिया तथा ऐसी संस्थाएं। ये अपने समूह के लोगो को शिक्षित तथा प्रेरित करने तथा गर्भनिरोधक सामग्रियो के वितरण का उत्तरदायित्व ले सकते हैं।

(ख) गर्भनिरोधकों की पूर्ति : परिवार नियोजन की व्यापक स्वीकृति का स्वाभाविक परिणाम यह है कि गर्भनिरोधक सरलता से प्राप्त हो सकें। गर्भनिरोधकों के वितरण की व्यवस्था ग्राम पचायतों, धात्रियो तथा भण्डागारों एवं विभिन्न ग्रामीण स्वास्थ्य विकास कार्यकर्त्ताओ के माध्यम से की जानी है। रिकार्ड रखने की प्रक्रिया कम-से-कम होनी चाहिए।

(ग) चिकित्सा सेवाएं : परिवार नियोजन चिकित्सालयो के कार्यों की स्पष्ट परिभाषा की जानी चाहिए, जिसमे चिकित्सालयो में उपस्थिति की भूल से कार्यक्रम

के प्रभाव का सूचक न समझा जाए। स्त्रियों को चिकित्सा सेवाएं प्रदान करने के लिए वर्तमान मातृत्व तथा बाल स्वास्थ्य चिकित्सालयों का अधिकतम उपयोग किया जाना चाहिए। परिवेश में सहायक नर्स धात्रियों के कर्मचारीवर्ग को परिवार नियोजन कार्यक्रम, शक्तिशाली बनाना होगा।

(घ) **सांख्यिकीय मूल्यांकन** : परिवार नियोजन कार्यक्रम के प्रभाव का अंतिम मूल्यांकन प्रसवनशक्ति में हुए परिवर्तनों का पता लगाने पर निर्भर करता है। इस प्रकार का निर्धारण इस समय विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है जिससे कि भारत के विभिन्न भागों में आरम्भ किए गए विभिन्न तरीकों की तुलनात्मक प्रभावशालिता जानी जा सके। खण्ड स्तर के कार्यकर्ताओं के लिए जन्मों का पता लगाने के अच्छे अवसर होते हैं, इस कारण यह प्रस्तावित किया गया है कि खण्ड स्तर पर संगणक रखे जाएं जो ग्राम पंजीयक तथा अन्य साधनों से महत्वपूर्ण सांख्यिकी तथ्यों को एकत्रित कर सके।

(ङ) **प्रशासनिक समन्वय** : परिवार नियोजन कार्यक्रम का उद्देश्य छोटे परिवार के लिए जन-आन्दोलन की गति बढ़ाना है। इस उद्देश्य के लिए एक सुग्रथित प्रशासनिक कर्मचारी वर्ग की आवश्यकता है। राज्य, ज़िला, तथा खण्ड स्तर पर स्वास्थ्य प्रशासन के कर्मचारियों को शक्ति देना आवश्यक होगा। ज़िला स्तर पर एक मेडिकल परिवार नियोजन अधिकारी के साथ एक गैर-मेडिकल विस्तार शिक्षक तथा अन्य सहयोगी कर्मचारियों की आवश्यकता होगी। खण्ड स्तर पर एक प्रशिक्षित विस्तार शिक्षक तथा कुछ पुरुष परिवार-नियोजन-क्षेत्रीय कार्यकर्ताओं एवं धात्रियों की तरह सहायक-नर्स-कर्मचारियों की आवश्यकता होगी।

उपरोक्त संगठन के विकास के लिए सावधानी से विवेचन की आवश्यता होगी तथा आवश्यकतानुसार प्रशिक्षण पद्धति को तगड़ा बनाना होगा। इतने बड़े आकार के कार्यक्रम को लागू करने के लिए प्रशिक्षित कर्मचारी उपलब्ध नहीं हैं तथा बहुत से ऐसे कर्मचारी जो अच्छी तरह से प्रशिक्षित हैं ग्रामीण क्षेत्रों में जाने से हिचकिचाते हैं। यदि प्रारम्भ में प्रत्येक राज्य में केवल एक या दो जिले चुन लिए जाएं तथा कर्मचारियों को सभी आवश्यक सुविधाएं एवं प्रोत्साहन उपलब्ध कर दिए जाएं तो यह कार्य आसान होगा। जैसे-जैसे अधिक प्रशिक्षित कर्मचारी उपलब्ध होते जाएं, इस कार्यक्रम को अन्य जिलों में क्रमिक रूप से पूरे राज्य में विस्तृत किया जा सकता है।

नए कार्यक्रम का मुख्य लक्ष्य सामाजिक कार्यकर्ताओं तथा सामाजिक वैज्ञानिकों की और भी बड़ी संख्या को परिवार नियोजन के कार्यक्रम मे लगाए जाने का था, जिससे कि सभी प्रजनन सन्तानोत्पादनसमर्थ दम्पतियों तक पहुचा जा सके और उन्हें गर्भनिरोध अपनाने के लिए प्रेरित किया जा सके। इसमें जिला स्तर पर एक महिला विस्तार-शिक्षा-अधिकारी और एक पुरुष तथा एक महिला क्षेत्र कार्यकर्त्ता की नियुक्ति सन्निहित थी, पर इन कर्मचारियों की नियुक्ति में पजाब, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, केरल, गुजरात तथा उड़ीसा को छोड़कर अन्य अधिक प्रगति नहीं हो पाई है। (सारिणी ४४ तथा ४५)। और ये राज्य वे हैं, जहा परिवार नियोजन कार्यक्रम ने अधिक प्रगति की है, जैसा कि सारिणी ४६ तथा ४७ से स्पष्ट है, जो भारत के विभिन्न राज्यो मे अनुर्वरीकरण तथा अन्तःगर्भाशय गर्भनिरोध की प्रगति दिखाते हैं। इसलिए अन्य राज्यों में भी कर्मचारियों को अपनी स्थिति पर लगाने की तुरन्त आवश्यकता है।

एक भिन्न दृष्टिकोण

इस बात की आवश्यकता भी है कि सब के लिए सेवा पर से, महत्व को हटाकर सेवा उनके लिए, जिन्हें सर्वाधिक-आवश्यकता है, पर महत्त्व देना होगा। परिवार नियोजन कार्यक्रम को प्रारंभिक अवस्थाओं में उन समूहों की ओर लक्षित करना होगा, जिनके लिए परिवार नियोजन कार्यक्रम तुरन्त अपनाए जाने की सम्भावना है। यदि कार्यक्रम को सभी लोगों की ओर लक्षित किया जाए, तो सीमित साधनों को एक विशाल क्षेत्र मे कमजोर ढग से फैलाना होगा तथा एक स्थायी या अर्द्ध-स्थायी प्रशासनिक यन्त्र की रचना करनी होगी। इसमें अधिक व्यय होने और अधिक समय की सम्भावना है।

सारिणी ४४

विभिन्न राज्यों में परिवार नियोजन ब्यूरो में कर्मचारियों की स्थिति, दिसम्बर १९६५

राज्य/के० शा० प्रदेश	राज्य-स्तर पर परिवार नियोजन कर्मचारी, दिसम्बर १९६५				
	परिवार नियोजन अधिकारी	स्वास्थ्य शिक्षक		संख्याविद्	
		आवश्यक	है	आवश्यक	है
आंध्र प्रदेश	सहायक डी० पी० एच० (परि० नियो०)	१	१	१	—
असम	सहायक डी० एच० एस० ,,	१	—	१	—
बिहार	डिप्टी डी० एच० एस०	१	—	१	—
गुजरात	सहायक डी० पी० एच० (परि० नियो०)	१	—	१	१
जम्मू और कश्मीर	डिप्टी डी० एच० एस०	१	—	१	१
केरल	एस० एफ० पी० ओ०	१	१	१	१
मध्य प्रदेश	ज्वाइंट डी० एच० एस० (परि० नियो०)	१	१	१	—
मद्रास	राज्य एफ० पी० ओ०	१	—	१	—
महाराष्ट्र	ओ/आई० ए० डी० पी० एच० (परि० नियो०)	१	१	१	१
मैसूर	डिप्टी डी० पी० एच० (परि० नियो०)	१	१	१	१
उड़ीसा	ज्वाइंट डी० एच० एस० (परि० नियो०)	१	१	१	१
पंजाब	डिप्टी डी० एच० एस० (परि० नियो०)	१	१	१	१
राजस्थान	सहायक डी० एच० एस० (परि० नियो०)	१	—	१	—

[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
उत्तर प्रदेश	सहायक डी० एच० एस० (परि० नियो०)	१	१	१	—
पश्चिम बंगाल	डिप्टी डी० एच० एस० (परि० नियो०)	१	१	१	१
अण्डमान निकोबारद्वीप	—	१	—	१	—
दिल्ली	सुपरिन्टेन्डेन्ट (परि० नियो०)	१	—	१	—
हिमाचल प्रदेश	सहायक डी० एच० एस० (परि० नियो०)	१	—	१	—
मणिपुर	डिप्टी डायरेक्टर	१	—	१	—
पाण्डिचेरी	राज्य एफ० पी० ओ०	१	—	१	—
त्रिपुरा	—	१	—	१	—
नेफा	—	१	—	१	—
गोआ	सी० एम० ओ०	१	—	१	—
एल० एम० द्वीप	—	१	—	१	—
नागालैण्ड	—	१	—	१	—
	योग	२५	६	२५	८

सारिणी ४५

जिला स्तर पर परिवार नियोजन कर्मचारी, दिसम्बर १९६५

राज्य	जिलों की संख्या	परिवार नियोजन कर्मचारी	शल्य—चिकित्सक		जिला विस्तार शिक्षक		नर्स	क्षेत्र कर्मचारी	
			पुरुष	महिला	पुरुष	महिला		पुरुष	महिला
१. आंध्र प्रदेश	२०	—	२०	—	१४	—	—	४	—
२. असम	११	५	१०	—	—	—	—	—	—
३. बिहार	१७	—	—	—	—	—	—	—	—
४. गुजरात	१८	१७	४	३	१२	६	९	—	—
५. जम्मू और कश्मीर	९	२	—	२	२	२	२	२	२
६. केरल	९	९	९	९	९	९	९	२	२
७. मध्य प्रदेश	४३	—	२१	—	—	—	—	—	—
८. मद्रास	१३	—	—	—	—	—	—	—	—
९. महाराष्ट्र	२६	२५	२६	—	२५	—	—	२५	—
१०. मैसूर	१९	६	—	—	१३	—	६	—	—
११. उड़ीसा	१३	१३	१३	१३	११	९	१३	१३	१३
१२. पंजाब	१९	१२	३	२	३७	३६	४	६	२
१३. राजस्थान	२६	—	—	—	—	—	—	—	—
१४. उत्तर प्रदेश	५४	३३	९	२०	१२	—	१२	—	—
१५. पश्चिम बंगाल	१६	१६	१३	६	१६	१६	१५	१६	१३
भारत	३३५	१४३	१२७	५६	१५१	७८	७०	७६	३०

परिवार-नियोजन के संगठनात्मक ढांचे मे गति तथा युक्तिकौशल होना चाहिए तथा उसे ऊपर से बजाय नीचे से प्रकल्पित किया जाना चाहिए। तालुका, जिला तथा राज्य स्तर पर मस्तिष्कों के केन्द्र बनाए जाने चाहिए, सामाजिक वैज्ञानिकों, सरकारी अधिकारियों तथा सामाजिक "नेताओं" को निर्णय लेने के कार्य मे सम्मिलित करना होगा। क्योंकि परिवार-नियोजन मे लोगों के रुख मे परिवर्तन की आवश्यकता होती है, इसलिए सामाजिक वैज्ञानिकों को कार्यक्रम मे सम्मिलित करने तथा चिकित्सेतर कार्यों मे चिकित्सकों को हटाने के गम्भीर प्रयत्न करने होंगे। सूचना, शिक्षा तथा प्रेरित करने का उत्तरदायित्व सामाजिक वैज्ञानिकों का होना चाहिए।

परिवार-नियोजन कार्यक्रम के प्रभाव के मुल्याकन का कार्य जनसख्या विशारदों को दिया जाना चाहिए। शोध तथा मूल्याकन को कार्यवाही के कार्यक्रम के अन्तर्गत रखना चाहिए तथा इसका प्रवाह ऊपर से निर्देशित होने के स्थान पर नीचे से ऊपर की ओर होना चाहिए। परिवार नियोजन की सही नीति निम्नलिखित सिद्धान्तों पर आधारित हो सकती है।

(क) आन्दोलन को सार्वभौमिक बनाने के स्थान पर उसकी जड़ व्यक्तियों में जमा देनी है;

(ख) उस समूह के पास पहले पहुचा जाए, जिसके परिवार-नियोजन को तत्परता के साथ स्वीकार करने की सर्वाधिक सम्भावना हो;

(ग) अपने साधनो को विस्तृत क्षेत्र मे कमजोर ढग से फैलाया न जाए;

(घ) ग्रामीण क्षेत्रों पर विशेष ध्यान दिया जाए क्योंकि भारत की ८२ प्रतिशत जनसंख्या वहीं पर रहती है,

(ङ) प्रशासनिक दृष्टिकोण, बजाए ऊपर से नीचे के, नीचे से ऊपर को होना चाहिए,

(च) चिकित्सेत्तर कार्यों से चिकित्सकों को हटा लेना चाहिए; तथा

(छ) परिवार-नियोजन के लिए एक अनुशासन से उर्घ्व तरीके का विकास किया जाना चाहिए तथा विभिन्न स्तरो पर निर्णय लेने के कार्य मे अनेक सामाजिक वैज्ञानिकों को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

सारिणी ४६

विभिन्न राज्यों में अनुर्वरीकरण कार्यक्रम की प्रगति

राज्य केन्द्र प्रशासित क्षेत्र	१९६६-६७ के मध्यवर्ष की अनुमानित जनसंख्या	१९६६-६७ के दौरान अनुर्वरीकरण का लक्ष्य	१९६६-६७ के दौरान किए गए अनुर्वरी० शल्यक्रिया	१९६६-६७ में उपलब्ध लक्ष्य का प्रतिशत	अनुर्वरीकरण करने की पूर्ण संख्या		अभी तक किए अनुर्वरीकरण शल्यक्रिया की संचयी संख्या, १९६६-६७ की प्रति १००० अनुमानित जनसंख्या पर
					प्रारम्भ से	जब तक	
१. आंध्र प्रदेश	४००८६	७८५९६	१८४१६	२३.४३	६४७३२	३०-९-६६	१.६१
२. असम	१३०६१	२४८६१	३१२	१.२५	२४९९६	३१-७-६६	१.७९
३. बिहार	५६८०८	७१३१२	७२१४	१०.१२	२२६७१	३०-९-६६	०.५६
४. गुजरात	२४००२	५६५८३	१३७८७	२४.३७	११६६२८	३०-९-६६	४.८६
५. जम्मू और कश्मीर	३६४७	६२३४	९८६	१५.८२	९७०९	३०-९-६६	२.५२
६. केरल	१९४२१	८४३८२	१२४४८	१४.७५	१२७३९८	३१-८-६६	६.५६
७. मध्य प्रदेश	३७१६४	७६०५७	१६६१०[1]	२१.८४	११६८७९	३१-८-६६	३.१४
८. मद्रास	३७०२३	१६५५७५	१२६०००[2]	६४.४३	४०६४४३	३१-८-६६	१०.९८
९. महाराष्ट्र	४५६०५	१३२८७८	१५७७८	११.८१	२७४२०७	३०-९-६६	६.०१
१०. मैसूर	२६८८८	६२२७३	२११९२	३४.०३	९०२३०	३०-९-६६	३.३६
११. उड़ीसा	१९८५५	७४०३३	३२६२६	४४.०७	१००१०६	३०-९-६६	५.०४
१२. पंजाब	२४०७६	७६४०८	८६६९	११.३५	९३६७८	३०-९-६६	४.०६
१३. राजस्थान	२३६५०	४०५८१	११९०	२.९४	४४३९९	३१-७-६६	१.८९

१४ उत्तर प्रदेश	८३४८१	१७५७०८	१७७५१	१०.१०	१७४०७६	३०-९-६६	२.०९
१५. पश्चिमी बंगाल	४०५९२	७४०९९	५००२	६ ७५	५३१८३	३१-८-६६	१.३१
१६. नागालैण्ड	४००	१००२	अप्राप्त	०.००	२२७	३१-८-६६	०.५६
१७ अंडमान, निकोबार	८०	१९५	१८	९.२३	२३६	३०-६-६६	२.९५
१८. दिल्ली	३५१०	११९२८	६६४	५ ५७	१५३९७	३०-९-६६	४.३९
१९. दादर, नगर हवेली	६६	१६३	७	४ २९	७	३१-७-६६	०.११
२० गोआ, दमन, दीव	६६३	१६४८	२९५	१७ ९०	१६८५	३०-९-६६	२.५४
२१. हिमाचल प्रदेश	१५६१	२५००	४०३	१६.१२	४२९४	३०-६-६६	२.७९
२२. हरियाना	९६३	२००	१६	८.००	२५५	३०-९-६६	० २६
२३. एल०एम०ए० द्वीप	२६	६५	१	१.५८	१	३१-७-६६	०४
२४ नेफा	३७०	८४०	——	——	——	——	०.००
२५. पाण्डिचेरी	४१४	१०२३	अप्राप्त	——	२७४	३१-३-६६	० ६६
२६. त्रिपुरा	१८५०	३२००	२९	०.९१	३३७[1]	३०-९-६६	०.२५
२७ रक्षा मंत्रालय	——	——	४१२[1]	——	१०८४३[1]	३०-९-६६	——
२८ रेल मंत्रालय	——	——	१९२४[1]	——	१७३१६[1]	३०-९-६६	——
योग	५०१३९८	१२५२७६४	२०११७०	२४.०८	१७८१५०२		३.५५

१. अपूर्ण

२. मध्यप्रदेश के मुख्य मंत्री द्वारा केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री को डी० ओ० पत्र संख्या ६८७७९-६च १०-६६१ स्वास्थ्य, दिनांक ७ अक्टूबर, १९६६ के माध्यम से दिए गए आंकड़ों के आधार पर है।

सारिणी ४७

विभिन्न राज्यों में अन्तः प्रभाशय गर्भनिरोधक युक्ति कार्यक्रम की प्रगति

राज्यों/केन्द्र प्रशासित क्षेत्र	१९६६-६७ के मध्यवर्ग की अनुमानित जनसंख्या	अन्तःगर्भाशय गर्भ-निरोधक युक्ति का लक्ष्य		१९६६-६७ में उपलब्धलक्ष्य का प्रतिशत	किए गए निवेशों की सम्पूर्ण संख्या		अभी तक किए गए अंतःगर्भाशय गर्भनिरोधक युक्ति के निवेशों की संचयी संख्या १९६६-६७ की प्रति १००० अनुमानित जनसंख्या पर
		१९६६-६७ के दौरान निवेश	१९६६-६७ के दौरान किए गए निवेश		प्रारम्भ से	जब तक	
१. आंध्र प्रदेश	४००८६	१८४३५०	११९५२	६.४८	२०३२९	३०-९-६६	०.५१
२. असम	१३९६१	१२६५२०	१२८२०[1]	१०.१३	४१७९७[1]	३०-९-६६	२.९९
३. बिहार	५२८०८	२५७७६०	१३७०४	५.३२	२६४४४	५-११-६६	०.५०
४. गुजरात	२४००२	३५२५१५	१८८२३[1]	५.३३	१०८३३४[1]	३०-९-६६	४.५१
५. जम्मू और कश्मीर	३८४७	४६९९५	६३१३	१३.४४	१०३२०	३०-९-६६	२.६८
६. केरल	१९४२१	१६६९५०	१३२२६	७.९२	४८९४३	३१-८-६६	२.५२
७. मध्य प्रदेश	३७१६४	१९८५२०	१२८१३[1]	६.४५	३३९१८[1]	३१-८-६५	८.९१
८. मद्रास	३७०२३	१६०२६५	१९७८	१.२३	५४९९	३१-७-६६	०.१५
९. महाराष्ट्र	१५६०५	४१६६८०	४७०९८	११.३०	१७६९८५	३०-९-६६	३.८८
१०. मैसूर	२६८३८	३३१७२०	४२७११	१२.८८	११८६११	३०-९-६६	४.४२

११. उड़ीसा	१६८५५	६५०३०	४६२८	४.८७	१०६४३	३०-६-६६	०.६४
१२. पंजाब	२४०७६	४२८०६५	७५८३७	१७ ७१	२०८१००	३०-६-६६	८.६४
१३. राजस्थान	२३६५६	१३४८१५	३७२४	२ ७६	१७३८७	३१-७-६६	०.७४
१४. उत्तर प्रदेश	८३४८१	४२५१८०	५१६३३	१२.२१	६७२६१	३०-६-६६	१.१७
१५. पश्चिम बगाल	४०५६२	६८३६३५	४६०१८	६.७३	१०४०५	३१-८-६६	५ १८
१६. नागालैण्ड	४०६	८०२०	——	०.००	——	——	०.००
१७. अंडमान निकोबार	८०	१०००	३८	३.८०	६८	३०-६-६६	० ८५
१८. दिल्ली	३५१०	५००७२	७२८८	१२.३४	२७७५०	३०-६-६६	७ ६१
१९. दादर, नगर हवेली	६६	१३००	——	०.००	——	——	० ००
२०. गोआ, दमन, दीव	६६३	१३१८०	१६८	१.५०	२४८	३०-८-६६	०.३७
२१. हिमाचलप्रदेश	१५४१	२००००	१३७७[1]	६ ८६	३८४७	३०-८-६६	२ ५०
२२. मणिपुर	६६३	१५८२०	६६१	४ ३०	१८२०	३०-६-६६	१.८६
२३. एल० एम० ए० द्वीप	२६	५२०	——	०.००	——	——	०.००
२४. नेफा	३७०	५५२०	——	० ००	——	——	० ००
२५. पाण्डिचेरी	४१४	८१८०	अप्राप्त	० ००	३६	३१-३-६६	० ०६
२६. त्रिपुरा	१३५०	२३५२०	३०४	१ २६	३०४	३०-६-६६	० २३
२७. रक्षा मंत्रालय	——	——	१२४६[1]		३४३३[1]	३०-६-६६	
२८ रेल मंत्रालय	——	——	६८१६		१३८१[1]	३१-८-६६	
योग	५०१७६८	४१५६१३२	३८१५३६	६ १८	११,६०,६६६		२ ३७

१. अपूर्ण
२. राष्ट्रीकरण के आधीन

जिन्हें इसकी सर्वाधिक आवश्यकता है

भारत में विवाहित दम्पतियों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है :

(क) वे दम्पति जिनके चार या अधिक जीवित बच्चे हैं, तथा जो और बच्चे नहीं चाहते हैं। ये पहले से ही परिवार-नियोजन के पक्ष में हैं;

(ख) वे दम्पति जिनके तीन या तीन से कम बच्चे हैं। ये परिवार-नियोजन के पक्ष में पूर्ण रूप से प्रेरित नहीं हैं और इन्हें समझाना-बुझाना होता है।

भारत में ८.२ करोड़ विवाहित दम्पतियों में से मोटे तौर पर ३.२ करोड़ प्रथम श्रेणी में आते हैं तथा शेष ५ करोड़ दूसरी श्रेणी में हैं।

८.२ करोड़ दम्पतियों तक थोड़े समय में पहुंचने के पर्याप्त साधन उपलब्ध नहीं हैं, इसीलिए ऐसी बात अपनाना उचित होगा कि निर्धारित व्यय के अन्दर अधिकतम लाभ उठाया जा सके। इस प्रकार से आरम्भ में हमारी शक्ति यह होनी चाहिए कि हम परिवार-नियोजन को उन लोगों तक ले जाएं जिन्हें इसकी सर्वाधिक आवश्यकता है। दूसरे शब्दों में उन वर्गों के लोगों को पहले संतुष्ट करने के लिए कार्य करना चाहिए जो पहले से ही प्रेरित हैं तथा जो अतिरिक्त बच्चे नहीं चाहते हैं, अर्थात् ३.२ करोड़ दम्पति।

इस प्रकार के दम्पतियों को सरलता से खोजा जा सकता है। स्त्रियां ३५ वर्ष तथा उससे अधिक आयु की हैं तथा उनके चार या अधिक जीवित बच्चे हैं। ये दम्पति अतिरिक्त बच्चे नहीं चाहते, इस कारण इन्हें प्रेरित मान लिया जा सकता है। फिर भी ये दम्पति अधिकतर ऐसी पद्धतियों के बारे में सूचना चाहेंगे, जो स्थायी रूप से गर्भधारण को रोकने में उनकी सहायता करेगा जैसे अन्तःगर्भाशय गर्भनिरोध युक्ति तथा अनुर्वरीकरण। सूचना के पश्चात् सेवा-सुविधाएं प्रदान करना होगा। परिवार-नियोजन कार्यकर्त्ताओं के चलते-फिरते दलों तथा चलते-फिरते परिवार-नियोजन चिकित्सालयों के द्वारा, जिन्हें चुने हुए गांवों में पूर्व-घोषित दिनों में जाना चाहिए, सूचना तथा सेवा दोनों की पूर्ति और अच्छी तरह से की जा सकती है।

---

१. १९६१ के जनगणना के समय मोटे तौर पर ७.४ करोड़ विवाहित दम्पति पुनर्जनन आयु-वर्ग में थे, अर्थात् १५ और ४५ वर्ष की आयु के बीच। यह संख्या प्रतिवर्ष लगभग तीस लाख बढ़ जाती है। इस प्रकार से १९६५ तक विवाहित दम्पतियों की संख्या ८.२ करोड़ तक होगी।

हमारा दूसरा लक्ष्य परिवार-नियोजन को लोगो के दरवाजे तक ले जाने का होना चाहिए।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि समस्त ३.२ करोड दम्पतियो द्वारा परिवार-नियोजन को अपनाए जाने पर यदि गर्भनिरोधक १०० प्रतिशत प्रभावशाली हों तो जन्मदर मे ह्रास १३ अको का होगा। पर इन दम्पतियों मे केवल ८० प्रतिशत तक ही पहुंचा जाए, तो ह्रास १० अकों मे थोड़ा ऊपर होगा।

दूसरा महत्त्वपूर्ण लाभ शिक्षा के क्षेत्र में होगा। इस आयुवर्ग की स्त्रिया भविष्य की होने वाली सासें हैं और यदि वे गर्भनिरोध अपनाती हैं, तो संभव है कि वे अपनी बहुओ को भी ऐसा करने को प्रेरित करें। इस प्रकार से यह सम्भावना है कि सचार तथा प्रेरणा के क्षेत्र मे कई गुना प्रभाव पड़े।

अभीष्ट यह भी होगा कि चलते-फिरते क्षेत्रीय दल तथा चलते-फिरते परिवार-नियोजन चिकित्सालय क्रमशः सूचना और सेवा के कार्य करें। परिवार-नियोजन कार्यकर्त्ताओं के दलो को, जिनमे से प्रत्येक दल मे दो कार्यकर्त्ता हों, किसी गांव में चलते-फिरते चिकित्सालयो के आने के कुछ दिन पूर्व पहुंचना चाहिए तथा सभाएं करनी चाहिए अथवा चार तथा अधिक जीवित बच्चो वाले दम्पतियों से व्यक्तिगत वार्तालाप करना चाहिए। एक हज़ार की जनसंख्यावाले एक गाव में[1] इस प्रकार के दम्पतियो की सख्या लगभग ७७ होगी।[2] इन दम्पतियो को परिवार-नियोजन के पक्ष में प्रेरित करना आवश्यक नहीं होगा, इसलिए दो व्यक्तियों के दल के लिए विभिन्न परिवार-नियोजन की पद्धतियों के सम्बन्ध में सूचना देने में तथा १००० जनसख्या के गाव के ७७ दम्पतियों में साहित्य के वितरण में दो दिन का समय लगेगा।

आवश्यक सूचनाएं प्रदान करने के पश्चात् सामाजिक कार्यकर्त्ता इच्छुक दम्पतियो के नाम लिखकर उन्हें क्षेत्रीय इकाई के क्षेत्रीय मुख्यालय को भेज सकते है, जो चलते-फिरते चिकित्सालय को उस गाव मे भेजकर गर्भनिरोधकों की पूर्ति कर सकता है, अथवा अनुर्वरीकरण कर सकता है या अन्तःगर्भाशय गर्भनिरोधक लगा सकता है।

---

१. १००० के गांव का आकार उदाहरण के लिए लिया गया है।

२. अगरवाला, एस० एन०, "सोशल कॉस्ट एण्ड बेनिफ़ी प्लानिंग इंडिया एण्ड सिटे", जर्नल आफ फेमिली वेलफेयर, वोल्यूम १२, संख्या १, सितम्बर १९६५, पृ० सं० २८-२९।

सारिणी ४८

ग्रामीण क्षेत्रों मे रहनेवाले ४ या अधिक बच्चोंवाले दम्पतियों तक पहुंचने के लिए दो कार्यकर्त्ताओं के दल के लिए जो प्रत्येक दिन के बाद ७७ दम्पतियों तक पहुंच सकें, आवश्यक महीनों और वर्षों की संख्या

राज्य	१९६६ में ४ या अधिक बच्चों वाले दम्पति	आवश्यक सख्या	
		महीनों की	वर्षों की
आंध्र प्रदेश	२,६५८,५७७	२,९५४	२४६
असम	९८०,७५९	१,०९०	९१
बिहार	३,८०६,९४७	४,२२९	३५२
गुजरात	१,३७०,६६४	१,५२२	१२७
जम्मू और कश्मीर	२६५,८३५	२९५	२५
मध्य प्रदेश	२,४८५,३३८	२,७६१	२३०
केरल	१,२८४,११६	१,४२७	११९
मद्रास	२,२१०,०४७	२,४६५	२०५
महाराष्ट्र	२,५४०,६७०	२,८२३	२३५
मैसूर	१,६५५,८४०	१,८३९	१५३
उड़ीसा	१,४७१,७००	१,६३५	१३६
पंजाब	१,४६८,३८४	१,६१०	१३४
राजस्थान	१,५१०,०३४	१,६७७	१४०
उत्तर प्रदेश	५,८०८,५९७	६,४५४	५३८
पश्चिम बंगाल	२,३६१,१६४	२,६२४	२१८
योग	३१,८६०,६६२	३५,३९५	२,९४९
भारत	३२,२४५,४५६	३५,८२८	२,९८५

१९६१ में अनुबंधित की जाएंगी, १९६६ तथा १९७१ में इस प्रकार की स्त्रियों का प्रतिशत केवल २८ तथा २५ प्रतिशत क्रमशः होगा। जब कि १९६१-७१ के दशक में सन्तानोत्पादन समर्थ आयु की वर्तमान रूप में विवाहित स्त्रियों की ७.१५ करोड़ की वृद्धि होगी, तब केवल २.८ करोड़ दम्पति अनुबंधीकरण के कारण सन्तानजन्म मुक्त होंगे। इस प्रकार से अनुबंधीकरण के द्वारा वर्तमान विवाहित स्त्रियों की संख्या में कुल कमी केवल ६५ लाख होगी।

सारिणी ४६ में एक संक्षिप्त विवरण दिया गया है कि दिए हुए वर्षों के दौरान यदि जन्मदर में एक निर्धारित कमी लानी है, तो उसके लिए किए जाने वाले अनुबंधीकरण की संख्या क्या होगी। यह मान लिया गया है कि यह कार्यक्रम १९६६ तक आरम्भ होगा। ये गणनाएं पंजाब में पाए गए १९६१ में विशिष्ट-आयु में प्रजनन-शक्ति की दरें तथा १९६१ की जनगणना द्वारा प्राप्त वर्तमान विवाहित स्त्रियों के

सारिणी ४६

जन्मदर में निर्धारित कमी लाने के लिए निश्चित वर्षों में अनुबंधीकरण की आवश्यक संख्या

अवधि	जन्मदर के ह्रास के संशांक	प्रत्येक वर्ष में किए जानेवाले अनुबंधीकरण की संख्या (दस लाख में)
१९६६-७१ (पांच वर्ष)	४० से ३५	२.७५
	४० से ३०	५.५१
	४० से २५	८.२६
१९६६-७६ (दस वर्ष)	४० से ३५	१.८६
	४० से ३०	३.९८
	४० से २५	५.९९[1]
१९६६-८१ (पन्द्रह वर्ष)	४० से ३५	१.८४
	४० से ३०	३.६९
	४० से २५	५.५३[1]

१. आवश्यक आयुओं में विवाहित स्त्रियों की अप्राप्यता के कारण इन लक्ष्यों को प्राप्त करना सम्भव नहीं है।

अनुपात, अपरिवर्तित मानकर हैं। जनसंख्या के आंकड़े सम्बन्धी अनुमान वे हैं, जिन्हें जनसंख्या विशेषज्ञ-समिति ने तैयार किए थे, जो पहले दिए जा चुके हैं। अनुर्वरित किए जानेवाली स्त्रियों की आयु-अनुसूची वही मान ली गई है, जिसे महाराष्ट्र में डाण्डेकर[1] ने पाया था।

यदि ३० वर्ष की आयु की सभी विवाहित स्त्रियों और उनके पतियों को प्रत्येक वर्ष में अनुर्वरित कर दिया जाए तो १९६१ अनुर्वरीकरणों का परिमाण २८ लाख होगा तथा इस अंक को वार्षिक रूप से २.५ प्रतिशत बढ़ाना होगा जो भारत की जनसंख्या वृद्धि की वर्तमान दर है।

इस समस्या को देखने का एक और तरीका है। मान लिया जाए कि भारत सरकार १९९१ तक जन्म और मृत्युदर को १६ तक नीचे लाना चाहती है, तो प्रक्षिप्त संख्या १९६६ में ४८.५६ करोड़ होगी तथा १९९१ में ६५.७ करोड़ होगी। यदि यह मान लिया जाए कि जन्मदर में प्रस्तावित कमी केवल पुरुषों या स्त्रियों के अनुर्वरीकरण के द्वारा लाई जानी है, तो विभिन्न अवधियों में किए जानेवाले अनुर्वरीकरणों की संख्या सारिणी ५० में दी गई है।

सारिणी ५०

विभिन्न अवधियों में अनुर्वरीकरण की आवश्यक संख्या

अवधि	पंचवर्षीय अवधि में (दस लाख में)	अवधि के दौरान प्रतिवर्ष में (दस लाख में)
१९६१-६६	२०.३३	४.०७
१९६६-७१	२०.४५	४.०९
१९७१-७६	२९.८७	५.९७
१९७६-८१	३५.६९	७.१४
१९८१-८६	४५.०३	९.०१
१९८६-९१	५०.०९	१०.०२

१. डाण्डेकर, के०, "वेसेक्टोमी कैम्प्स इन महाराष्ट्र," पापुलेशन स्टडीज नम्बर ६३, पृष्ठ १५०

इस प्रकार अनुर्वरीकरण की आवश्यक संख्या १९६१-६६ मे चालीस लाख के अनुपात से १९८६-९१ के दौरान १ करोड़ से कुछ ऊपर होगी। यदि केवल स्त्रियो को अनुर्वरित करना है, तो सन्तानोत्पादनसमर्थ आयुओं की ४२.५ की आयु से ऊपर की सभी वर्तमान विवाहित स्त्रियों का १९६१ मे अनुर्वरीकरण करना होगा। पर १९९१ मे ३२ वर्ष मे अधिक आयु की सभी इस प्रकार की स्त्रियो को अनुर्वरित करना होगा। सन्तानोत्पादनसमर्थ आयुओं के अनुपात मे अनुर्वरित स्त्रियो का प्रतिशत १९६१ में १ से १९९१ मे ६६ तक बढ़ जाएगा।

उपरोक्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारत मे जनसख्या नियन्त्रण की समस्या केवल अनुर्वरीकरण से सुलझने वाली नहीं है, इसलिए नहीं, की समस्या बहुत विशाल है तथा सम्भाव्यता की सीमाओं से बाहर है, वल्कि इसलिए भी कि युवा दम्पतियों मे अनुर्वरीकरण का लोकप्रिय होना सम्भव नहीं है। साथ ही यह एक ऐसा कदम है जो उलट नहीं सकता है। तथा इस पर लोगों का विश्वास नहीं है, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहा शिशु तथा बाल-मृत्यु सख्या दर काफी ऊची है। विशेष रूप से अन्त गर्भाशय युक्तियों के प्रारम्भ होने के बाद अनुर्वरीकरण का क्षेत्र सीमित प्रतीत होता है।

अध्याय १६

अन्तः गर्भाशय गर्भनिरोधक

गर्भनिरोध की सभी आधुनिक पद्धतियों में अन्तःगर्भाशय गर्भनिरोधक अद्वितीय है, क्योंकि इसमें वर्षों के प्रभावशाली गर्भनिरोध के लिए केवल प्रारम्भिक प्रेरणा की आवश्यकता होती है। गर्भाशय में एक बाहरी वस्तु की उपस्थिति से गर्भाशय तथा नलीय गतिशीलता में परिवर्तन उत्पन्न होते हैं। बहुत से अलग-अलग अन्तःगर्भाशय उपायों का प्रयोग आज संसार भर में किया जा रहा है। पोलीथिलीन, स्टेनलेस स्टील, नाइलोन, रेशमकीड़े का जाल (सिल्क-वर्म गट) तथा अन्य वस्तुओं का प्रयोग किया जा चुका है। पोलीथिलीन लचीली होती हैं तथा इन्हें मूत्र-नालिका या ग्रैवीय प्रवेशिनी में पिरोया जा सकता है, जो आकार और बनावट में स्त्री रोग चिकित्सकों द्वारा सामान्यतया नैदानिक प्रक्रियाओं में प्रयुक्त प्रवेशिनियों के समान होती हैं। प्रवेशिनी को इसके पश्चात ग्रीवा नाल में प्रविष्ट किया जाता है तथा अन्तः गर्भाशय युक्ति गुहा में धीरे-से डालकर दबा दिया जाता है। अन्य युक्तियों में थोड़े-बहुत विस्तार की आवश्यकता होगी जो एनेस्थीसिया या स्त्रियों को समुचित कष्ट पहुंचाए बिना नहीं सम्भव है। वे गर्भाशय गुहा में आंशिक रूप से समवसन्न स्थिति में या तो दांतेदार गर्भाशय सलाका द्वारा या सुधरे हुए गर्भाशय ड्रेसिंग संदंशिका द्वारा प्रविष्ट किए जाते हैं।

सिऊल में १९६५ में आई० पी० पी० एफ० वेस्टर्न पेसिफिक रीजनल कानफ्रेंस में तैयार की गई ताईवान, हांगकांग तथा कोरिया से प्राप्त विवरणों ने यह संकेत किया था कि इन देशों के परिवार-नियोजन कार्यक्रमों में अन्तः गर्भाशय गर्भनिरोधक युक्तियां बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही हैं।

कोरिया में सितम्बर १९६२ में लिप्पे के लूप का प्रथम प्रयोग किया गया था तथा मई १९६४ में लूप निवेश राष्ट्रीय परिवार-नियोजन कार्यक्रम का नियमित अंग बना। प्रथम सत्ताईस महीनों के दौरान जो कि युक्ति पर अनुसंधान तथा मूल्यांकन की अवधि थी—कुल ७,३६४ महिलाओं के लिए लूप लगाया गया। मई १९६४ तथा जुलाई १९६५ के मध्य के १४ महीनों के दौरान अन्य २४४,४५० महिलाओं के लूप

लगाया गया। कोरिया में प्राप्त विवरण यह प्रगट करते हैं कि अन्तःगर्भाशय गर्भनिरोधक युक्तियों को स्वीकार करने वाली नालियों में से प्रथम वर्ष में ८४ प्रतिशत से अधिक का या अधिक पुन. परीक्षण किया गया। विवरणों में यह भी संकेत मिला है कि निवेश किए गए अन्तःगर्भाशय गर्भनिरोधक युक्तियों में से ७ प्रतिशत निकल जाते हैं और १८ प्रतिशत १२ महीनों के प्रयोग के पश्चात निकाल दिए जाते हैं। अन्य दो प्रतिशत में गर्भ धारण भी हो जाता है। १९७१ के अन्त तक कोरिया में अन्त-गर्भाशय गर्भ निरोधक युक्तियों के दस लाख निवेश का लक्ष्य रखा गया है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रतिवर्ष २००,००० से ३००,००० निवेश करने होंगे।

तार्इवान में १९६२ में प्रथम बार अन्त गर्भाशय गर्भनिरोधक युक्ति, लिप्पे लूप तथा मारगुलीस कोइल के प्रयोग का प्रारम्भ हुआ तथा इससे परिवार-नियोजन कार्यक्रम का एक नवीन युग आरम्भ हुआ। ताइचुंग पथप्रदर्शी कार्यकारी कार्यक्रम द्वारा प्राप्त उत्साहवर्द्धक परिणामों को देखते हुए जनवरी १९६४ में एक विस्तार कार्यक्रम मुख्यतया लिप्पे लूप का प्रयोग करते हुए ताईचुंग के बाद के क्षेत्रों में आरम्भ किया गया। यह कार्यक्रम अब पूरे प्रदेश में फैल गया है।

विस्तारित कार्यवाही कार्यक्रम के प्रारम्भ से पूर्व ताईचुंग पथ-प्रदर्शी कार्यक्रम द्वारा ३,५६० मामले पंजीकृत किए गए थे। १९६४ के दौरान कुल ४६,६०० मामले भर्ती किए, जो वार्षिक लक्ष्य ५०,००० का ९३ प्रतिशत था। मई १९६५ के अन्त तक ताईवान की ९५,४८७ विवाहित स्त्रियों ने युक्ति को स्वीकार कर लिया था तथा स्वीकार करने की दर २०-३० आयु की कुल विवाहित स्त्रियों की ७.४ प्रतिशत थी। स्वीकार करने की दर ग्रामीण क्षेत्र की अपेक्षाकृत (२.२ प्रतिशत) शहरी क्षेत्रों में उच्चतर है (१६.५ प्रतिशत)।

१९६३ में इस प्रदेश की अपरिष्कृत जन्मदर ३६ ३ प्रति १००० थी। यह १९६४ में ३४.५ तक घट गई जो ५ प्रतिशत का ह्रास था। ताईचुंग नगर में, जहां की अन्त.-गर्भाशय गर्भनिरोधक युक्ति कार्यक्रम १९६३ में आरम्भ किया गया था, अपरिष्कृत जन्मदर में १९६३ तथा १९६४ के मध्य ६.३ प्रतिशत का ह्रास हुआ।

ताईचुंग के ६,६४५ मामलों के पुनःपरीक्षण अध्ययन से ज्ञात होता है कि बहिष्करण, निराकरण तथा गर्भधारण १२ महीने के प्रयोग के बाद ३४.४ प्रतिशत होते हैं तथा २४ महीनों के प्रयोग के बाद ५१ प्रतिशत होते हैं। प्रारम्भ में लगाई गई युक्तियां में से २४ महीनों के प्रयोग के बाद मोटे तौर से २८ प्रतिशत हटा दी जाती है, १५ प्रतिशत

का बहिष्करण हो जाता है तथा अन्य ८ प्रतिशत का परिणाम गर्भधारण होता है।

हांगकांग में १९६३ में १६०० मामलों में अन्तःगर्भाशय गर्भनिरोधक युक्ति के प्रयोग का पथप्रदर्शी कार्यक्रम चलाया गया था। तब से लिप्पे लूप अत्यन्त लोकप्रिय हो गया है। यह आशा की जाती है कि हांगकांग की अनुमानित ५००,००० बच्चे देने-वाली स्त्रियों में से ५०,००० से अधिक १९६५ में परिवार-नियोजन चिकित्सालयों में उपस्थित होंगी तथा अन्य उसके बाद। केवल १९६४ में ४६,०३८ (२१,९२० नए तथा २४,११८ वर्तमान) रोगी थे, जो कुल ११६,७०६ बार आए थे। अन्तःगर्भाशय गर्भनिरोधक युक्ति कार्यक्रम के प्रारम्भ किए जाने के बाद जन्मदर में १९६५ के लगभग ४० प्रति एक हजार की जनसंख्या से १९६६ में लगभग २९ प्रति १००० तक ह्रास हुआ। हांगकांग में परिवार-नियोजन कार्यक्रम का मुख्य लक्ष्य पांच या दस वर्ष के समय में जन्मदर को २० प्रति १००० की जनसंख्या तक घटाना है। इस लक्ष्य को पहुंचने की सम्भावना उत्साहजनक लगती है।

भारत में सामान्यतः दो आकार के लिप्पे लूप प्रयोग में आते हैं। २७.५ मीली-मीटर तथा ३० मिलीमीटर तथा जब कि छोटे प्रकार के लूप में बहिष्करण दर ऊच्च है, बड़े प्रकार के लूप के निराकरण की दर उच्च है। छोटे आकार के लूप में गर्भ धारण की दरें भी ऊंची हैं। यह उल्लेखनीय है कि यदि एक स्त्री के बड़े आकार का लूप लगाया जाता है, तो उसे अधिक रक्त श्रवन तथा पीड़ा के अनुभव होने की सम्भा-वना है, जिसके कारण उसकी प्रवृत्ति लूप को हटवा देने की हो जाती है। पर यदि छोटे आकार का लूप लगाया जाता है, तो उसके बहिष्कृत होने की सम्भावना रहती है इसलिए उचित आकार का लूप लगाना एक महत्त्वपूर्ण विचारणीय तथ्य है।

भारत में बहिष्करण तथा निराकरण की दरों के अनुभव ताईवान, कोरिया, पाकिस्तान और थाईलैंड ऐसे अन्य एशियाई देशों के अनुभव के समान हैं। पर असु-विधा की दर (लगातार रक्त श्रवन, अत्यधिक आर्तव प्रवाह, पीड़ा, पीठ की पीड़ा आदि) हमारे देश में अनावश्यक रूप से ऊंची है। अन्तः गर्भाशय गर्भनिरोधक युक्ति का अनुभव रखने वाले अधिकांश एशियाई देशों में असुविधा की दर प्रथम महीने में ५०-६० प्रतिशत के लगभग रहती है तथा तीसरे महीने के पश्चात इसमें तीव्र ह्रास आता है तथा यह लगभग ५-६ प्रतिशत रह जाती है, परन्तु भारत में प्रथम महीने में सुविधा की दर ७० प्रतिशत तक पहुंच जाती है तथा १२ महीनों के बाद भी ४० तिशत के लगभग बनी रहती रही हैं (सारिणी ५२)। यह एक गम्भीर समस्या है

तथा इस पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

भारत में अन्त गर्भाशय गर्भनिरोधक युक्ति के प्रयोग करनेवाली स्त्रियां जितनी असुविधा अनुभव कर रही हैं, उससे इस पद्धति की लोकप्रियता पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए यह आवश्यक है कि हमारे देश में इस ऊंची असुविधा दर के कारणों की खोज की जाए तथा उन्हें दूर किया जाए। चिकित्सकों का मत है कि लूप के निवेश के समय यदि रोगियों की कोमलता से देख-भाल की जाए तथा समुचित ध्यान रखा जाए, तो रक्त स्रवन एवं पीड़ा की घटनाएं कम-से-कम हो सकती हैं। भारत में इस प्रकार की खोज करना लाभदायक होगा। इस बात की-जांच भी उपयुक्त होगी कि क्या भारत के चिकित्सकों को जो अल्प अवधि का प्रशिक्षण दिया जाता है, वह असुविधा के दर का कारण तो नहीं है। यह जानना भी उचित होगा कि क्या सेवा के बाद के देखभाल की जो अपर्याप्त व्यवस्था है, उससे कहीं भारत में असुविधा दर तो नहीं बढ़ती है। भारत की सरकार जन्मदर में समुचित गिरावट लाने के लिए लूप पर निर्भर कर रही है, इसलिए यह उचित होगा कि असुविधा को कम-से-कम करने के लिए चेष्टाएं की जाएं।

सारिणी ५१

अन्तः गर्भाशय गर्भनिरोधक युक्ति का बहिष्करण, निराकरण गर्भधारण तथा गिरने की दरें

(प्रति १०० मामलों की दरें)

	बहिष्करण दरें				निराकरण दरें				गर्भधारण की दरें				गिरने की दरें			
	प्रयोग के महीने				प्रयोग के महीने				प्रयोग के महीने				प्रयोग के महीने			
	६	१२	१८	२४	६	१२	१८	२४	६	१२	१८	२४	६	१२	१८	२४
लूप का आकार																
२७.५ मि० मी०	५.९	८.९	१०.७	११.२	७.०	१२.३	२०.७	२५.८	१.१	१.४	२.०	३.२	१३.५	२१.२	३०.८	३६.४
३० ,,	४.१	६.४	७.९	८.९	६.०	१३.८	१९.९	२८.२	१.१	१.१	१.४	१.८	१०.९	२०.३	२७.४	३५.९
स्त्रियों की आयु																
२४ तथा कम	५.४	९.९	१२.८	१२.८	६.४	१७.२	३३.०	४२.९	०.६	१.३	२.१	५.९	१२.१	२६.६	४३.०	५३.१
२५–२९	३.६	६.२	७.०	११.५	५.३	११.२	१९.३	२४.२	०.७	०.७	२.०	२.७	९.४	१७.४	२६.६	३४.९
३०–३४	६.२	८.१	९.७	९.७	६.९	१२.६	१४.७	२२.९	२.३	२.३	२.३	३.१	१४.८	२१.७	२४.८	३२.६
३५+	५.६	६.९	९.०	१०.२	९.७	१३.४	१७.३	२६.२	०.६	०.६	०.६	०.६	१५.३	२०.०	२५.३	३४.२
कुल गर्भधारण																
१–३	७.६	१२.६	१५.३	१५.३	७.५	१७.५	३१.७	४२.१	०.०	०.०	०.८	३.५	१४.६	२८.१	४२.८	५२.९
४–५	३.२	५.४	६.४	८.६	६.९	१४.४	२१.३	२६.१	२.१	२.१	३.६	५.३	११.८	२०.९	२९.१	३६.६
६–८	४.७	६.४	६.९	६.९	५.३	८.६	१५.५	२५.६	१.०	१.६	१.६	१.६	१०.७	१५.८	२२.७	३१.९
८+	५.५	७.५	१०.२	१०.२	७.८	१३.०	१५.४	२१.४	०.९	०.९	०.९	०.९	१३.८	२०.४	२४.९	३०.२
पतियों का पेशा																
व्यापार	३.३	५.८	८.१	८.८	७.०	१४.२	२२.३	३१.४	१.५	१.५	२.०	३.७	११.५	२०.५	३०.१	३९.९
नौकरी	७.१	१०.०	११.०	११.४	७.२	१३.३	१९.३	२४.५	१.१	१.४	२.४	३.३	१४.८	२३.२	३०.०	३५.४

प्रशिक्षित कार्यकर्ता	२.७	६.५	७ ५	९.२	४.५	१२.०	१९.८	३१.२	०.९	०.९	० ९	० ९	७ ९	१८.५	२६ ६	३८.२
शिक्षा																
अशिक्षित (पत्नी)	५.९	९.७	१२.४	१२.४	६ ७	९.६	१५.६	२२.१	०.८	०.८	१.७	१.७	१३ ०	१९.१	२७ ४	३३ ०
अशिक्षित पत्नी जबकि पति शिक्षित	५.२	८.२	९.५	९ ५	८.६	११.६	१९ ५	२६.४	१.१	१.१	२.५	२ ५	१४ ३	१९.८	२९.१	३५.२
पति-पत्नी मैट्रिक तथा उससे कम	४.७	७ ३	८.२	९ ४	६.२	१४ ४	२१.३	२९ ८	१.०	१.०	१ ३	२.७	११.६	२१.५	२८ ८	३८.३
पति मैट्रिक से अधिक तथा पत्नी मैट्रिक से कम	६.५	६.५	८.६	८ ६	९.८	१७.३	२६.७	२८ ६	१ ९	१ ९	३ ०	३.०	१७ ३	२४.२	३५ २	३६ ९
शिक्षित पति और पत्नी	४.८	६.९	८ ०	९.०	६ ९	१४.६	२२ २	२९.५	१.३	१ ५	१.९	३ ३	१२ ५	२१.८	२९ ९	३८.९
शिक्षित पत्नी	४.७	६ ७	७ ८	८ ८	६ ९	१४.८	२२.४	३०.१	१ २	१ ४	१ ९	३ ३	१२ ४	२१.८	२९ ९	३८ ४
सब	५.१	७ ६	९.२	९.९	६ ८	१३.२	२० ३	२७.७	१.१	१.२	१.८	२ ८	१२ ६	२१.०	२९ १	३६.८

सारिणी ५२

प्रयोग के आधार पर अन्त:गर्भाशय गर्भनिरोधक युक्तियों की शिकायत की दरें

(प्रति १०० मामलों में)

प्रयोग के महीने	रक्त स्रवन अथवा विन्दुकरण	श्वेत प्रवाह	अनियमित मासिक धर्म	सिर दर्द तथा शरीर पीड़ा	सूजन या छूत	अन्य शिकायतें	समस्त शिकायतें
१	२	३	४	५	६	७	८
१	४२.०	१०.१	७.७	१०.४	१.५	२.७	७४.४
२	४०.४	१०.१	७.७	१०.४	१.२	२.६	७२.८
३	४०.०	१०.१	७.७	१०.३	१.२	२.०	७१.८
४	३९.२	१०.१	७.७	९.९	१.१	२.०	७०.५
५	३८.९	१०.१	७.६	९.८	०.९	२.०	६९.९
६	३८.७	१०.०	७.६	९.८	०.८	२.०	६९.२
७	३७.०	९.६	७.६	९.८	०.८	२.०	६७.७
८	३६.६	९.६	७.६	९.६	०.८	२.०	६६.८
९	३६.२	९.६	७.६	९.३	०.८	२.०	६६.२
१०	३५.३	९.६	७.६	९.३	०.८	२.०	६५.६
११	३४.७	९.६	७.६	९.१	०,८	२.०	६५.०

१२	३४ २	९.६	७ ६	९ १	० ८	२ ०	६४.५
१३	३३.९	९.५	७.६	८.५	० ७	१ ९	६२.४
१४	३३ ८	९.४	७ ६	८ ५	०.७	१.७	६२.०
१५	३३ ४	९ ४	७.६	८.५	० ४	१.७	६१.४
१६	३२.४	·८.९	७.६	८.५	०.४	१ ६	५९.८
१७	३१ ९	८.३	७.६	७ ५	०.४	१ ४	५७.७
१८	३१ ९	८ ३	७.६	७ ३	० २	१ ४	५७ ७
१९	३१.९	८ ३	७ ६	६ ९	०.०	१ ०	५७.७
२०	३१.९	८.०	७.६	६ ८	० ०	१.०	५६.८
२१	३१.४	७ ०	७ ६	६.०	० ०	१ ०	५४.९
२२	३१ ४	६.३	७ ६	६.०	० ०	१ ०	५४.९
२३	३१.१	६ ३	७ ६	६ ०	० ०	१.०	५४.९
२४	२९ ६	६ १	७ ६	६.०	० ०	१.०	५४.१

लिए कुछ प्रमाण मिलते हैं कि जापान मे युद्धोत्तर काल मे जन्मदर में कमी स्त्री विवाह की आयु मे वृद्धि करने के कारण हुई। इसका एकमात्र कारण वृहत्त स्तर पर गर्भपात नही है जैसा कि लोग सामान्यतः समझते हैं।

भारत मे जिस आयु मे स्त्रियां विवाह करती हैं, वह बहुत नीची है। विवाह की औसत आयु १९२१-३१ के दौरान १२.५ वर्ष तक नीची थी। यह १९६२ मे व्यवस्थापन तथा सामाजिक और शैक्षणिक परिवर्तनों के फलस्वरूप लगभग १६ वर्ष तक बढ गई है। यदि यह २० वर्ष तक बढ़ जाती है, तो जन्मदर के ३० प्रतिशत तक घट जाने की सम्भावना है, अर्थात् जन्मदर वर्तमान ४० से घट कर २७ प्रति एक हज़ार की जनसख्या तक आ जाएगी।

ऐसा पाया गया है कि भारत मे एक विवाहित स्त्री के अपने सम्पूर्ण प्रजनन अवधि के दौरान, अर्थात् १५ तथा ४५ वर्षों की आयु के बीच मे, औसतन ६.६ बच्चे होते हैं। यह भी देखा गया है कि वे स्त्रिया जो १५ तथा १९ वर्ष की आयु के बीच विवाह करती हैं उनकी अपेक्षा अधिक संख्या मे बच्चों को जन्म देती हैं जो २० वर्ष या अधिक की आयु में विवाह करती हैं। उदाहरण के लिए सयुक्त राष्ट्र द्वारा सचालित मैसूर सर्वेक्षण मे देखा गया कि वे ग्रामीण स्त्रियां जो १४ और १७ वर्ष की आयु के बीच मे विवाह करती हैं ५.९ बच्चों को जन्म देती हैं, जबकि वे जो १८ तथा २१ वर्ष की आयु के बीच विवाह करती हैं केवल ४.७ बच्चो को जन्म देती है। डा० डी० एन० मजूमदार ने कानपुर मे पाया था कि जिनके विवाह १५ वर्ष तक की आयु तक हो जाते हैं, वे ६.९ बच्चो को जन्म देती हैं तथा जिनके विवाह १९ वर्ष की आयु के बाद होते हैं, वे केवल ६ बच्चों को जन्म देती हैं। मद्रास मे डा० आर० बालकृष्ण, दिल्ली मे डा० एस० एन० अग्रवाल तथा कलकत्ता मे डा० एम० बी० मुखर्जी ने पाया कि १९ वर्ष के बाद विवाह करनेवाली स्त्रियों के ०.५ से १.० बच्चे उनकी अपेक्षाकृत कम होते हैं जिनके विवाह पहले हो चुकते हैं। भारत के रजिस्ट्रार जेनरल ने हाल मे प्रसवन पर राष्ट्रीय स्तर पर आकड़े एकत्रित किए हैं। इसके सम्पूर्ण परिणाम अभी तक प्रकाशित नही हुए हैं। पर प्राप्त अंकों से सकेत मिलता है कि केरल मे १८ वर्ष से कम आयु की विवाह करनेवाली स्त्रिया ६.२ बच्चों को जन्म देती हैं जबकि १८-२२ की आयु में विवाह करनेवाली ५.५ बच्चों को तथा २३ वर्ष की आयु के बाद विवाह करनेवाली केवल ४.० बच्चो को जन्म देती हैं। इसी प्रकार से शहरी पंजाब मे बच्चों के जन्म की सख्या ६.०, ५.५ तथा ४.७ थी, जब स्त्रियों के विवाह की आयु

जाएगा। सारे प्रभावों मे जन्मदर में एक पीढ़ी की अवधि में, अर्थात् २८ वर्षों मे, लगभग तीस प्रतिशत की कमी होने की सम्भावना होगी। इससे इस बात का सकेत मिलता है कि भारत मे स्त्रियों के विवाह की आयु में वृद्धि करने से जन्मदर समुचित रूप से घटाया जा सकता है।

कुछ लोग ऐसे हैं जो सोचते हैं कि व्यवस्थापन द्वारा विवाह की न्यूनतम आयु मे १६ वर्ष तक की वृद्धि से जन्मदर कम करने की सम्भावना बहुत कम है। वे तर्क करते हैं कि विवाह के समय की उच्च आयु से सतानधारण की अवधि ४० वर्ष की *आयु पर काफी बढ़ सकती है, इस प्रकार से सतानधारण-शक्ति की अवधि घटने के* स्थान पर बढ़ जाएगी। पर कोई भी प्रमाण इस आशंका का समर्थन नहीं करता है। श्री चद्रशेखर तथा एम० वी० जार्ज ने कलकत्ते के बालीगज, वेनियाटोला तथा सिंगूर में अलग-अलग आयु मे विवाह करने वाली स्त्रियों की पाचवें तथा बाद के गर्भधारणों की समाप्ति की औसत आयु लगभग समान पाई। भारत के रजिस्ट्रार जेनरल द्वारा १९६१ के प्रतिदर्श जनगणना के समय एकत्रित प्रजनन आकड़ों से भी यह स्पष्टतया विदित होता है। उन स्त्रियों के बच्चे कम होते हैं जिनका विवाह १६ वर्ष की आयु के बाद होता है, उनकी अपेक्षा जिनके विवाह पहले होते हैं। कभी-कभी यह तर्क किया जाता है कि वैसे केरल मे स्त्री के विवाह की औसत आयु २० वर्ष है, पर एक विवाहित स्त्री के औसत बच्चों की संख्या लगभग वही है जो पजाब की है जहां विवाह की औसत आयु १७.५ वर्ष है। यह बताना उपयुक्त होगा कि यह समस्या को देखने का गलत ढंग है। बच्चो के जन्म की कुल सख्या सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक स्थितियों पर निर्भर करती है तथा ये स्थितिया भारत के सभी राज्यो मे समान नहीं हैं। अगर वे समान होतीं तो सभी राज्यो की प्रसवनशक्ति लगभग समान होती। इसलिए अन्त-प्रादेशिक तुलना अप्रामाणिक है। इसलिए हमें अलग-अलग राज्यो के अलग-अलग आयु मे विवाह करनेवाली स्त्रियों के समूहों की प्रसवनशक्ति का कार्यान्वयन करना चाहिए। और इस बात के अकाट्य प्रमाण हैं कि केरल या पंजाब की १६ वर्ष की आयु के बाद विवाह करनेवाली स्त्रियों के बच्चो की सख्या, उनकी अपेक्षा कम होती है, जिनके विवाह पहले होते हैं। कुछ लोगों ने तर्क किया है कि १६-२० वर्ष तक स्त्रियों के विवाह के स्थगन से, जन्म लेनेवाले बच्चो की संख्या मे केवल एक की कमी होती है, अर्थात् उनके छै के स्थान पर पांच ही बच्चे होंगे - इसलिए कमी केवल १६ प्रतिशत के लगभग होगी। इस तर्क में एक धारणा है।

अध्याय १८

भविष्य का दृष्टिकोण

प्रारम्भिक अध्यायों की व्याख्याओं से यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि भारत में मृत्युदर, जो १९१० में ४० थी अब गिर कर १८ प्रति १००० की जनसंख्या तक आ गई है, तथा अगले १०-१५ वर्षों में इसके और भी गिरने की तथा ८-९ के निम्न स्तर तक पहुंचने की सम्भावना है; जो अन्य आधुनिक देशों के समान है। यह देश में सुधरी हुई चिकित्सा तथा स्वास्थ्य की सुविधाओं के कारण है। इसलिए यदि जन्मदर नहीं गिरती है तो मृत्यु और जन्मदर के बीच की दूरी और भी बढ़ जाएगी तथा हमारी जनसंख्या वृद्धि की वर्तमान से भी अधिक हो जाएगी। इससे हमारे आर्थिक विकास की समस्या और भी कठिन हो जाएगी।

सरकार ने भारत की जनसंख्या को नियन्त्रित करने की उचित नीति अपनाई है। प्रथम तीन योजनाओं के दौरान शहरी तथा ग्रामीण जनसंख्या को चिकित्सा सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए समर्थ प्रशासनिक यन्त्र की स्थापना की जा चुकी थी। इस समय मोटे तौर से लगभग १८,००० परिवार नियोजन चिकित्सालय देश में हैं, तथा चौथी योजना के अन्त तक इनकी संख्या लगभग ४८,४०० तक बढ़ जाने की सम्भावना है। परन्तु ऐसे यन्त्र की अभी भी स्थापना होनी है, जो दूर के गांवों तक परिवार नियोजन का संदेश पहुंचाए तथा लोगों को गर्भनिरोध के लिए प्रेरित कर सकें। वैसे लोगों को अभिप्रेरित करने की आवश्यकता का अनुभव १९६२-६३ में किया जा चुका था, पर आवश्यक कार्यक्रम को पूरा करने के लिए उपयुक्त कर्मचारी अधिकांश राज्यों में अपने नियत स्थान पर नहीं नियुक्त किए गए हैं। देश में परिवार नियोजन कार्यक्रम के मन्द विकास के कारणों में से एक यह है।

इस बात को स्वीकार करना पड़ेगा कि परिवार नियोजन में जनता के रुखों तथा मान्यताओं में परिवर्तन सन्निहित हैं, जिससे कि दो या तीन बच्चों का परिवार लोगों के लिए आदर्श प्रतिमान माना जाए। पर जनता के रुख में परिवर्तन कैसे लाया जाए? पश्चिमी देशों में यह परिवर्तन औद्योगिक क्रान्ति के बाद लाया गया, जिसके साथ ही उच्चतर जीवन के स्तर के लिए सम्भावनाएं बढ़ गई थीं। उस समय जो

संघर्ष उत्पन्न हुआ, तथा जिसका उचित वर्जन "छोटा बच्चा या छोटी कार" कहकर किया गया था, यह था कि लोगों ने यह अनुभव करना शुरू कर दिया था कि यदि उनके अधिक संख्या में बच्चे होंगे तो उनके रहन-सहन का स्तर नीचे चला जाएगा। इसके परिणामस्वरूप लोगों के रुख को, छोटे परिवार के पक्ष में परिवर्तित करने के लिए ऐसे कारणों को रखा गया; जैसे समाज में स्त्रियों की स्थिति, बच्चों को पालने पोसने का ऊंचा व्यय तथा अन्य बातें।

हाल में कोरिया, हांगकांग तथा ताईवान जैसे एकाफे क्षेत्र के कुछ देशों में एक परिवर्तन देखा जा रहा है कि जहां जनसंख्या वृद्धि की दरें एक समय में अत्यन्त उच्च थी, वहां अब वह तेज़ी से घट रही हैं। इस ह्रास के लिए प्रधान कारण इन देशों की साक्षरता का उच्च स्तर लगभग ८० प्रतिशत साक्षरता समझा जा रहा है।

इस प्रकार से, जनसांख्यिकीय परिवर्तन की दो प्रवृत्तियां हैं—पश्चिमी प्रवृत्ति जहां उच्च रहन-सहन के स्तर से परिवर्तन लाया गया, तथा एशियाई प्रवृत्ति, जहां उच्च साक्षरता के स्तर से प्रसवन में ह्रास आया। यह एक विवादास्पद प्रश्न है कि भारत जैसे विकासशील देशों में इनमें से कौन सी प्रवृत्ति अपनाई जाएगी। यदि भारत में जनसांख्यिकीय परिवर्तन तभी होगा, जब लोग उच्च रहन-सहन का स्तर प्राप्त कर लेंगे अथवा जब शिक्षा सर्वव्यापी हो जाएगी, तो यह बहुत लम्बा समय लेगा और तब तक हमारी जनसंख्या नियंत्रण के बाहर हो जाएगी। इसलिए यह आशा की जानी चाहिए, कि भारत और उसके समान स्थिति के देशों में जन्मदर में तीव्र ह्रास लाने के लिए अपनी अलग प्रवृत्ति का विकास होगा। संभवतया छोटे परिवार के पक्ष में एक विस्तृत शिक्षात्मक तथा प्रेरणात्मक कार्यक्रम से लोगों की अभिवृत्तिमें तीव्र परिवर्तन लाया जा सकता है।

इससे एक और महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठता है। एक अतिरिक्त बच्चे के मुकाबले में जनता किन आशाओं तथा आकांक्षाओं को अधिक महत्त्व देती है? यह एक ऐसा क्षेत्र है जहां अधिक से अधिक शोध की आवश्यकता है। इसका उत्तर भी तुरन्त प्राप्त करना अत्यावश्यक है। क्या ग्रामीण जनसंख्या की जन्मदर को जीवन के स्तर में सुधार, बच्चों के लिए शैक्षणिक सुविधाओं तथा युवकों के लिए रोजगार के अवसर प्रदान करने से पहले घटाया जा सकता है? इसके उत्तर अभी ज्ञात नहीं हैं। भारत में अनेक लोगों का मत है कि ये उपलब्धियां सम्भव हैं। यह एक गम्भीर प्रश्न है।

परिवार नियोजन से सम्बद्ध समस्याएं असामान्य रूप से जटिल है। यह एक समस्या नहीं है, बल्कि अनेक समस्याओं का सामूहिक रूप है। जनसख्या वृद्धि की ऊंची दरें घटी हुई मृत्युदर के कारण आई हैं, जो एक स्वीकृत लक्ष्य है। पर छोटे परिवार की प्रवृत्ति का अपनाए जाने का सम्बन्ध आर्थिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक परिवर्तनो से तथा साथ ही परिवार नियोजन के सामान्य क्षेत्रो मे सुविधाओं के विकास से भी है। इसलिए यह अधिकाधिक अनुभव किया जाने लगा है कि जब तक एक बहु-अनुशासित दृष्टिकोण को नही अपनाया जाता है, जिसमे समाजशास्त्रियो, सामाजिक मनोवैज्ञानिकों, अर्थशास्त्रियों, जनसख्याविशेषज्ञों, व्यवहारवैज्ञानिको, जनस्वास्थ्य कार्यकर्त्ताओ तथा अन्य लोगों के सामूहिक अनुभव का उपयोग जनसख्या के प्रश्न पर नही किया जाता, तब तक समुचित सफलता प्राप्त करना कठिन है। अत्यन्त शीघ्र इस बात की आवश्यकता है कि जनसंख्या कार्यक्रमो तथा नीतियो से सम्बन्धित क्षेत्रो मे कार्य करनेवाले विभिन्न वैज्ञानिकों मे बातचीत चलाई जाए, जिससे कि सामान्य अनुभव को बाट सकें तथा एक प्रभावपूर्ण नीति के विकास की सम्भावना बन सकें। हमें आशा करनी चाहिए कि भविष्य में भारत में इसी दिशा में विकास होगा।

भारत—देश और लोग

प्रकाशित पुस्तकें

असमिया साहित्य

प्रो० हेम बरुआ

प्रो० हेम बरुआ संसद सदस्य तथा एक मशहूर कवि और लेखक हैं। उन्होंने अपनी इस पुस्तक में असमिया साहित्य के इतिहास का, आरम्भ से लेकर आज तक, व्यापक व विद्वत्तापूर्ण विश्लेषण किया है। डिमाई अठपेजी। पृष्ठ ३१८

सामान्य प्रति : रु० ५.००　　　　सजिल्द प्रति : रु० ७.५०

फूलों वाले पेड़

डा० एम० एस० रन्धावा

प्रख्यात वैज्ञानिक-प्रशासक डा० रन्धावा ने इस पुस्तक में, हमारे फूलों वाले पेड़ों का अत्यन्त रोचक व शिक्षाप्रद वर्णन किया है। इन पृष्ठों में पाठक को उद्यानों, वनों और भारत के ग्रामीण प्रदेशों के सौन्दर्य की अनुभूति होगी। प्रस्तुत पुस्तक में ६५ चित्र हैं, जिनमें १४ रंगीन हैं। डिमाई अठपेजी। पृष्ठ २०६

सामान्य प्रति : रु० ६.५०　　　　सजिल्द प्रति : रु० ९.५०

कुछ परिचित पेड़

डा० एच० सन्तापाऊ

प्रस्तुत पुस्तक में विद्वान लेखक ने भारत के प्रायद्वीपी भाग में बहुधा सड़कों तथा राजमार्गों पर लगे हुए वृक्षों की जानकारी इस ढंग से दी है कि वह उन पाठकों के लिए भी रोचक और उपयोगी हैं, जो इस विषय के विशेषज्ञ नहीं हैं। डिमाई अठपेजी। पृष्ठ १४६

सामान्य प्रति : रु० ४.००　　　　सजिल्द प्रति : रु० ७.५०

भारत के खनिज पदार्थ

लेखक मेहर डी० एन० वाडिया

सम्पादक : डा० डी० एन० वाडिया)

श्रीमती मेहर डी०ए० वाडिया ने वैज्ञानिक विषयों को सामान्य-ज्ञान तथा प्रौढ़ शिक्षा में उपयोगी बनाने के लिए काफी लेखन-कार्य किया है। इस पुस्तक में लेखिका ने भारत के खनिज तथा धातुओं का उद्योग द्वारा उपयोग, देश में उनकी ढलाई तथा मढ़ाई और निर्यात एवं अन्य जानकारी दी है। डिमाई अठपेजी। पृष्ठ २२४

सामान्य प्रति : रु० ४.०० सजिल्द प्रति : रु० ६.००

ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित अन्य हिन्दी पुस्तकें

राष्ट्रीय जीवन-चरित माला

१.	गुरु गोविन्दसिंह : डा० गोपालसिंह	२.००
२.	अहिल्याबाई : हीरालाल शर्मा	१.७५
३.	महाराणा प्रताप : राजेन्द्र शंकर भट्ट	१.७५
४.	कबीर : डा० पारसनाथ तिवारी	२.००
५.	पण्डित विष्णु दिगम्बर : वी० रा० आठवले	१.२५
६.	पण्डित भातखण्डे : एस० एन० रतनजनकर	१.२५
७.	त्यागराज : प्रो० एम० साम्बमूर्ति	१.५०
८.	रहीम : समर बहादुरसिंह	१.७५
९.	रानी लक्ष्मी बाई : वृन्दावनलाल वर्मा	१.७५
१०.	समुद्र गुप्त : लल्लन जी गोपाल	१.२५

लोकोपयोगी विज्ञान माला

११. अंतरिक्ष यात्रा : ले० भगवती प्रसाद श्रीवास्तव। अंतरिक्ष विज्ञान के सभी पहलुओं का सरल और सुबोध शैली में विश्लेपण। डिमाई अठपेजी पृष्ठ संख्या १८४

सामान्य प्रति : ३.०० सजिल्द प्रति : ५.००

विविध

१२. गैरीबाल्डी : लाला लाजपतराय २ ५०

१३. मैज़िनी : लाला लाजपतराय २ ५०

१४. चक्रध्वज : प्रो० वासुदेवशरण अग्रवाल ३.००

१५. विकासशील देशों में अनुवाद की समस्याएं (गोष्ठी) २ ५०

१६. वनवाणी (काव्य संकलन) : ले० रवीन्द्रनाथ ठाकुर। अनु० युगजीत नवलपुरी, सामान्य प्रति : ५ ०० सजिल्द प्रति : ७ ००

१७. हमारे जलपक्षी (सचित्र) · ले० राजेश्वर प्रसाद नारायणसिंह २ ५०

१८. चौरासी पर भी मैदान में : ले० रघुनाथ पुरुषोत्तम परांजपे। अनु० माधुरी गुप्ता २ ५०

१९. मेरी गंगा यात्रा . ले० आचार्य धर्मेन्द्रनाथ १ २५

२०. भारत आज और कल (जवाहरलाल नेहरू के भाषण) अनु० आर० वेंकटराव ०.७५

२१. कल्कि या सभ्यता का भविष्य : ले० डा० एस० राधाकृष्णन्। अनु० बटुक शंकर भटनागर ०.७५

२२. विज्ञान के पहलू · आकाशवाणी से प्रसारित डा० चन्द्रशेखर वेंकट-रामन के भाषणों का संकलन। अनु० रामचन्द्र तिवारी ०.७५

२३. एक विश्व और भारत : मूल लेखक आर्नल्ड टायनबी। अनु० पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' ० ७५

२४. भारत में शिक्षा का पुनर्निर्माण : (डा० ज़ाकिर हुसैन के भाषण) अनु० अजित नारायणसिंह तोमर ०.७५

२५. विद्रोह का महावीर (शिवाजी का जीवन चरित) : ले० डेनिस किन्केड। अनु० शंकरलाल मस्करा २ २५

२६ पूर्व और पश्चिम की संत महिलाएं : ले० स्वामी घनानन्द और अन्य। अनु० शकुन्तला आर्य ३.२५

२७. मार्को पोलो : मूल ले० मारिस कालिस। अनु० जगत शंखधर २.७५

२८. लाचित बरफुकन ले० सूर्यकुमार भुञा। अनु० शान्ति भटनागर २ २५

२९. तटस्थ की पुकार . मूल लेखक चक्रवर्ती राजगोपालाचारी। अनु० इन्द्रचन्द्र शास्त्री २.५०

३०. ऊंचा है भारत का भाल : (देशभक्तिपूर्ण कविताओं का संकलन) २.००

३१. अकबर : ले० लारेन्स बिन्यन । अनु० राजेन्द्र यादव १.७५
३२. जूठो और लक्ष्मी : ले० नाओमी मिचीसन । अनु० तारा वागड़ेय १.५०
३३. मनुष्य की भौतिक सम्पदाएं : ले० मिर्आ ह्यू बरमन । अनु० सत्य-भूषण वर्मा ४.००
३४. गौतमबुद्ध : ले० आनन्द कुमार स्वामी और आई० बी हार्नर । अनु० देवेशचन्द्र मिश्र ३.५०
३५. भारतीय सेना की परम्पराएं (हमारे सैनिकों की वीरता की प्रेरणा-प्रद गाथाएं) : ले० धर्मपाल । अनु० राकेश जैन ३.००
३६. दो नगरों की कहानी : ले० चार्ल्स डिकेन्स । अनु० रजनी पनिकर ८.००
३७. विज्ञान और जीवन : ले० रिची काल्डर । अनु० हरिराम गुप्त ३.५०

नवसाक्षर पुस्तक-माला

१. कथा कहानी	बालकराम नागर	१.००
२. रीत और गीत	शंकर बाम	१.००
३. पुरानी कहानियां : नई सीखें	आनन्दीलाल तिवारी	१.००
४. रंग-बिरंगे तीज-त्यौहार	शंकर बाम	१.००